राजभाषा समस्या
व्यावहारिक समाधान

राजभाषा समस्या

व्यावहारिक समाधान

कन्हैयालाल गाँधी

नेशनल पब्लिशिंग हाऊस
23, दरियागंज, नयी दिल्ली-110002

शाखाएं

चौड़ा रास्ता, जयपुर
34, नेताजी सुभाष मार्ग, इलाहाबाद-3

राष्ट्रीय शैक्षिक अनुसंधान और प्रशिक्षण
परिषद्, नयी दिल्ली के सहयोग से प्रकाशित

मूल्य रु

नेशनल पब्लिशिंग हाऊस 23, दरियागंज, नयी दिल्ली-110002 द्वारा प्रकाशित / प्रथम संस्करण 1985 / सर्वाधिकार कन्हैयालाल गांधी/ रायसीना प्रिंटर्स, दिल्ली में मुद्रित। [8 1-11-884/N]

RAJBHASHA SAMASYA Vyavharik Samadhan
by Kanhaiya Lal Gandhi R[illegible] रु

"सभ्य-समाज में परस्पर संपर्क का मुख्य अथवा प्रायः एकमात्र साधन भाषा ही है। आधुनिक सरकारों का केवल समाज के सभी पहलुओं से ही नहीं, अपितु व्यक्ति के जीवन से भी इतना गहरा संबंध रहता है कि अर्वाचीन समुदाय में किसी भी देश की सरकार के लिए भाषा का प्रश्न अत्यंत दिलचस्पी का विषय बन जाता है।"

राजभाषा आयोग 1955-56

आभार

इस कार्य को हाथ में लेने का मूल प्रोत्साहन मुझे अपने आदरणीय गुरु प्रोफ़ेसर डॉ. दशरथ ओझा से मिला। इस ग्रंथ की आयोजना में, आदि से लेकर अंत तक, उनका संबंध रहा है। डॉ. तारकनाथ बाली, रीडर, दिल्ली विश्वविद्यालय, का भी इस ग्रंथ के रूप निर्माण में अटूट एवं घनिष्ठ संपर्क रहा है। उनके विश्लेषण और सुझावों के फलस्वरूप मैंने पुस्तक में अनेक संशोधन किए।

योजना आयोग के संयुक्त निदेशक डॉ. त्रिलोकनाथ धर का सहयोग भी बहुत महत्त्वपूर्ण रहा है। यदि उनके श्रम एवं विश्लेषण का लाभ मुझे प्राप्त न होता तो पुस्तक अपने वर्तमान स्तर को प्राप्त न कर पाती।

भारतीय जनसंचार संस्थान, नई दिल्ली (इंडियन इंस्टीट्यूट ऑफ मास कम्युनिकेशन, नयी दिल्ली) के अतिथि प्रोफ़ेसर और भारतीय संघ के सूचना एवं प्रसारण मंत्रालय के सलाहकार डॉ. भास्कर राव का भी मैं बहुत कृतज्ञ हूं, जिन्होंने रेडियो, समाचारपत्र आदि जनसंपर्क साधनों से संबंधित आंकड़ों के एकत्रीकरण और विश्लेषण में मेरी बहुत मदद की।

दिल्ली विश्वविद्यालय के रीडर डॉ. ओम प्रकाश और शिवदयाल कॉलिज, गाज़ियाबाद (उत्तर प्रदेश) के रीडर डॉ. आर. एन. भार्गव को मैं हार्दिक धन्यवाद देता हूं जिन्होंने इस कार्य के लिए कई नई दिशाएं दिखलाई। मेरे सहपाठी एवं परम मित्र डॉ. जीवन प्रकाश जोशी ने पुस्तक की पाण्डुलिपि को काफ़ी मेहनत से पढ़ा। उनके सुझावों एवं संशोधनों के लिए मैं उनका बहुत आभारी हूं।

योजना आयोग के पुस्तकाध्यक्ष श्री आर. के. जैन, सूचना एवं प्रसारण मंत्रालय के अनुसंधान एवं संदर्भ विभाग के प्रलेखन अधिकारी श्री एस. एन. साधु और श्रीमती वी. के. अरोरा का मैं उनकी अमूल्य सहायता के लिए बहुत आभारी हूं।

श्री मनोहरनाथ कौल और श्री मोहन लाल का अनेक सांख्यिकी सारिणियों की तैयारी में काफी सहयोग रहा, तदर्थ मैं उनका भी बहुत आभारी हूं। मेरी अनुजा विमला ने सभी संदर्भों और परिशिष्टों का मिलान और

निरीक्षण किया। इस कठिन कार्य को लगन एव परिश्रम से सपन्न करने के लिए मैं उन्ह धन्यवाद देता हू।

शोध-प्रबध के पूण प्रकाशित होने के समय तक, यथासभव, आवश्यक और महत्त्वपूर्ण सशोधन-सपादन किए गए हैं, जिससे कि ग्रथ की कुछ अद्यतन उपयोगिता भी बनी रहे। तदथ पाठकों की मूल्यवान प्रतिक्रियाए और सम्मतिया पाकर मैं अत्यन्त आभारी होऊगा।

अतत, मैं पुस्तक-प्रकाशक महोदय के सहित उन सभी सहयोगियो और साथियो का विशेष रूप से आभारी हू जिन्होंने इस पुस्तक को अधिकाधिक आकषक और उपयोगी बनाने मे अपना अमूल्य श्रम-सहयोग प्रदान किया है।

—कन्हैयालाल गांधी

नयी दिल्ली
अक्टूबर 2, 1984

अनुक्रम

भूमिका

भारत की राजभाषा की समस्या वास्तव मे बहुत जटिल है। जातीय विविधता, सांस्कृतिक विभिन्नता तथा अनेक ऐतिहासिक एवं भौगोलिक परिस्थितियों के फलस्वरूप जन्मी यह समस्या आज बहुत पेचीदा बन चुकी है। राजनीतिक मुद्दों, भावनाओं और निहित स्वार्थों को इसके साथ जोड़ देने के कारण यह और भी अधिक जटिल हो गई है।

हिंदुस्तान की मुख्य जातियों मे हब्शी (नीग्राइड), प्रोटो-आस्ट्रालाइड, द्रविड़, मुमेगी और आर्यों के नाम आते हैं। यद्यपि कुछ जातियां देश के चंद ही भागों में अधिक संख्या में केंद्रित है (जैसे नीग्राइड अंडमान निकोबार द्वीपों में, द्रविड भारत के दक्षिणी राज्यों में), परंतु ऐतिहासिक परिवर्तनों और समय चक्र ने इनकी बहुरंगीय संस्कृतियों का सम्मिश्रण कर इनका सुचारु रूप से एकीकरण कर दिया है; और आज देश के दूर दूर हिस्सो में आबाद ये जातियां केवल एक ही 'भारतीय राष्ट्र' के नाम से जानी जाती है।

संसार के बारह भाषा परिवारो मे से चार के बोलने वाले भारत मे मिलते हैं। इन चार के नाम हैं: भारोपीय, द्रविड़, आस्ट्रिक और भोट-चीनी। दुनिया मे बोली जाने वाली तीन चार हज़ार भाषाओं और बोलियों मे से लगभग 1600 तो हिंदुस्तान में ही बोली जाती है। सन् 1971 की जन गणना के अनुसार देश की भाषाओं और बोलियो मे 281 ऐसी है, जिनमे से प्रत्येक के बोलने वाले 5000 से अधिक है। इनके आंकड़े अगले पृष्ठ पर देखे।[1]

ये भाषाएं भारत के पहाड़ी स्थलो, मैदानों, घनी एवं कम आबादी के इलाकों में रहने वाले लोगों द्वारा बोली जाती है। अन्य असंख्य भाषाओं के साथ मिलकर ये भाषाएं देश का रंग बिरंगा भाषायी दृश्यपटल प्रस्तुत करती है।

बोलने वालों की संख्या	भाषाओं एवं बोलियों की संख्या
5,000 से 10,000 तक	60
10,001 से 100,000 तक	139
100,000 से अधिक	82

भारतीय भाषाओं की उत्पत्ति

भारतीय भाषाओं के इतिहास के सर्वेक्षण से पता चलता है कि नीग्राइड भाषाएं पुरापाषाणकालीन और आस्ट्रालाइड की मुंडा भाषाएं नवप्रस्तरयुगीन हैं। द्रविड भाषाओं का जन्म लगभग ई. पूर्व 3000 से 2000 के बीच बताया जाता है और आर्य भाषाओं का क्रम विकास 2000 ई. पूर्व के बाद का है। भारतीय संविधान की आठवीं सूची में सूचीबद्ध पंद्रह भाषाएं केवल द्रविड तथा आर्य परिवार से संबंधित हैं—चार पहले परिवार से और ग्यारह दूसरे से संबधित हैं।

द्रविड भाषाओं में तमिल भाषा प्राचीनतम है। यह भाषा ग्रंथलिपि का प्रयोग करती है। पुराने जमाने में इसके लिए वेट्टिट्टुट्टू लिपि का इस्तेमाल होता था। वेट्टिट्टुट्टू का जन्म ब्राह्मी की भांति उत्तर भारत में हुआ था। शेष तीन द्रविड भाषाओं, अर्थात् मलयालम, तेलुगु तथा कन्नड के विषय में ग्रियर्सन का कहना है

> मालाबार तट की मलयालम भाषा तमिल के बहुत निकटवर्ती है नवीं शताब्दी के बाद की यह तमिल की आधुनिक शाखा है। सत्रहवीं सदी में ब्राह्मणों के प्रचुर प्रभाव के कारण इसमें संस्कृत के शब्दों का काफी समावेश हो गया है और तदुपरांत इसने वेट्टिट्टुट्टू के स्थान पर ग्रंथलिपि को अपना लिया तेलुगु, जिसका क्षेत्र तमिल से कहीं अधिक विस्तृत है, की लिपि भी तमिल की लिपि की भांति ब्राह्मी से प्रस्फुटित हुई है। कन्नरी (अथवा कन्नड) की वर्णमाला के प्रस्फुटन का स्रोत भी वही है, और तेरहवीं शताब्दी तक दोनों अभिन्न थीं। कन्नरी का तमिल के साथ और करीब का नाता है, यद्यपि इसकी वर्णमाला तेलुगु की वर्णमाला के अधिक समीप है।[3]

जब आर्य लोग उत्तर भारत की भूमि पर प्रमुख शक्तिशाली रूप में छा गए तो उनकी बोली पर स्थानीय भाषाओं का व्यापक प्रभाव पड़ा। उनकी बोलचाल की भाषाएं प्रथम प्राकृत के नाम से विदित हैं। ऐसा विश्वास किया जाता है

कि इन्हीं में से एक प्राकृत, किंचित् संपादन के उपरांत, वेदों और वैदिक कालीन अन्य कृतियों (अर्थात् संहिताओं, उपनिषदो एव ब्राह्मण ग्रंथों) के लिए इस्तेमाल में आने लगी थी। इसी भाषा को वैदिक संस्कृत कहते हैं।

"सातवी शताब्दी ई. पू. के आसपास, इस नींव पर, एक मानक भाषा की इमारत खड़ी की गई, जिसे संस्कृत कहते है। पाणिनी के पूर्व विद्वानों की कई पीढ़ियों ने व्याकरणिक विश्लेषण तथा शोध के क्षेत्रो मे यद्यपि काफी काम किया था, परंतु पाणिनी ने संस्कृत व्याकरण और वाक्य रचना का जो रूप निर्धारित किया था उसे ही मानक शास्त्रीय संस्कृत की उपाधि दी जाती है।"[4]

परंतु आम लोगों की बोलचाल की भाषा व्याकरणो के नियमों की परिधि से बाहर ही रही, और अपने 'प्राकृत' मार्ग पर आगे बढ़ती रही। ऐतिहासिक प्रमाणों के आधार पर सिद्ध हो चुका है कि इस समय देश मे अनेक 'प्राकृतें' थीं। प्राकृतों ने विभिन्न भाषाओं का जन्म निम्नलिखित तीन चरणो मे हुआ :

प्रथम चरण : पालि

द्वितीय चरण : महाराष्ट्री, शौरसेनी, मागधी, अर्धमागधी और पैशाची प्राकृत इत्यादि।

तृतीय चरण : अपभ्रंश अर्थात् प्राकृत के स्थानीय रूप ; जैसे – नागर, उपनागर, ब्राचड, इत्यादि।

महात्मा बुद्ध ने अपने व्याख्यानो और ग्रंथो मे पालि का प्रयोग किया। जैनियो की कृतियां अर्द्धमागधी में है। मौर्यकाल मे (324 ई. पू. से 187 ई. पू. तक) उनके मुख्यालय पाटलिपुत्र की और प्रांतीय राजधानियो, तक्षशिला एव उज्जयनी की राजभाषा अर्धमागधी थी। तदुपरांत शक वंश के राजाओ ने महाराष्ट्री प्राकृत को प्रोत्साहन दिया। बाद मे जब कुशान और गुप्त वंश के राजाओ ने शासन की बागडोर संभाली तब उन्होंने संस्कृत को पुनर्स्थापित किया।

गुप्त राजाओं को इस बात का श्रेय है कि उनके राजकाल में गणित, खगोलशास्त्र, ज्योतिष, साहित्य आदि की अनेक कृतियों का सृजन हुआ। प्रसिद्ध नवरत्न इसी काल मे ही हुए थे। इनके नाम हैं : धनवतरि, क्षपणिक, अमर सिंह, कणक, वेताल भट्ट, घट करपारा, कालिदास, वराहमिहिर और वरासमी। संस्कृत साहित्य के इतिहास मे कीथ लिखते है कि "वसुबंधु और असंग जैसे बौद्ध भी अपने सिद्धांतों के प्रचार को जनता तक पहुंचाने के लिए संस्कृत भाषा का प्रयोग करते थे।"[5]

इस दौर में प्राकृतों को काफी क्षति पहुंची। इसके अतिरिक्त संस्कृत की

भाति प्राकृतो का व्याकरण और वाक्य विन्यास भी नियमो के शिकजो मे जकडा जाने लगा। फलस्वरूप प्राकृतें भी आम लोगो की बोली से दूर हटती गई। स्थानीय अतर के साथ जिन भाषाओ का लोग प्रयोग करते थे, उन्हे 'अपभ्रश' (अर्थात् भ्रष्ट भाषा) की सज्ञा दी गई।[6]

1001 ई तक, जब महमूद गजनवी ने भारत पर आक्रमण करना प्रारभ किया, देश मे अनेक अपभ्रश भाषाए विकसित हो चुकी थी। इन्ही अपभ्रशो से आधुनिक भारतीय भाषाओ का जन्म हुआ। ये अपभ्रश इस प्रकार थीं

भाषाओं के प्रजनन की सारणी

	अपभ्रश	आधुनिक भारतीय भाषा	भौगोलिक क्षेत्र
1	व्राचड	सिंधी	सिंध का निचला क्षेत्र
2	कैकय	लहन्दा	सिंध का ऊपरी क्षेत्र
3	तक्का एव उपनागर	पजाबी	पजाब
4	नागर	गुजराती	गुजरात
5	आवत्य	राजस्थानी एव पहाडी बोलिया	उज्जयनी तथा पजाब और नेपाल के बीच हिमालय का क्षेत्र
6	शौरसेनी	पश्चिमी हिंदी	गगाघाटी का मध्य भाग
7	वैदर्भी	मराठी	महाराष्ट्र
8	अर्ध मागधी	पूर्वी हिंदी	वाराणसी से इलाहाबाद के आसपास का भाग
9	मागधी	असमी, बगला, भोजपुरी, मगही, मैथिली	असम, बगाल और बिहार
10	उत्कल	उडिया	उडीसा

ऐसा अनुमान है कि मुसलमानो के भारत मे आने से पूर्व आधुनिक भारतीय भाषाओ का पर्याप्त विकास हो चुका था। अमीर खुसरो ने लिखा है

> मेरा जन्म भारत मे ही हुआ था, इसलिए यहा की भाषाओ के सबध मे मुझे दो शब्द कहने का अधिकार होना चाहिए। इस समय हर प्रात की

अलग भाषा है, जो इसकी अपनी है; कहीं से ग्रहण की हुई नहीं है। सिंधी (अर्थात् सिंध), लाहौरी (पंजाबी), कश्मीरी, डूगर की भाषा (जम्मू की डोगरी), धुर समुंदर (मैसूर की कन्नरी), तिलंग (तेलुगु), गुजरात, मालाबार (कारोमंडल तट की तमिल), गौरे (उत्तरी बंगला), बंगाल, अवध (पूर्वी हिंदी), दिल्ली और इसके परिप्रदेश (पश्चिमी हिंदी), ये सब हिंद की भाषाएं है जो प्राचीन काल से सामान्य जीवन मे हर तरह व्यवहृत हुई हैं।[7]

विश्वनाथ प्रसाद के अनुसार, तुर्को, अफ़ग़ानो और मुग़लों के भारत में आने से पूर्व ही हिंदी विभिन्न भारतीय भाषाओं की एक आम आदर्श अथवा मानक भाषा बन चुकी थी। उनका कथन है :

उन्होंने इस दूर दूर तक फैली हुई एवं सशक्त भाषा को पहचाना और इसे अपने व्यवहार की भाषा बना लिया···इस समय के कुछ मुसलमान लेखक, उदाहरणतया अमीर खुसरो (सन् 1255) इसे अपनी साहित्यिक रचनाओं में प्रयोग किए बिना न रह सके। खुसरो के नाम से जोड़ी जाने वाली समस्त कृतियो मे यदि अंशमात्र को भी उनकी रचना मान लिया जाये, तो यह सिद्ध करना कठिन नहीं है कि उस समय तक हिंदी साहित्यिक प्रयोग के लिए पर्याप्त उन्नत हो चुकी थी।[8]

इस भाषा का किंचित् विस्तृत पर्यवलोकन करना उचित होगा। इसे हिंदी, हिंदुस्तानी अथवा उर्दू किसी भी नाम से संबोधित किया जा सकता है, क्योंकि एक समय था जब इन नामों मे कोई भी अंतर नहीं था और यही मिली जुली भाषा आधुनिक हिंदी की बुनियादी भाषा है। जब तुर्क सुनिश्चित रूप से भारत में बस गए, तो उन्होंने इस आम मानक भाषा (अर्थात् 'खड़ी बोली') को परस्पर बातचीत का माध्यम बनाया। 1326 ई. में जब मुहम्मद तुग़लक ने अपने शाही दफ्तर दक्षिण मे स्थानांतरित कर दिए और सभी लोगों को दक्कन प्रस्थान का आदेश दिया, तो खड़ी बोली भी उनके साथ दक्षिण तक पहुंच गई। वहां गुजराती, मराठी, तमिल और कन्नड़ जैसी निकटवर्ती क्षेत्रों की भाषाओं का प्रभाव खड़ी बोली पर पड़ा। इस प्रभाव के कारण इस भाषा ने एक नया रूप धारण किया जिसे 'दक्खिनी' कहा गया।

धर्म ने भी, चाहे परोक्ष रूप से ही सही, इस सर्वसामान्य भाषा के प्रसार मे महत्त्वपूर्ण योगदान दिया। भारत की सर्वाधिक आबादी हिंदू धर्मानुयायी है जिसके तीर्थ-स्थल देश के सभी भागों में स्थित है। प्रत्येक धर्मनिष्ठ हिंदू

की आस्था है कि इन पवित्र स्थानों की यात्रा करना आत्मनिर्वाण के लिए अनिवार्य है। जैसे जैसे यात्री देश के विभिन्न भागों में यात्रा पर जाते थे (और उन दिनों यात्रा में काफी समय लगता था), वे इस सर्वसामान्य भाषा के अनेक शब्द और दूसरे कई प्रभाव अनायास अपनी भाषा में शामिल कर लेते थे। इस प्रकार देश में खड़ी बोली व्यावहारिक रूप में दूर दूर तक फैल गई। इसके अतिरिक्त, अनेक संत कवियों ने अपने धर्म और स्थानीय मठों को ध्यान में न रखते हुए खड़ी बोली को अपनी रचनाओं का माध्यम बनाया। दसवीं और ग्यारहवीं शताब्दी में गोरखवाणी ने नामदेव, एकनाथ, तुकाराम और रामदास जैसे मराठी प्रवर्तकों को हिंदी में लिखने के लिए प्रेरित किया।

पंद्रहवीं शताब्दी में नरसी मेहता, मल्लन, दयाराम और गुजरात के अन्य लेखकों ने ब्रजभाषा में अपनी रचनाएं लिखीं। इन रचनाओं की भाषा में देश, काल और स्थान के अनुसार विविधता अवश्य थी (जैसा कि हर रचना में होता ही है), परंतु इनमें आधार भाषा की समानता स्पष्ट है। असम में शंकर देव और नारायण देव ने भक्ति गीत 'ब्रज बुली' में लिखे। बंगाल के संत कवि चैतन्य महाप्रभु ने काशी और मिथिला में अपने निवास के दौरान हिंदी की वृद्धि में बहुत योगदान किया। उन दिनों बंगाल और बिहार एक ही प्रांत के भाग थे। अतः बंगला और हिंदी में अत्यधिक आदान-प्रदान हुआ। चैतन्य संप्रदाय के अनेक कवियों ने 'ब्रज बुली' में लिखा। आज तक विद्यापति के पद चैतन्य संप्रदाय में गाए जाते हैं।

अतीत में काशी ज्ञान प्रसार का बहुत बड़ा केंद्र था। दक्षिण भारत तथा भारत के सभी हिस्सों से विद्वान् यहां पर संस्कृत सीखने आते थे। विनिमय की इस प्रक्रिया में पंडितों द्वारा बोली जाने वाली भाषाओं का पारस्परिक प्रभाव अवश्यंभावी था। अठारहवीं शताब्दी के आसपास केरल के महाराज तिरुनाल ने अपने गीति पद हिंदुस्तानी में लिखे। सौ साल बाद, शाह जी द्वितीय ने हिंदी में 'विश्व विलास' और 'राधा माधव विलास' नामक नाटकों की रचना की। उन्नीसवीं शताब्दी में तेलुगु के कवि पुरुषोत्तम ने हिंदी में 32 नाटक लिखे। महिरावण सिंह के समय भुज (सौराष्ट्र) में एक स्कूल की स्थापना हुई जहां ब्रजभाषा में कविता लिखने का प्रशिक्षण होता था। भले इसमें विरोधाभास लगे, पर यह तथ्य है कि यह संस्थान स्वतंत्रता प्राप्ति के उपरांत 1948 ई. में बंद हो गया।

सिख गुरुओं ने भी अपनी रचनाओं में हिंदी का यथेष्ट प्रयोग किया। कबीर, जायसी, रसखान, रहीम जैसे संत सूफी और भक्त कवियों ने हिंदी में खूब लिखा। उपर्युक्त तथा अन्य मुसलमान कवियों का हिंदी साहित्य की

वृद्धि में महान् योगदान रहा है।[9]

स्वतंत्रता सेनानियों ने भी, हाल मे, जो भारत के सभी प्रदेशो के निवासी थे और आजादी के लिए सगठित होकर लडे, मिलीजुली भापा के निर्माण में काफ़ी योगदान किया। हिंदी चलचित्र, जो संपूर्ण देश में अत्यंत लोकप्रिय हैं, का भी इस क्षेत्र मे महत्त्वपूर्ण सहयोग रहा है।

अंग्रेज़ी का आगमन

1757 ई. में ईस्ट इंडिया कपनी ने राजसत्ता हथिया ली और भारत अंग्रेजों का उपनिवेश वन गया। इसके वाद ईसाइयो ने यहां आकर अनेक शिक्षा संस्थाएं खोली। 1823 ई. मे देश मे दो विचारधाराओ का जन्म हुआ: प्राच्यविद् तथा अंग्रेजीपरस्त। प्राच्यविदो मे एलिफ़िन्स्टान तथा कई अन्य लोगों के नाम लिए जा मकते है जिन्होंने भारतीय साहित्य की वृद्धि का पक्ष लिया। दूसरी ओर मैकाले तथा अंग्रेजीपरस्तों का विचार था कि विधि एव धर्म की उन्नति की दृष्टि से सस्कृत अथवा अरवी भापाएं राज्य द्वारा प्रोत्साहन के योग्य नही हैं। राजा राममोहन राय जैमे समाजसुधारकों की मदद से अंग्रेज़ीपरस्तो की जीत हुई, और अंग्रेज़ी भारत की शिक्षा प्रणाली में प्रविष्ट हो गई जो आज हिंदी की सवसे वड़ी 'प्रतिद्वंद्वी भापा' है।

कुछ समय वाद कलकत्ता में फ़ोर्ट विलियम कालेज की स्थापना हुई। जव यहां विद्वानों ने फ़ारसी और ब्रजभापा से खड़ी वोली में अनुवाद का काम शुरू किया तो अनुवाद की भापा के नाम, स्वरूप, स्तर तथा शैली का प्रश्न उठा। राजा शिवप्रसाद का कहना था कि इस भापा में फ़ारसी के पदों (शब्दों) को रखना चाहिए। राजा लक्ष्मण सिंह और एफ. एस. ग्राउज़ फ़ारसी के स्थान पर संस्कृत चाहते थे। इस वादविवाद ने, जिसकी अगुआई इन दो राजाओं ने की, भापा समस्या को एक नया रुख़ दे दिया। 1857 ई. के आसपास यह सामूहिक भापा दो पृथक् भापाओ, खड़ी वोली हिंदी और खड़ी वोली उर्दू, मे विभक्त हो गई। इससे अंग्रेजी को और वल मिला और लोगों ने इसे अधिक अपनाना शुरू कर दिया। जव 1947 ई. मे अंग्रेज़ हिंदुस्तान से गए तो देश की शिक्षा संस्थाओं, दफ्तरों, अदालतों और विधान सभाओं में अंग्रेजी का काफ़ी वोलवाला था।

औपनिवेशिक स्थिति और भापा

यदि संसार के कुछ देशों की राज एवं राष्ट्रीय भापाओं का संक्षिप्त विश्लेषण किया जाए तो पता चलेगा कि एक समय उपनिवेश वने देशो में प्राय: उपनिवेशवादी तत्कालीन शासकों की भापा की ही प्रधानता है। अफ़्रीका

महाद्वीप के 42 देशो की भाषाओ के नमूनो के अवलोकन पर निम्नांकित नतीजे निकलते हैं।

उपनिवेशिकों की भाषाओं को अपनाने का एक प्रतिरूप
बीसवीं सदी के आठवें दशक मे

1	विदेशी भाषाए	अंग्रेजी	अंग्रेजी तथा एक अन्य भाषा	फ्रांसीसी	फ्रांसीसी तथा एक अन्य भाषा	स्पेनिश	अरबी
2	अफ्रीकी देशों की सख्या जिनमे विदेशी भाषाए सरकारी तथा राष्ट्रीय भाषाए है	14	2	13	5	1 अमहारिक 1	6

अल्जीरिया, लीबिया, मोरक्को, सूडान, ट्यूनिस तथा यूनाइटिड अरब रिपब्लिक की भाषा अरबी थी और इथोपिया की अमहारिक। इस सिलसिले मे ससार की 146 देशो की भाषाओ के अध्ययन से पता चला कि उनमे से 27 देशो की भाषा केवल अंग्रेजी, नौ की अंग्रेजी तथा एक अन्य भाषा, एक देश की अंग्रेजी तथा दो अन्य भाषाए और एक देश की अंग्रेजी के साथ तीन अन्य भाषाए सरकारी अथवा राष्ट्रीय भाषाए स्वीकृत हैं।[11] इनमे से अधिकाश देश किसी न किसी समय ब्रिटिश राज के अतर्गत थे।

राष्ट्रीय जागृति की लहर

जब उपनिवेशो मे रहने वाले लोगो में राष्ट्रीय जागृति का उफान उठा और उन्हे यह विश्वास होने लगा कि देशज भाषाओ के माध्यम से ही वे अपने भाग्य का 'श्रेष्ठतम' निर्माण कर सकते हैं तो इन देशो मे विदेशी भाषाओ को अव्वल दर्जे से हटाने के लिए जोरदार आदोलन चल पडे। इनमे कुछ आदोलन जल्दी सफल हो गए, परतु कुछ एक को हवा के उलटे रुख का सामना करना पड़ा, और इनकी सफलता मात्र आंशिक ही रही।

हिंदुस्तान मे अंग्रेजी को राजभाषा के स्थान से तथा शिक्षा सस्थाओ मे शिक्षा के माध्यम मे हटाने की माग देश की आज़ादी के आदोलन के साथ

जुड़ी रही है। मसलन, विदेशीराज से मुक्ति के उस समय के ध्वजवाहक भारतीय राष्ट्रीय कांग्रेस ने 1925 ई. में यह प्रस्ताव पारित किया कि इसकी अंशभूत इकाइयों की बैठकों की कार्यवाही का माध्यम भारतीय भाषाएं ही होंगी।

स्वतन्त्रता संग्राम के बाद जब अंग्रेज़ी के स्थान पर हिंदी लाने की बात चली तो देश मे विरोध के लिए प्रदर्शन होने लगे। निहित स्वार्थों से भरपूर लोगों ने स्थिति से लाभ उठाने और भोली जनता की भावनाओं के साथ खिलवाड़ कर उसे गुमराह करने मे कोई कसर नही छोड़ा। इन लोगों ने जो गलत धारणाएं फैलाईं, जो परस्पर विरोधी एवं भ्रांत है, उनमें से कुछ एक निम्नलिखित है :

जो लोग अंग्रेज़ी को पहले स्थान पर बनाए रखने के पक्ष में है उनका कहना है कि अंग्रेजी प्रगति का प्रतीक है, यह एक समृद्ध भाषा है, इसी भाषा के द्वारा देश संगठित हुआ और इसके माध्यम से भारत संसार के अन्य देशों के साथ संपर्क स्थापित कर सकता है।

इस संबंध मे यह याद रखना होगा कि किसी राष्ट्र की समृद्धि के मुख्य आधार उसकी शैक्षिक, आर्थिक तथा सर्वांगीण प्रगति होते है, न कि देश के लोगो के भाषा बोध का स्तर। भारत कृषि एवं उद्योग के क्षेत्रों मे अंग्रेज़ी के आगमन के साथ नही बढ़ा बरन् इन क्षेत्रों मे उसका विकास भाषा के साथ नही, आज़ादी के साथ जुड़ा हुआ है।

निस्संदेह, अंग्रेज़ी एक समृद्ध भाषा है, और इस कारण देश के स्कूलो और कालेजों मे इसे पढ़ाना ज़रूरी है। लेकिन इसका मतलब यह नही है कि इसे राजभाषा का पद प्रदान किया जाए, और शिक्षा संस्थाओं मे इसे शिक्षा के माध्यम के रूप में स्वीकार कर लिया जाए। संसार में लगभग पचास राजभाषाएं है। रूस, जर्मनी, इजराइल, जापान तथा स्वीडन के लोग अंग्रेजी को राजभाषा अथवा शिक्षा के माध्यम के रूप में प्राथमिकता न देने पर भी उन्नति की होड़ में किसी से पीछे नही है। भारत में भी क्षेत्रीय स्तर पर सरकारी कामकाज चलाने के लिए अंग्रेजी को सरकारी भाए रूप मे बरकरार रखने की कोई माग नही है। अत: राष्ट्रीय स्तर पर राजभाषा के रूप में बनाए रखने की मांग अनुचित है। सार के अन्य देश में हुई वैज्ञानिक तथा दूसरी प्रगतियो से अपने आपको अवगत रखने के लिए जहा अंग्रेजी भाषा का अध्ययन अनिवार्य है वहां अन्य विदेशी भाषाओं की महत्ता को भी नज़रअंदाज या न्यून नहीं किया जा सकता।

अंग्रेजी के माध्यम से अंग्रेज़ी पढ़े लिखे लोगों के एक विशिष्ट वर्ग के बीच आदान-प्रदान तो संभव हो गया है, परंतु संपूर्ण राष्ट्र की एकता अखंड रूप

म तो तभी मुमकिन हो सकती है जब सारे देशवासियो के बीच आदान-प्रदान और भावात्मक, वैचारिक एव राजनीतिक एकता अखड हो। देश के एकीकरण म जहा अग्रेजी भाषा की देन को नकारा नही जा सकता, वहा इस सदभ मे सस्कृत एव खडी बोली के योगदान को ध्यान मे रखना होगा। इस बात को भी नजरअदाज नही किया जा सकता कि इस सबध मे भारतीय सस्कृति के अभिन्न सूत्रो का भी बहुत बडा हाथ है। अग्रेजी राज की समाप्ति के उपरात छोटी बडी 500 रियासतो का विलय देश के एकीकरण मे अत्यधिक महत्त्व रखता है। राष्ट्र की एकता मे उन 95 प्रतिशत से अधिक लोगो को नही छोडा जा सकता जो अग्रेजी भाषा नही जानते, किंतु वे राष्ट्र के अभिन्न अग हैं।

कुछ लोगो का कहना है कि भारतवासियो के लिए अग्रेजी एक निष्पक्ष भाषा है। और यदि इसके स्थान पर हिंदी को आसीन कर दिया गया तो उससे देश मे क्षेत्रीय असतुलन पैदा हो जाएगा।

जो लोग हिंदुस्तान मे अग्रेजी के क्रमिक प्रसार के इतिहास से अवगत हैं उन्हे मालूम है कि कुछ प्रातो के लोगो को बाकी देशवासियो की अपेक्षा अग्रेजी सीखने का अवसर पहले मिला था। अत अग्रेजी को तटस्थ भाषा कहना गलत होगा। और, फिर जो पीढी पहली बार स्कूल जा रही है उसके लिए विदेशी भाषा के मुकाबले मे भारतीय भाषाओ के माध्यम से ज्ञान की पिछली कमी को पूरा करना अधिक आसान है। इस प्रकार अग्रेजी भाषा विभिन्न वर्गों के बीच असतुलन को बढावा देगी, न कि इसे कम करेगी।

जहा तक क्षेत्रीय असतुलन पैदा होने का सवाल है, देश के सविधान मे राजनीतिक अथवा सास्कृतिक सतुलन कायम रखने के लिए पर्याप्त प्रत्याभूति है। इसलिए असतुलन पैदा होने की प्रासगिकता केवल इतनी रह जाती है कि जब हिंदी अग्रेजी का स्थान ग्रहण कर लेगी तो शुरू शुरू मे शायद केंद्रीय सरकार की नौकरियो मे हिंदी भाषाभाषी लोग अहिंदी भाषाभाषियो से बाजी मार ले जाए। ऐसी अवाछित स्थिति से बचने के लिए उपयुक्त कदम उठाए जा सकते हैं।

यह तर्क प्रस्तुत किया जाता है कि अहिंदी भाषाभाषी हिंदी के माध्यम से अपनी सर्वोत्तम देन नहीं दे पाएगे। यह एक मनगढत कल्पना है कि भारत के लोग किसी विदेशी भाषा द्वारा ही अपना सर्वोच्च अशदान दे पाए हैं, अथवा दे सकते हैं। दस बारह वर्ष अग्रेजी पढने के बावजूद, अधिकाश हिंदुस्तानी, और शायद इसी प्रकार सभी देशो के लोग जिनकी मातृभाषा अग्रेजी नही है, (लगडी) अग्रेजी ही लिख अथवा बोल पाते हैं। भारत के सर्वोत्कृष्ट दर्शन एव कला के रूप देशज भाषाओ के माध्यम से ही उजागर एव विकसित हुए

है। इस सिलसिले में कुछ एक अपवाद जरूर है, जहां भारतीय लेखकों ने उच्च कोटि की कृतियां अंग्रेज़ी भाषा मे लिखी है। परतु अपवाद से कोई विधान सिद्ध नही होता। साहित्य अकादमी के पुरस्कार विजेताओं की 'सांख्यिकी' के अवलोकन से इस कथन की सच्चाई सिद्ध हो जाएगी। अकादमी की स्थापना से लेकर 1977 ई. तक 290 पुरस्कार दिए जा चुके है। इनमे से 22-22 पुरस्कार हिंदी और मराठी भाषा की कृतियो के लिए दिए गए है, और भारतीय लेखकों द्वारा रचित अंग्रेज़ी भाषा की पुस्तकों के लिए केवल 9 पुरस्कार प्राप्त हुए है। 1980 ई. के बाद पुरस्कारो की संख्या इस प्रकार थी—हिंदी : 25; मराठी : 25, अंग्रेज़ी : 12। इस प्रकार तुलनात्मक दृष्टि से स्थिति मे कोई परिवर्तन नही आया।[17]

यह कहना कि अंग्रेजी के स्थान पर हिंदी की स्थापना से शेष भारतीय भाषाओं का ह्रास हो जाएगा, जैसे एक काल्पनिक भूत का भय दिखाने वाली बात है। इसके प्रतिकूल इस बात का प्रमाण उपलब्ध है कि अंग्रेज़ी की ओर बहुत अधिक ध्यान देने तथा उपनिवेशवाद के कारण सभी देशी भाषाओ का गला घुटता रहा है। स्वतंत्रता मिलने के उपरांत सभी राज सरकारों ने क्षेत्रीय भाषाओ को आगे बढ़ाया है और किसी भी प्रकार से हिंदी उनकी समृद्धि मे बाधक सिद्ध नहीं हुई।

सांख्यिकीय पुष्टि के बिना ही कुछ लोगों का कथन है कि हिंदी के जिस स्वरूप का राजकीय कामकाज मे इस्तेमाल किया जाता है उसे पांच प्रतिशत से अधिक लोग नहीं समझते। निस्सदेह हिंदी को अधिक व्यापक रूप देना आवश्यक है, परंतु यह भी विस्मरण नही करना चाहिए कि प्रशासन और विधि निर्माण की भाषा जनसाधारण की भाषा से हमेशा अधिक समृद्ध होगी।

कुछ लोगो का विचार है कि यदि स्वतंत्रता प्राप्ति के तुरंत बाद या तो हिंदी अंग्रेज़ी की जगह ले लेती, अथवा विधायकों ने अंग्रेजी या हिंदी के स्थान पर संस्कृत को राजभाषा चुन लिया होता तो भाषा की समस्या उत्पन्न ही न होती।[3] इस समस्या का गहन विश्लेषण करने से पता चलता है कि इस प्रकार की सभी धारणाएं निर्मूल हैं।

समस्या का समाधान

भाषा की यह समस्या अब इतनी जटिल बन चुकी है कि केवल कानून निर्माण से इसका हल निकालना असंभव जान पड़ता है। उत्तेजनात्मक कार्य-वाहियों या प्रदर्शनों से स्थिति और भी बिगड गई है। नासमझी एवं जल्दबाज़ी के उपायों से सरकारी कामकाज में हिंदी के प्रयोग की गति को तेज करने अथवा निहित स्वार्थो के कारण इसकी प्राकृतिक प्रगति में बाधा डालने की कोशिश

से उलझन शायद और भी बढ़ जाएगी। समस्या के समाधान के लिए जरूरी यह है कि सभी देशवासी एकसाथ मिलकर निश्चित योजना के अनुसार और स्वेच्छा से इसके लिए प्रयास करें।

सर्वप्रथम यह स्पष्ट हो जाना चाहिए कि भारत के संदर्भ में जब हम राजभाषा की बात करते हैं तो हमारा प्रयोजन उस भाषा से होता है जिसमें केंद्र सरकार अपना कामकाज चलाती है अथवा प्रांतीय सरकारों से पत्र व्यवहार करती है। इसे राष्ट्रीय भाषा अथवा देश के लिए संपर्क भाषा की परिभाषा एवं शब्दावली से उलझा कर समस्या को और पेचीदा नहीं बनाया जाना चाहिए।

भाषा संबंधी विवादों में विभिन्न वर्गों के लोगों द्वारा व्यक्त किए गए विचारों के अध्ययन से पता चलता है कि अंग्रेज़ी के स्थान पर हिंदी को लाने की बात पर तो कोई मतभेद नहीं है। अलबत्ता, इस संबंध में संसद का इतना निर्देश जरूर है कि संघ में तब तक द्विभाषिता बनी रहेगी जब तक कि सभी प्रांतों की विधानसभाएं और संसद अंग्रेज़ी को हटाने के लिए प्रस्ताव पारित न कर दें। इस शर्त का अभिप्राय यह नहीं है कि अंग्रेज़ी अनिश्चित काल तक देश की राजभाषा बनी रहेगी। देश को आज़ाद हुए तीन दशक से अधिक हो चुके हैं। अब समय आ चुका है जब सभी क्षेत्रों के भाषाविद् और नेता मिलकर बैठें और अंग्रेज़ी के स्थान पर हिंदी को आरूढ़ करने की कालावधि पर पूरी तरह से विचार करने के उपरांत एक बार अंतिम निर्णय ले लें और उसी के अनुसार कार्य योजना बनाकर उसे अमल में लाएं।

इस संबंध में सभी प्रकार की गलत धारणाओं का निराकरण अत्यावश्यक है। भाषा वैज्ञानिकों का भी इस संबंध में चूंकि कुछ दायित्व है, अतः समस्या के समाधान में उन्हें और अधिक तत्परता से हाथ बटाना होगा। हिंदी भाषा और साहित्य के क्षेत्रों में शोध कार्य की कमी नहीं है, परंतु हिंदी और देश की अन्य भाषाओं और बोलियों के बीच व्यावहारिक समानताएं ढूंढने और इन्हें अधिक व्यापक बनाने के लिए विभिन्न संबंधित क्षेत्रों में अभी तक अपेक्षित कार्य नहीं हुआ है।

दोरुखा तरीका अपनाने से अंग्रेज़ी अथवा हिंदी के समर्थकों को कोई लाभ नहीं होगा। यदि एक ओर यह आवाज़ उठाई जाए कि हिंदी संविधान के अनुसार राष्ट्र की भाषा तभी बन सकती है जब यह भारत की सामूहिक संस्कृति की भाषा बन जाए और दूसरी ओर उसे ब्रज, अवधी आदि भाषाओं से, जिनके साथ हिंदी का अटूट रिश्ता रहा है, पृथक् करने की कोशिश की जाए तो ऐसी स्थिति स्पष्ट रूप से परस्पर विरोधी है। एक ओर यह कहना कि 150 वर्षों में अंग्रेज़ी के अध्ययन अध्यापन के क्षेत्र में जो अनुभव हुए हैं,

उन्हें नहीं खोना चाहिए, और दूसरी ओर हिंदी तथा अन्य देशज भाषाओं में कई शताब्दियों की मेहनत से जो उपलब्धियां हुई है, विदेशी भाषा को प्राथमिकता देने के उद्देश्य मे उन्हें नेपथ्य मे डालने का दुस्साहस करना एक कमज़ोर मोर्चे की शरण लेने जैसा प्रयास है। इसी प्रकार हिंदी के समर्थक हिंदी को संघ की भाषा बनाने के लिए तो बेताब हैं, परंतु इसके साथ वे भाषा के शुद्धिवाद के सिद्धांत से चिपके रहकर इसके वातायन को बद रखना चाहते है। यह स्मरण रखना चाहिए कि शुद्धिवाद केवल एक 'मिथक' है। संसार की कोई भाषा शायद ही विशुद्ध हो। सस्कृत मे भी कोण, चुबन, नीर आदि अनेक ऐसे शब्द है जो द्रविड स्रोतों से आए है। इतिहास के इस कटु सत्य को नही भूलना चाहिए कि जब जब विशुद्धता के नाम पर किसी भाषा को कृत्रिम तरीकों से बांधने की कोशिश की गई तो उसका परिणाम केवल एक ही निकला कि वह जिंदा नही रही।

संदर्भ एवं टिप्पणियां

1 आर. सी. निगम द्वारा सकलित, सेंसस ऑफ़ इंडिया, 1971, लैंग-ग्विज हैंडबुक ग्रान मदर टग इन सेंसस, नई दिल्ली. रजिस्ट्रार जनरल, इंडिया, गृह मत्रालय, 1972, सेंसस सेंटेनरी मोनोग्राफ न. 10, पृष्ठ 333-340.

2. कुछ इतिहासकार यह मानते हैं कि द्रविड भाषाओं पर सस्कृत का प्रथम प्रभाव गुप्त राज वंश काल में, अर्थात् 300 ई. में, और तत्पश्चात् सत्रहवीं शताब्दी में पड़ा, जब विजयनगर के राजाओं ने संस्कृत का समर्थन किया था.

3. ग्रियर्सन, जी. ए., लैंगुजिस ऑफ इडिया, 1903, पृष्ठ 40-41 (1901 की जनगणना-रिपोर्ट में ग्रियर्सन का भारतीय भाषाए नामक लेख का पुनर्मुद्रण).

4. इंडिया, ऑफिशल लैंगुजिज कमीशन रिपोर्ट 1955-56, नई दिल्ली. गृह मत्रालय, 1957, पृष्ठ 40-41.

5. कीथ, ए बी ; सस्कृत साहित्य का इतिहास, ऑक्सफोर्ड यूनिवर्सिटी प्रेस (1920), पृष्ठ 77.

6. पीछे मुडकर देखने पर यह कहा जा सकता है कि अपभ्रंश भाषाएं आधुनिक भारतीय भाषाओं के विकास का एक महत्त्वपूर्ण चरण है, अतः इन्हें 'भ्रष्ट भाषाए' कहना अनुचित होगा

7. ग्रियर्सन, जी. ए., लिंगुस्टिक सर्वे ऑफ इडिया, दिल्ली, मोतीलाल बनारसीदास, 1967, वॉल्यूम 1, भाग 1, पृष्ठ 1.

8 प्रसाद, वी एन लैंग्विज ग्रॉफ इंडिया, ए कनाइडस्कोपिक सर्वे, मद्रास, ग्रावर इंडिया डायरक्ट्रीज पब्लिकेशस, पृष्ठ 35

9 प्रसगवश इस वणन से उस ऐतिहासिक पृष्ठभूमि का भी पता चलता है जो सविधान के निर्माताग्रों के मन मे उस समय रही होगी, जब 1949 ई में उन्होंने हिंदी को भारत की राजभाषा बनान के लिए निणय लिया था

10 यह विश्लेषण वल्ड मार्क एनसाइक्लोपीडिया ग्रॉफ नेशस, खण्ड 2-5 में दी गई सूचना पर ग्राधारित है इसका प्रकाशन वल्ड मार्क प्रेस हार्पर एड रोव, न्यूयार्क ने 1971 ई मे किया था लेखक के पी-एच डी के लिए लिखे गए शोधप्रबध 'हिंदी राजभाषा—समस्या ग्रौर स्वरूप' 1976 को भी देखें

11 देखिए परिशिष्ट XI

12 देखिए परिशिष्ट IX ग्रौर X इस पुस्तक के लिए सामग्री का एकत्रीकरण 1976-1977 ई म प्रारभ हुग्रा ग्रत यहा पर तथा ग्रन्य स्थानों पर 1977 का जिक्र है

13 वैसे एक समय लेखक भी इस विचार के साथ सहमत था

संविधान की आठवीं अनुसूची में भारतीय भाषाएं

(एक संक्षिप्त विवरण)

भारत में भाषाओं और बोलियों का बाहुल्य भी है और वैविध्य भी। देश की भाषा समस्या का हल ढूंढते समय इस महत्त्वपूर्ण तथ्य को हमेशा नजर में रखना होगा। इसके बिना समस्या का समाधान नहीं निकल सकता है। भारत की अनेक भाषाओं एवं बोलियों में से पंद्रह भाषाएं भारतीय संविधान की आठवीं अनुसूची में दर्ज हैं। ये भाषाएं इस प्रकार हैं: असमी, बंगला, गुजराती, हिंदी, उर्दू, कन्नड कश्मीरी, मलयालम, मराठी, उडिया, पंजाबी, सस्कृत, सिंधी, तमिल, तेलुगु (सिंधी को इक्कीसवें संशोधन विधेयक, 1964 द्वारा संविधान में शामिल किया गया था)। यह निश्चित रूप से नहीं कहा जा सकता कि किन आधारों पर केवल इन्हीं भाषाओं को संविधान में सम्मिलित किया गया। प्रमाणों के अभाव में केवल अनुमानों के सहारे कहा जा सकता है कि इन भाषाओं को संविधान में स्थान देते समय, संभवतः, निम्नलिखित मापदंडों को आधार बनाकर निर्णय लिया गया होगा ·

(क) भाषा भारतीय ही होनी चाहिए।
(ख) देश में इसे बोलने वालों की संख्या काफ़ी हो।
(ग) परंपरा, धरोहर और साहित्य की दृष्टि से यह संपन्न हो, और
(घ) इसकी लिपि मुद्रण की दृष्टि से कठिन न हो।

भारतीय जनता के एक वर्ग द्वारा यह मांग प्रस्तुत की गई थी कि अंग्रेजी को भी संविधान की आठवीं अनुसूची में शामिल किया जाए, परंतु इस मांग को अन्य कारणों के अतिरिक्त इस आधार पर भी अस्वीकार कर दिया गया कि अंग्रेजी भारतीय भाषा नहीं है। यदि भारत की अपनी भाषाएं समृद्ध न होतीं

तो शायद देशी भाषाओं पर अंग्रेजी की वरिष्ठता मानने में कठिनाई न होती, परंतु वास्तविक स्थिति कुछ और ही थी। यदि भारत में अनेक प्रतियोगी साहित्यसंपन्न भाषाओं के स्थान पर केवल एक ही समृद्ध भाषा होती तो भी भाषा समस्या का समाधान पाना दुष्कर न होता, परंतु स्थिति सर्वथा भिन्न थी। यदि कुछ समय के लिए ब्रजभाषा, मैथिली, अवधी और अन्य साहित्य संपन्न भाषाओं को भी नजरअंदाज कर दिया जाए तो भी आठवीं अनुसूची की भाषाएं इतनी विकसित हैं कि उनमें से किसी की भी अवहेलना करना मुश्किल है। इनमें से अधिकांश भाषाएं ऐसी हैं जिनके बोलने वालों की संख्या संसार के कुछ देशों की सम्मिलित जनसंख्या से भी अधिक है।[1] इसलिए देश की भाषा समस्या के निहितार्थ को पूरी तरह से समझने के लिए इन भाषाओं के बारे में कुछ जानकारी प्राप्त कर लेना जरूरी है। आठवीं अनुसूची की भाषाओं को दो परिवारों में विभक्त किया जा सकता है भारतीय आर्य भाषाएं एवं द्रविड भाषाएं। संविधान की ग्यारह भाषाएं प्रथम परिवार में आती हैं, और चार दूसरे में। इनमें प्रत्येक भाषा काफी बड़े क्षेत्र में बोली जाती है। तथापि,

> कहीं भी ऐसे भाषायी प्रांत का निर्माण करना मुमकिन नहीं होगा जिसमें 70 से 80 प्रतिशत तक से अधिक एक ही भाषा के बोलने वाले लोग हों। इस प्रकार प्रत्येक प्रांत में कम-से-कम 20 प्रतिशत लोगों की अल्पसंख्या ऐसी रह जाएगी जो अन्य भाषाभाषी होगी।[2]

भारतीय आर्य भाषाएं

1 असमी

असमी भारतीय आर्य परिवार की पूर्वी शाखा की भाषाओं में से है। यह असम प्रांत की भाषा है, जहां 59 3 प्रतिशत लोग इसे बोलते हैं। समस्त भारत में 89 6 लाख लोग असमी बोलते हैं। यह संख्या न्यूजीलैंड की जनसंख्या के तीन गुनी है।[3] इस भाषा का शब्द भंडार तद्भव प्रधान है। 'भोट-बर्मी' बोलियों ने इसके शब्द भंडार, ध्वनि-धाराप्रवाह (ध्वनन) और इसकी संरचना को प्रभावित किया है, परंतु अक्षरों पर जोर डालने वाले उच्चारण यानी स्वराघात में सबसे ज्यादा असर बंगाली का रहा है।[4] असमी की लिपि लगभग बंगला भाषा की लिपि है। असमी साहित्य की मुख्य महिमा इतिहास में है। 'बुरंजी' अथवा ऐतिहासिक कृतियां बृहदाकार हैं, और इन्हें बड़े ध्यान से सुरक्षित रखा गया है।[5] इस संबंध में ग्रियर्सन का कहना है

> भागदत्त (जो महाभारत के कुरु पांचाल युद्ध के समकालिक थे) के समय की ऐतिहासिक कृतियों के अवशेष अब तक उपलब्ध हैं। पिछले छ सौ वर्षों की ऐतिहासिक घटनाओं को समय क्रम के अनुसार सुरक्षित रखा गया है, और उनकी प्रामाणिकता विश्वसनीय है।[6]

ऐतिहासिक कृतियों के अतिरिक्त असमी साहित्य में व्याकरण-और अन्य विविध विषयों का प्रतिपादन भी है, और यह सब देशज अथवा स्थानीय उत्पत्ति है। भावेंद्रनाथ सैंकिया, नवकांत बरुआ, सौरभ कुमार छलिए, सैयद अब्दुल मलिक असमी के प्रसिद्ध लेखकों में से हैं।

2. बंगला

बंगला को 'बंग भाषा' भी कहते है। यह,

> प्राचीन भारोपीय वंश की भारतीय आर्य परिवार की पूर्वी सीमावर्ती भाषाओं (बिहारी, असमी और उड़िया आदि को भी शामिल करके) मे सबसे अधिक महत्त्वपूर्ण भाषा है। यह भारतीय आर्य (जिसकी प्रतिनिधि सस्कृत है), तदुपरांत प्राकृत अथवा मध्य भारतीय आर्य मागधी भाषा की वंशज है।[7]

1971 की जनगणना के अनुसार बंगाली बोलने वालों की संख्या 447 9 लाख थी। इस प्रकार संविधान की आठवी अनुसूची में अंकित भाषाओं के बोलने वालों में बंगला भाषा भाषियो का गणना के अनुसार दूसरा स्थान है। पश्चिमी बंगाल और त्रिपुरा मे क्रमश: यह 85.32 और 68.79 प्रतिशत लोगों की मातृभाषा है। बंगला बोलने वालों की गिनती ईरान, श्रीलंका और सिगापुर की सम्मिलित जनसंख्या से अधिक है।

बंगाली की साहित्यिक शब्दावली मे संस्कृत के शब्दो का बाहुल्य है। ग्रियर्सन ने लिखा है :

> व्यावहारिक गिनती से यह सिद्ध किया जा चुका है कि आधुनिक काल की बंगला कृतियों मे प्रयुक्त 88 प्रतिशत शब्द शुद्ध संस्कृत के थे, जिनका इस्तेमाल गैरजरूरी था और जिनके स्थान पर देशज शब्दों का प्रयोग किया जा सकता था।[8]

बंगला ने विभिन्न विदेशी भाषाओ, जैसे अंग्रेजी, पुर्तगाली, अरबी और फ़ारसी

आदि से अनेक शब्द एव प्रभाव ग्रहण किए हैं। इसके वर्ण नागरी वर्णमाला के रूप आकार हैं। बगला में लिंग परिवर्तन के साथ क्रिया परिवर्तन नहीं होता। यह हिंदी और बगला मे विशेष भेद है। अत एक बगला भाषी हिंदी बोलते समय बहुधा बोल सकता है 'औरत गया' जबकि हिंदी भाषी के अनुसार शुद्ध कथन है 'औरत गई'। हिंदी और बगला मे परसर्गों के प्रयोग मे भी भेद है।[9]

बगला का साहित्य बहुत ही सपन्न है। नोबेल पुरस्कार विजेता रवींद्रनाथ ठाकुर तथा अन्य प्रसिद्ध लेखक जैसे शरतचद्र, काज़ी नजरुल इस्लाम आदि बगला साहित्य के उज्ज्वल सितारे हैं।

3 गुजराती

गुजराती का जन्म 'नागर अपभ्रश' मे हुआ, जिसकी शृखला 'शौरसेनी प्राकृत' अथवा 'शौरसेनी अपभ्रश' से जुडी हुई है। 'शौरसेनी अपभ्रश' का रूप साहित्यिक तथा सस्कृत प्रधान था, जिसका गुजरात के नागर ब्राह्मण व्यवहार करते थे।

यह गुजरात राज्य की भाषा है। देश के 258 9 लाख गुजराती भाषा भाषियो मे लगभग 238 7 लाख गुजरात राज्य मे रहते हैं। महाराष्ट्र मे 13 9 लाख और तमिलनाडु मे 2 लाख गुजराती बोलने वाले हैं।[10] गुजराती बोलने वालो की सख्या इथोपिया अथवा स्काटलैंड एव युगोस्लाविया की सयुक्त जनसख्या से अधिक है। गुजराती के वर्ण देवनागरी वर्णों से बहुत कुछ मिलते-जुलते हैं। गुजराती और राजस्थानी भाषाओं मे इतना अधिक साम्य है कि दोनों भाषाओं को एक भाषा की ही दो बोलियाँ कहा जा सकता है।

गुजराती साहित्य के सर्वप्रथम महान् लेखक हेमचद थे। उनका साहित्य मे आगमन आठवी शताब्दी में हुआ। नृसिंह मेहता के समय में गुजराती साहित्य में प्रचुर वृद्धि हुई और आज यह भाषा सपन्न साहित्य रखने का दावा कर सकती है। उपरवा कथाजय (उपन्यास), मुकरात (उपन्यास), तारतम्य (समालोचना) इस भाषा की राष्ट्रीय पुरस्कार जीतने वाली कुछ पुस्तकें हैं।

4 हिंदी

हिंदी शब्द फारसी भाषा का है। सर्वप्रथम इस शब्द का प्रयोग तुर्कों, अफगानो एव मुगलो ने किया था, परतु उनके लिए यह शब्द केवल किसी भाषा विशेष का सूचक न होकर प्रत्येक भारतीय अर्थात् हिंदुस्तानी चीज का पर्याय था। आजकल इस शब्द का प्रयोग भाषा तक ही सीमित है।

भारत के मुख्य रूप से हिंदी भाषा भाषी प्रातो के नाम इस प्रकार हैं हिमाचलप्रदेश, हरियाणा, उत्तरप्रदेश, मध्यप्रदेश, बिहार, राजस्थान एव सघ राज्य क्षेत्र दिल्ली। इन राज्यों का सम्मिलित क्षेत्रफल लगभग 1,35,400

वर्ग किलोमीटर है। यह भारत के कुल क्षेत्रफल का, जो 32,80,000 वर्ग किलोमीटर है, लगभग 41 प्रतिशत है। हिंदी भाषा भाषियों की कुल संख्या 1625.8 लाख है। इसमे सर्वाधिक लोग (719 2 लाख) उत्तरप्रदेश मे रहते हैं, और न्यूनतम 58 लक्षद्वीप एव अडमान में। आठवी अनुसूची मे दर्ज सभी भाषाओं मे से हिंदी बोलने वालो की संख्या अधिकतम है। बगला भाषा भाषियों के मुकाबले मे हिंदी भाषियो की संख्या साढ़े तीन गुना है। यहा यह स्मरण कराना उचित होगा कि 1971 की जनगणना के अनुसार हिंदी भाषा भाषियों के बाद दूसरे नबर पर बगला बोलने वालों का स्थान आता है। हिंदुस्तान मे चारों द्रविड़ भाषा बोलने वाले लोगों की संख्या 1261.0 लाख है।

ब्रज, अवधी आदि हिंदी भाषा की कुछ उपभाषाए ऐसी भी है जिनके बोलने वालों की संख्या आठवी अनुसूची मे दर्ज कुछ भाषाओं के बोलने वालों की संख्या से ज्यादा है।

चीन, अमरीका और रूस को छोड़कर हिंदी बोलने वालो की संख्या संसार के किसी भी देश की जनसंख्या से अधिक है। इस संबंध मे परिशिष्ट (I) का अवलोकन प्रासंगिक होगा। यदि अफ्रीका महाद्वीप के सबसे अधिक जन-संख्या वाले पांच देशों, अर्थात् नाइजीरिया, यूनाइटिड अरब रिपब्लिक, इथोपिया, ज़ायर और सूडान की जनसंख्या को मिला लिया जाए तो भी यह योगफल हिंदी भाषा भाषियों की गिनती से कम ही रह जाता है।

मोटे रूप मे हिंदी भाषा के दो वर्ग हैं – पूर्वी तथा पश्चिमी हिंदी। अवधी, बघेली, छत्तीसगढ़ी आदि पूर्वी हिंदी बोलिया है, और हिंदुस्तानी, ब्रज भाषा, राजस्थानी, कन्नौजी, बुन्देली आदि पश्चिमी हिंदी की बोलियां हैं। इनमें से कुछ एक उपभाषाओं की साहित्य निधि विपुल है। मलिक मुहम्मद जायसी जो 1540 ई. में हिंदी साहित्यमडल पर उज्ज्वल नक्षत्र की भांति अवतरित हुए, ने अपना प्रसिद्ध ग्रंथ 'पद्मावत' अवधी मे लिखा था। उनके बाद महाकवि तुलसीदास ने लोकप्रिय महाकाव्य 'रामचरितमानस' भी इसी भाषा में लिखा था। तुलसी, जो हिंदी साहित्य के एक महान गौरव पुंज है, शेक्सपियर के समकालीन थे। "वे एक ऐसी प्रतिभा थे, जिनका नाम एक दिन सर्वसम्मति से संसार के महान् कवियो में लिखा जाएगा।"[11] ग्रियर्सन का यह कथन आज प्राय: सत्य सिद्ध हो चुका है।

ब्रज भाषा का साहित्य भी बहुत समृद्ध है, और शायद अवधी के साहित्य से अधिक लोकप्रिय है। ब्रज भाषा को सूरदास जैसे महान् कवि देने का गौरव है। 1300 ई. से 1800 ई. तक राजदरबार की भाषा थी। हिंदी की इन उपभाषाओ की परपरा इतनी महान् थी कि यह खड़ी बोली के विकास के

लिए भी बाधक बन गई। 1857 ई के बाद ही खडी बोली विकास के मार्ग पर बेरोक टोक बढ सकी। आज हिंदी भाषा मे ज्ञान के विभिन्न क्षेत्रो मे सपन्न साहित्य उपलब्ध है।

5 कश्मीरी

कश्मीरी को लेकर भाषाविदो मे मतभेद दिखाई पडता है। ग्रियर्सन कश्मीर की भाषा कश्मीरी की गणना दार्दिक अथवा पिशाच भाषा मे करते हैं। दार्दिक भाषाए आर्य तो हैं, परतु भारतीय आर्य नहीं हैं। प्रोफेसर पी एन पुष्प इस दृष्टिकोण को चुनौती देते हुए लिखते हैं

> सभवत कश्मीरी का जन्म दसवी अथवा ग्यारहवी शताब्दी मे घाटी मे प्रचलित अपभ्रश से हुआ यत्र तत्र दार्दिक प्रभाव तो स्वीकार किया जा सकता है, परतु यह सोचना सर्वथा असगत होगा कि इस भाषा का स्रोत देश की शेष आधुनिक भाषाओ से भिन्न है।[12]

कश्मीरी शब्द का उद्गम सस्कृत शब्द 'कश्मीरिका' से हुआ है। यह भारत के 24 4 लाख लोगो की मातृभाषा है। इनमे 24 2 लाख बोलने वाले कश्मीर निवासी हैं। कश्मीरी भाषा भाषियो की सख्या लीबिया अथवा जोर्डन की जनसख्या से अधिक है।

कहने की आवश्यकता नही है कि दसवी सदी तक कश्मीर के विद्वान् सस्कृत मे लिखते रहे। सस्कृत साहित्य, विशेषकर दर्शन, काव्यशास्त्र आदि मे इन विद्वानो की महत्त्वपूर्ण देन है। कश्मीरी भाषा मे भी प्रतिष्ठित साहित्यिक कृतिया उपलब्ध हैं।

कश्मीरी भाषा मे लोक आख्यानो एव पौराणिक कथाओ की बहुत बडी सपदा है। चूकि यहा के लोगो का लिखने की कला से सबध काफी समय तक टूटा रहा, इसलिए इस सपदा के अधिकाश भाग का सग्रह नही हो सका। इस भाषा का अधिकाश साहित्य, जोकि सीमित मात्रा मे है, आधुनिक है, और विदेशियो, विशेषकर विदेशी प्रचारको की देन है, जिन्होंने कश्मीरी भाषा (फारसी लिपि) मे बाइबल, भक्ति गीत और भक्ति साहित्य का भी अनुवाद किया।[13]

लगभग 700 वर्ष पूर्व कश्मीरी के लिए शारदा लिपि का प्रयोग होता था, परतु कश्मीर मे फारसी के राज दरबार की भाषा बनने के उपरात इसके लिए फारसी लिपि का इस्तेमाल होने लगा। 1955 ई और 1977 ई के बीच कश्मीरी भाषा की नौ पुस्तकें साहित्य अकादमी द्वारा प्रदान किए जाने वाले राष्ट्रीय पुरस्कार प्राप्त कर चुकी हैं।

6. मराठी

मराठी का जन्म महाराष्ट्री प्राकृत से हुआ, जो 600 ई. तक बोलचाल की भाषा थी।

1971 के आंकड़ों के अनुसार मराठी बोलने वालों की संख्या 422.5 लाख थी, जो हिंदी, बंगला और तेलुगु बोलने वालों की संख्या के बाद चौथे स्थान पर आती है। महाराष्ट्र राज्य में 386.2 लाख लोग और सलग्न मध्य प्रदेश और कर्नाटक राज्यों मे क्रमश: 13.9 लाख और 11.9 लाख लोग मराठी भाषा भाषी हैं। मराठी बोलने वालों की गिनती अफ्रीका महाद्वीप में मिस्र और एशिया महाद्वीप में फिलेपिन एवं इजराइल की संयुक्त आबादी से अधिक है।

मराठी की लिपि नागरी है। अर्वाचीन काल में इस भाषा में प्रचुर साहित्य का सृजन हुआ है। हिंदी के समान मराठी ने भी 1955 ई. और 1977 ई. के बीच सभी भाषाओ के मुकाबले में अधिकतम अर्थात् 22 पुरस्कार प्राप्त किए हैं। (साहित्य अकादमी के पुरस्कारों की स्थापना 1955 में हुई थी।)

7. उड़िया

इस भाषा को 'उद्री' अथवा 'उत्कली' भी कहते हैं। ये नाम इस भाषा की जन्मभूमि से लिए गए हैं जिसे उड़ीसा, उद्रदेश और उत्कल से संबोधित किया जाता है।

198.6 लाख भारतवासी इस भाषा को बोलते हैं। यह गिनती आस्ट्रेलिया महाद्वीप की आबादी से डेड़ गुना है। इस भाषा के शब्द भंडार पर संस्कृत की बहुत छाप है। इस पर तेलुगु और मराठी का भी प्रभाव है, क्योंकि सदियों तक उड़ीसा के तिलंग राजाओं के और लगभग पचास वर्षों तक नागपुर के भोसलों के शासनाधीन रहा।

यद्यपि उड़िया लिपि का उद्‌गम स्रोत ब्राह्मी एवं नागरी है, इसके वर्णों का ऊपरी भाग गोल है और किसी किसी वर्ण का नीचे का भाग भी गोल है। उत्तर एवं दक्षिण अर्थात् आर्य एवं द्रविड़ लिपियों का यह संश्लेषण चौदहवीं शताब्दी के बाद हुआ।

उड़िया साहित्य का प्रारंभ उपेंद्र भंज से हुआ। इस कवि ने काफ़ी धर्म ग्रंथ लिखे, जिनकी बहुत प्रतिष्ठा है। इसके अतिरिक्त कई अन्य लेखकों की साहित्यिक कृतियां भी ऐसी हैं जिन्हें भारतीय साहित्य में सम्माननीय स्थान प्राप्त है।

8. पंजाबी

यह पंजाब प्रांत की भाषा है। पंजाब फ़ारसी भाषा का शब्द है, जिसका अर्थ

है 'पाच नदियों' की भूमि । प्राचीन काल मे इसका नाम 'पाचाल' था ।

164 5 लाख लाग पजाबी बोलन हैं । जैसे कि सलग्न 'भारतीय भाषाओ के बोलने वाल' शीर्षक ग्राफ से स्पष्ट है, कि पजाबी बोलने वाले लोगो की सख्या के आधार पर भारतीय भाषाओ मे पजाबी का ग्यारहवा स्थान है। परतु श्रेणी अक (रैंक स्कोर) के अनुसार पजाबी का स्थान चौथा है । इससे स्पष्ट होता है कि इस भाषा के बोलने वाले सारे देश मे बिखरे हुए हैं ।[1] पजाबी बोलने वालो की सख्या सूडान की आबादी मे 36 लाख अधिक है ।

पजाबी गुरुमुखी लिपि मे लिखी जाती है । पजाबी की पुरानी लिपि 'लडे' थी, जिसका अर्थ है 'विकृत' । यह भी नागरी से सबधित थी, परतु इस लिपि मे लिखे शब्दो को कई बार स्वय लिखने वाला स्वय भी नही पढ पाता था । इस त्रुटि को दूर करने के लिए द्वितीय सिख गुरु, गुरु अगद देव, ने सोलहवी शताब्दी म सिख ग्रथो के लिए एक नई लिपि का आविष्कार किया । यह लिपि दवनागरी से मिलती जुलती है ।

गुरु ग्रथ साहब, सिख पथ का सर्वाधिक महत्त्वपूर्ण एव सम्मानित ग्रथ है । यह पजाबी साहित्य की एक उत्कृष्ट कृति है । आधुनिक काल मे पजाबी साहित्य की सपदा मे काफी वृद्धि हुई है और होती जा रही है ।

9 सस्कृत

सस्कृत को आठवी अनुसूची म, सविधान के मसौदे मे सशोधन के उपरात, शामिल किया गया था । यह सशोधन सविधान मे भाषा के विषय पर विचार के समय लक्ष्मीकान्त मैत्र (पश्चिमी बगाल) द्वारा प्रस्तुत किया गया था। उन्होंने सशोधन प्रस्तुत करते समय आश्चर्य प्रकट किया कि किसी सदस्य ने सस्कृत को आठवी अनुसूची म शामिल करने के महत्त्व की ओर सकेत नही किया। उनका सशोधन एकमत से स्वीकृत हुआ था ।

क्लासिकी सस्कृत, जिसे केवल 'सस्कृत के नाम से जाना जाता है, का विकास पाणिनि तथा उनके पूर्व के व्याकरणाचार्यों द्वारा वैदिक सस्कृत के मानकीकरण से हुआ । यह कार्य ई पू सातवी शताब्दी म हो चुका था ।

1971 ई की जनगणना के अनुसार सस्कृत बोलने वालो की सख्या 2212 थी, जो आठवी अनुसूची के प्रत्येक भाषा भाषियो से बहुत कम हैं । उत्तरप्रदेश मे सर्वाधिक सस्कृत बोलने वाले हैं, और उनकी सख्या 508 है। इसके बाद बिहार और तमिलनाडु का स्थान है, जहा क्रमश सस्कृत भाषा भाषियो की गिनती 350 और 254 है। सघ राज्य क्षेत्रो मे दिल्ली मे सबसे अधिक सस्कृत बोलने वाले हैं, और उनकी सख्या 94 है ।

यद्यपि सस्कृत बोलने वाले बहुत कम सख्या मे हैं, तथापि इस बात की

अवहेलना नहीं की जा सकती कि संस्कृत की भारतीय भाषाओं एव भारतीय साहित्य को महानतम देन है । भारतीय भाषाओं के शब्द भंडारो मे संस्कृत की देन के संबंध मे अनेक अनुमान लगाए गए है । इनमें से एक अनुमान नीचे दिया गया है ।[15] (यहा पर सिंधी और उर्दू का जिक्र नही किया गया। सिंधी में अभी तक उसका मूल एवं प्राकृत स्वरूप, जिसमे सस्कृत की झलक स्पष्ट मिलती है, देखा जा सकता है । जहां तक उर्दू का सबंध है, एक अनुमान के अनुसार इसमें 72.2 प्रतिशत हिंदी और 1.5 प्रतिशत शब्द संस्कृत के हैं :)

भारतीय भाषाओं में संस्कृत शब्द

भाषाएं	संस्कृत शब्दों का प्रतिशत
1. असमी	47.5
2. बंगला	62.8
3. गुजराती	46.3
4. हिंदी	43.2
5. कन्नड़	61.7
6. कश्मीरी	7.2 (इतने कम प्रतिशत पर आश्चर्य है)
7. मलयालम	53.8
8. मराठी	46.6
9. उड़िया	50.7
10. पंजाबी	25.6
11. तमिल	13.5
12. तेलुगु	54.9

"जहां तक भारतीय भाषाओं की लिपि के लिए संस्कृत के योगदान का संबंध है, निम्नलिखित अभिमत महत्त्वपूर्ण है :

> भारतीय लिपियों का इतिहास रोचक है । एक प्रकार से यह कहा जा सकता है कि संस्कृत की ब्राह्मी लिपि का रूप अखिल भारतीय था । यह सबसे प्राचीन लिपि है जिसका हिंदुस्तान मे सर्वाधिक प्रयोग होता था और जिससे परवर्ती लिपियों (द्रविड़ परिवार की लिपियां भी इसमें शामिल हैं) की मिली-जुली उत्पत्ति हुई । ब्राह्मी के अतिरिक्त खरोष्ठी लिपि भी थी, जिसका इस्तेमाल उत्तर पश्चिम भारत मे एक विशेष काल तक ही सीमित था । ऐसा माना जाता है कि खरोष्ठी और ब्राह्मी दोनों हिंदुस्तान में सिमिटक स्रोत से व्यापारियों के माध्यम से आईं । संस्कृत के व्याकरणा-

चार्यो ने ब्राह्मी को अपनाया जिसके उत्तरी प्रकार से नागरी और अन्य आधुनिक किस्में उपजी, और उसके दक्षिणी प्रकार, अर्थात् पल्लव ग्रथ, से दक्षिणी लिपियो का आविर्भाव हुआ।

सस्कृत का साहित्य बहुत प्रतिष्ठित है। वेदों के अतिरिक्त, जो भारतीय आर्य जाति के प्राचीनतम ग्रथ है, सस्कृत मे अनेक महान् ग्रथ उपलब्ध हैं। इनमे से कुछ एक के नाम इस प्रकार हैं सहिता, ब्राह्मण, आरण्यक, उपनिषद्, वेदाग, सूत्र, रामायण और महाभारत जैसे महाकाव्य, पुराण, तात्र ग्रथ, महाकवि कालिदास (जिन्हे भारत का शेक्सपियर भी कहा जाता है) की रचनाए एव काव्य, दशन, गणित, शब्द कोष, छद और व्याकरण ग्रथ। सस्कृत मे वैज्ञानिक एव तकनीकी साहित्य का भी अभाव नही है। यद्यपि सस्कृत मे हिंदू धर्म के आदि तथा प्राचीन ग्रथो की प्रचुरता है, तथापि इस भाषा मे ऐहिक साहित्य का भी बडा भडार है। जेड ए अहमद कहते है

"निस्सदेह, सस्कृत मे काफी ऐसा साहित्य है जिसका धर्म के साथ कोई सबध नही है और जिसमे सभी जातियो के लोग लाभान्वित हो सकते हैं चाहे वे हिंदू धर्म के विरोधी या इससे घृणा करने वाले ही क्यो न हो। यद्यपि अग्रेज ईसाई हैं, लेकिन वे यूनानी और लातीनी भाषाए परिश्रम से सीखते हैं। वे ऐसा कभी नही सोचते कि इन भाषाओ के पढने से ईसाई धर्म को कोई खतरा हो सकता है। सस्कृत की ओर मुसलमानो का भी यही दृष्टिकोण होना चाहिए। क्या सस्कृत भारत के हिंदुओ, मुसलमानो और ईसाइयो के पुरखों की भाषा नही है?[17]

दक्षिण भारतीय भाषाओ की विषयवस्तु को भी सस्कृत की पर्याप्त देन है। ये सभी साहित्य सस्कृत के अत्यत आभारी हैं, जिसके स्पर्श से द्रविड भाषाए स्थानीय बोलियो के स्तर से उठकर साहित्यिक भाषाओ के स्तर पर पहुच गई।[18]

4000 वर्ष के अपने इतिहास मे इस भाषा ने भारतीय उपमहाद्वीप की सभी भाषाओ एव उपभाषाओ को प्रभावित किया है। इसका साहित्य विभिन्न लिपियो मे सजोया और पढा गया है, जिससे इस भाषा का अखिल भारतीय रूप और अधिक उभरा है।

10 सिंधी

सिंधी नाम का उद्गम स्रोत महान सिंधु नदी है, जो 1947 ई मे भारत के विभाजन के बाद पाकिस्तान के हिस्से मे आई। प्राचीन ऐतिहासिक कृतियो से

मालूम होता है कि आज के पाकिस्तान की भूमि पर किसी समय गांधार, कैकेय और सैंधव नाम के तीन राज्य थे। सिवुओं और सौवीर का राज्य सिंध नदी के दोनों ओर 29° अक्षांश पर सागर तट की ओर स्थित था, और यहां सिंधी भाषा बोली जाती थी। "लगभग 4000 वर्ष पूर्व, प्राचीन आर्य लोगों के घरों और मोहनजोदड़ो के बाजारों में जो भाषा बोली जाती थी, उसका नाम है सिंधी प्राकृत और यह आधुनिक सिंधी का मूल आधार है। अपभ्रंश की स्थिति से गुजरने के पश्चात् आधुनिक सिंधी का आविर्भाव 1000 ई. तक हो चुका था।"[19]

संस्कृत को छोड़कर आठवीं अनुसूची की भाषाओं मे सिंधी सबसे कम लोगों द्वारा बोली जाती है। 16 8 लाख लोग ही इसे बोलते है। फिर भी यह गिनती सेंट्रल अफ्रीका गणराज्य की आबादी से अधिक है।

सिंधी का साहित्य बहुत विपुल व व्यापक नहीं है। इसमें व्राड़ अपभ्रंश के गुण अब भी विद्यमान है। यद्यपि अरबी और फ़ारसी बोलने वाले लोग व्राचड़ प्रदेश पर सत्तारूढ़ रहे, तथापि सिंधी के प्राकृत रूप की मौलिकता और शुद्धता इस भाषा मे बनी रही। इसे देवनागरी और फ़ारसी, दोनों लिपियों, में लिखा जाता है। फ़ारसी लिपि मध्ययुगीन बादशाहों के प्रभाव का परिणाम है। जिया झारोको (कविताएं) महाकवि शाह अब्दुल लतीफ़ का 'शाह-जो-रिसालो', 'हुनाजे आतम जो मौत' (उपन्यास), 'प्यार जी प्यास' (उपन्यास), 'अपराजिता' (कहानियां) सिंधी भाषा की श्रेष्ठ रचनाओं में से हैं।

11. उर्दू

उर्दू की उत्पत्ति और परवरिश कई सौ साल पूर्व हिंदुस्तान मे ही हुई, सभवतः सुलतानों के राज्यकाल में और उत्तर भारत के फौजी बाजारों में। 'उर्दू' तुर्की भाषा का शब्द है, जिसका अर्थ है 'फ़ौजी कैम्प'। उन्नीसवी शताब्दी में उर्दू साहित्य में बहुत वृद्धि हुई···केवल अरबी, फारसी और संस्कृत शब्दावली, ख़ास तौर से संज्ञा और विशेषण ने ही इसे समृद्ध नही बनाया, अपितु हिंदी भाषा भाषी क्षेत्रों की बोलियों ने इसे साहित्यिक रूप देने, इसमें आकर्षण लाने और इसे सशक्त बनाने में बहुत योगदान किया है।[20]

उर्दू शब्द भंडार के अवयवों का एक अनुमान इस प्रकार है। यह अनुमान उर्दू के प्रसिद्ध शब्दकोष 'फ़रहंग-ए-आसफ़िया' के आधार पर है, जो लगभग एक सौ साल पुराना है, और जिसमें 54,000 शब्द हैं।[21]

हिंदी की भांति उर्दू की जड भी शौरसेनी और अपभ्रंश में है। इसीलिए कुछ विद्वान उर्दू को हिंदी की एक शैली मात्र मानते है :

वस्तुतः यह हिंदी ही है, जो आर्य परिवार की एक भाषा है, और जिसमें ढेर सारे फ़ारसी, अरबी एवं तुर्की शब्दों का समावेश हो गया है। इस घुसपैठ से भाषा के मूल रूप में कोई परिवर्तन नहीं आया और न ही इस पर कोई प्रभाव पड़ा है। स्वरों तथा विभक्तियों की दृष्टि से अब भी यह शुद्ध आर्य भाषा है। -

उर्दू शब्द भंडार के अवयव

(क)	(ख)	(ग)
मूल भाषा	उर्दू में मूल भाषा के शब्दों की संख्या	(ख) कुल उर्दू शब्द भंडार का प्रतिशत में
1 हिंदी (खड़ी बोली, ब्रज, अवधी और हिंदी की अन्य उपभाषाएं शामिल करके)	39,000	72 2
2 अरबी	7,600	14 1
3 फ़ारसी	6,400	11 8
4 संस्कृत	800	1 5
5 अंग्रेज़ी, पुर्तगाली, फ्रांसीसी तथा अन्य विदेशी भाषाएं	200	0 4
कुल	54,000	100 0

उन्नीसवीं शताब्दी के बाद, अन्य कारणों के अलावा, ऐतिहासिक कारणों ने भी इसका रुख अरबी और फ़ारसी की ओर अधिक कर दिया

ऐसी विचारधारा चलने लगी कि फारसी के लोप के कारण जो रिक्तता उत्पन्न हो गई है उसे उर्दू से पूरा किया जाए। ऐसी आवाज़ भी सुनाई पड़ी कि लखनऊ (जो उर्दू का एक महान केंद्र था) की गलियों को फारस के इस्फ़हान की गलियों में बदल दिया जाए। इस प्रकार उन्नीसवीं शताब्दी में एक ऐसी हवा चल पड़ी जिससे उर्दू भाषा फ़ारसी एवं अरबी शब्द और संस्कृति का निधान बन गई।[3]

आज उर्दू भारत की एक ममृद्ध, सशक्त एवं श्रेष्ठ भाषाओ मे से है। कवि सम्मेलनों, कव्वालियों, मुशायरो और अनेक उच्चकोटि की साहित्यिक कृतियो के कारण यह बहुत लोकप्रिय बन गई है। इसकी लिपि फारसी है। देश मे इसके बोलने वालों की संख्या 286.1 लाख है। इस प्रकार भाषा भाषियों की गिनती के आधार पर आठवी अनुसूची की भाषाओ मे इसका छठा स्थान है।

द्रविड़ भाषाएं

12. कन्नड़

कन्नड़ अथवा 'कर्नड' का अर्थ है 'श्याम देश'। द्रविड़ शब्द 'कर' का अर्थ है 'काला' और 'नाडु का अर्थ है 'देश'। जहां यह भाषा बोली जाती है, वहा की मिट्टी (कपास के उपयुक्त) काली है। अत इस प्रकार भाषा का ऐसा नामकरण हो गया।

कन्नड़ भाषा बोलने वालों की संख्या 217 1 लाख है, जो ग्वाटेमाला जैसे चार देशो की जनसंख्या से अधिक है। यह गिनती अफ़गानिस्तान एवं हांगकांग की संयुक्त आबादी से भी अधिक है।

कन्नड़ लिपि का स्रोत ब्राह्मी लिपि है। इस लिपि का जन्म उन्नीसवी शताब्दी में हुआ, और इसका श्रेय ईसाई प्रचारकों को है। यह लिपि तेलुगु तथा तमिल भाषा की लिपियों से मिलती जुलती है। इस लिपि में सर्वप्रथम मुद्रित पुस्तक बाइबल है। प्राचीन काल मे शलाका के साथ पत्तियों पर लिखने की प्रथा थी, इसलिए वर्णो को वक्र रूप में लिखा जाता था, ताकि उनके तंतु कही फट न जाएं।

भारतीय भाषाओं में कन्नड का सम्माननीय स्थान है। इसमें इतिहास, समाजशास्त्र एवं विज्ञान साहित्य की काफी बड़ी निधि है। राजदरबार से भी इस भाषा को संरक्षण प्राप्त हुआ और जैन, ब्राह्मण एवं वीर शैव कवियों से भी इसे बहुत पोषण मिला। 1955 ई. के बाद, 23 वर्षों में, द्रविड़ भाषाओ मे साहित्य अकादमी के सर्वाधिक पुरस्कार कन्नड़ भाषा की कृतियों को प्रदान किए गए हैं।

13. मलयालम

'मलय' शब्द का अर्थ है पहाड़ और मलयालम पहाड़ी क्षेत्र को कहते हैं। यद्यपि मलयालम इस क्षेत्र का नाम है, परंतु अब यह शब्द यहां की भाषा के लिए प्रयुक्त होता है। यह पश्चिम भारत के मालाबार तट पर स्थित केरल प्रदेश की राजभाषा है। तमिल के साथ इस भाषा के संबंध के विषय में

ग्रियर्सन कहते है "प्राचीन आय इसे तमिल से अभिन्न मानते थे। अपेक्षाकृत आधुनिक समय मे ही यह उससे अलग हुई है।[3]" ऐसा मत है कि यह पृथक्करण नवी शताब्दी म हुआ। मलयालम भाषा भाषियो की गिनती 219 4 लाख है, जो यूरोप मे रूमानिया की आबादी से अधिक है।

यह भारत की पर्याप्त परिष्कृत भाषाओ मे से है। सस्कृत से गृहीत शब्द इसम सुस्पष्ट हैं। केरल भाषा ने सस्कृत के सभी स्वनिम, जो द्रविड मे नही हैं, स्वीकार कर लिए है। साहित्यिक कृतियो मे सस्कृत और मलयालम के मिलेजुले रूप (जिसे 'मणीप्रवालम' कहते हैं) के इस्तेमाल का भी सफल प्रयत्न किया गया है।[5]

मलयालम ने सातवी शताब्दी मे वेट्टिलुट्टु लिपि को त्याग कर ग्रथलिपि को अपना लिया। केरल के मुसलमानो ने ग्रथलिपि को स्वीकार नही किया है, और अभी तक वे वेटिट्लुटु लिपि का प्रयोग करते हैं। इसका कारण इस वर्ग की साम्प्रदायिक भावनाओ से जोडा जाता है।

14 तेलुगु

यह आध्रप्रदेश की भाषा है। इसका प्रारभिक सबध पाचवी और छठी शताब्दी ईस्वी के शिलालेखो से जोडा जाता है।[26]

1961 ई की जनगणना के अनुसार भारतीय भाषाओ के बोलनेवालो मे तेलुगु भाषा भाषियो का द्वितीय स्थान था, परतु 1971 ई की जनगणना के अनुसार दूसरा स्थान बगला भाषा बोलने वालो का है। तेलुगु भाषा भाषी अब तीसरे स्थान पर है। भारत मे 447 5 लाख तेलुगु बोलने वाले हैं। यह सख्या कनाडा की आबादी से दुगुनी है।

तेलुगु भाषा के शब्द स्वरात होते हैं। इसलिए इस भाषा को 'पूरब की इटैलियन' भी कहा जाता है। इसकी लिपि ब्राह्मी मे निकली है। 1300 ई तक तेलुगु और कन्नड की एक ही लिपि थी। इसके बाद दोनो भाषाओ मे अलग अलग लिपि का विकास हुआ, परतु समानता के अवशेष अब भी दोनो लिपियो मे उपलब्ध है।

तेलुगु म व्याकरण, अलकार, छदशास्त्र, दर्शन एव नीति विषयक अनेक कृतिया हैं। उन्नीसवी शताब्दी तक ये कृतिया सस्कृत साहित्य की अनुगामी थी।

15 तमिल

यह भारत की प्राचीनतम भाषाओ मे से है। कुछ विद्वान् तमिल शब्द की व्युत्पत्ति सस्कृत शब्द द्रविड से इस प्रकार मानते हैं

द्रविड़—द्रामिल—दामिल—तामिल—तमिल

इसके बोलने वालों की संख्या 376.9 लाख है, जो तुर्की की जनसंख्या से अधिक है। आठवीं अनुसूची के भाषा भाषियों में तमिल बोलने वालों का स्थान पांचवां है। इससे पूर्व चार स्थान क्रमशः हिंदी, बंगला, तेलुगु एवं मराठी के हैं।

आचार्य विनोबा के अनुसार तमिल में 'अम्' 'अन्' के साथ अंत होने वाले शब्द संस्कृत से आए हैं (विनोबा भावे, देवनागरी सेमिनार, गांधी स्मारक निधि, नई दिल्ली, पृष्ठ 58)। संस्कृत की तमिल को देन प्रायः दर्शन एवं धर्म ग्रंथों के क्षेत्र में रही है। तमिल पर संस्कृत का प्रभाव सीमित रहा है, क्योंकि बीच में आंध्रप्रदेश और कर्नाटक ने बफ़र का काम किया। इस प्रकार आर्यों का प्रभाव तमिलनाडु तक बहुत अधिक मात्रा में न पहुंच सका :

> जहां तक लिपि का संबंध है, द्रविड़ भाषाओं के वर्णों का स्रोत उत्तर भारत की लिपियों में से वैसे है जैसे कि देवनागरी का। परंतु अब तक इनमें इतना संशोधन और परिवर्तन हो गया है कि अब यह पहचानना कठिन है कि इनका उत्तरी भाषा के वर्णों से कोई संबंध भी है अथवा नहीं। अब तीन मुख्य लिपियों का प्रयोग होता है: एक तमिल के लिए, एक मलयालम के लिए, और एक थोड़े बहुत परिवर्तन के साथ दो रूपों में, तेलुगु एवं कन्नड़ के लिए।[27]

तमिल का शब्द भंडार एवं साहित्य बहुत उच्च कोटि का है। यद्यपि तमिल भाषा दसवीं शताब्दी तक विकसित हो चुकी थी, परंतु आधुनिक तमिल साहित्य का प्रारंभ अठारहवीं शताब्दी से माना जाता है।

उपसंहार

उपर्युक्त पंद्रह भाषाओं का हिंदुस्तान में शताब्दियों मे सहअस्तित्व रहा है। इसलिए इनके बीच काफ़ी आदान प्रदान होता आया है। भारतीय आर्य भाषाओं का द्रविड़ीकरण और द्रविड़ भाषाओं का आर्यकरण होता रहा है। इसके अतिरिक्त मुंडा एवं भोट, बर्मी भाषाओं का प्रभाव भी इन भाषाओं पर स्पष्ट है। मसलन, अनेक वस्तुओं तथा स्थानों के नाम, जैसे पान, रूई, सूती कपड़ा, बांस, कोशल, कलिंग आदि शब्द आर्य भाषाओं में मुंडा भाषाओं से ही आए हैं। विभिन्न भाषाएं एक दूसरे से अलग होकर विकसित नहीं हुई हैं। परन्तु जब इन भाषाओं की समानता की चर्चा की जाती है, उनके बीच विद्यमान असमानताओं को भी नज़रअंदाज़ नहीं किया जा सकता।

द्रविड और भारतीय आर्य भाषाओं के बीच स्वर विज्ञान, आकृति विज्ञान एवं वाक्य विन्यास में भेद है। इसे स्पष्ट करने के लिए कुछ उदाहरण निम्नलिखित हैं

द्रविड भाषाओं में प्रायः चार या पांच स्पर्श वर्ण के जोड़े रहते हैं (कभी सघोष और कभी अघोष)। इनमें दंत्य एवं वर्त्स्य स्वरों का भी भेद रहता है। इसके प्रतिकूल भारतीय आर्य भाषाओं में सघोष एवं अघोष, महाप्राण अथवा महाप्राण से वियुक्त पांच वर्ग हैं। यद्यपि तेलुगु भाषा भाषियों को छोड़कर अन्य सभी द्रविड भाषाओं के बोलने वाले महाप्राण वर्णों को महाप्राण वियुक्त करके बोलते हैं, परंतु इस बात से इनकार नहीं किया जा सकता कि द्रविड भाषाओं में महाप्राण वर्ण भारतीय आर्य भाषाओं से आए हैं। द्रविड भाषाओं के कुछ मूर्धन्य वर्ण भारतीय आर्य भाषाओं में नहीं मिलते। द्रविड भाषाओं में 'ई' एवं 'औ' के लघु एवं दीर्घ रूपों में स्पष्ट अंतर किया जाता है, परंतु भारतीय आर्य भाषाओं में ऐसा नहीं होता। स्वर विज्ञान की दृष्टि से यह महत्त्वपूर्ण अंतर है।

हिंदी और अन्य बहुत सी भारतीय आर्य भाषाओं में दो लिंग होते हैं। भारतीय आर्य भाषाओं में लिंग भेद व्याकरणसम्मत होता है, जबकि द्रविड भाषाओं में यह अर्थसम्मत होता है। (एम एस इमानव इसे शाब्दिक-व्याकरणिक कहते हैं।)

जहां तक विभक्तियों का संबंध है, भारतीय आर्य भाषाओं में प्रत्यक्ष एवं परोक्ष मूलतः दो रूप हैं, जबकि द्रविड भाषाओं में कर्ता कारक एवं कर्म कारक में अलग अलग रूप रहते हैं।

द्रविड भाषाओं के अंतर्गत सर्वनामों के जितने रूप हैं, भारतीय आर्य भाषाओं में वे नहीं मिलते। उत्तम पुरुष बहुवचन के लिए सम्मिलित एवं पृथक् दोनों रूप विद्यमान हैं।

भारतीय आर्य भाषाओं में संख्याओं के उच्चारण में पहले इकाई के अंक को बोलते हैं और उसके बाद दहाई के अंक को। द्रविड भाषाओं में इसके विपरीत दहाई के अंक को बोलने के बाद इकाई के अंक को बोला जाता है।

गोंडी को छोड़, किसी भी द्रविड भाषा में विशेषण पुरुष, वचन एवं लिंग के अनुसार नहीं बदलता। ऐसा माना जाता है कि इसका कारण द्रविड भाषाओं पर भारतीय आर्य भाषाओं का प्रभाव है।

संस्कृत का भी दक्षिण की भाषाओं पर बहुत प्रभाव पड़ा, जो भारतीय आर्य संस्कृति और हिंदू धर्म की भाषा रही है। इन भाषाओं ने संस्कृत से बहुत शब्द उधार लिए हैं। यह बात सभी द्रविड भाषाओं पर लागू होती है, परंतु मलयालम में तो एक मणीप्रवालम (लीलातिलकम् में) नाम की शैली भी

चली जिसमें आधी संस्कृत और आधी मलयालम होती थी। द्रविड़ भाषाओं ने हज़ारों संस्कृत शब्दों को अपना लिया है। शब्दों का यह प्रवाह केवल एक तरफ़ नहीं रहा है। भारतीय आर्य भाषाओं ने भी द्रविड भाषाओं से बहुत कुछ ग्रहण किया है। कहीं-कहीं पर तो यह आदान प्रदान इतना अधिक है कि दोनों परिवारों की मूल विशेषताओं का लोप तक हो गया है, और भाषा-गत विशेषताएं अभिमुखी हो गई हैं। इस क्षेत्र में आर. काल्डवैल, गी. यू. पोप, जे. व्लोच, एस. के चैटर्जी, एम. बी. इमेनियु, टी. बरों, एम एस. एंद्रानव आदि विद्वानों ने बहुत कार्य किया है। विद्वानों के बहुमत के अनुसार भारत को 'एक-भाषायी क्षेत्र' माना जा सकता है। इन भाषाओं का पारस्परिक प्रभाव केवल जातीय सीमाओं से ही आगे नहीं निकल गया, अपितु इस प्रक्रिया द्वारा कुछ ऐसी विशेषताओं का भी जन्म हुआ है जो इनमें से किसी भी भाषा परिवार में पहले मौजूद नहीं थी। अगर लेन देन की यह प्रक्रिया इस प्रकार जारी रही तो निस्संदेह कुछ सदियों के बाद भारतीय भाषाओं का जातीय आधार पर वर्गीकरण संभव नहीं होगा। इस संबंध में एम.एस. एंद्रानव का कहना है:

> पिछले साढ़े तीन हज़ार वर्षों में भारतीय आर्य भाषाओं ने अपनी कुछ विशेषताओं को त्याग दिया है, और इस प्रकार ये भाषाएं पूर्ण रूप से भारोपीय नहीं रह गई। आधुनिक द्रविड़ भाषाएं भी अपने प्राचीन रूप से काफ़ी दूर हट गई हैं, और भारतीय आर्य भाषाओं के निकट आ गई हैं। दोनों परिवारों में अनेक समान लक्षणों का प्रादुर्भाव हुआ है। यदि द्रविड़ तथा भारतीय आर्य भाषाओं का यही विकासक्रम रहा तो ऐसा मानना निराधार नहीं होगा कि भविष्य में इन भाषाओं के परस्पर भेद इनके और इनकी जननी भाषाओं के बीच भेदों से कम हो जाएंगे। हो सकता है कि भाषाओं में नवीन विकसित समान संरचना की प्रवृत्ति के फलस्वरूप एक नये भाषा परिवार का जन्म हो जाए, जो पूर्णरूपेण न तो द्रविड़ हो और न ही भारतीय आर्य।[28]

इस प्रकार यह स्पष्ट है कि भारत के दो मुख्य भाषा परिवारों में जहां अनेक भेद हैं वहां उनके बीच बहुत से समान लक्षण भी मौजूद हैं। इन समानताओं के कारण दोनों परिवारों के बोलने वाले लोगों को एक दूसरे की भाषा पढ़ने और समझने में सुविधा हो जाती है। इसलिए भारत की अनेक संपन्न भाषाओं में से एक सर्वस्वीकृत भाषा को चुनना यदि आसान काम नहीं है तो भी यह कार्य नामुमकिन नहीं है। आवश्यकता केवल इस बात की है कि नेता और जनता थोड़ी बुद्धिमत्ता से काम लें, मेहनत और साहस का दामन थामें और

देशप्रेम की भावनाओं को सामने रखते हुए और स्थिति की वास्तविकताओं के अनुकूल कार्य करते हुए शीघ्र किसी एक समुचित निर्णय पर पहुंचें।

संदर्भ और टिप्पणियां

1 देखिए परिशिष्ट I

2 भारत, भाषा-वार प्रांतों के आयोग की रिपोर्ट, नई दिल्ली, भारत सरकार, 1948 पृष्ठ 28

3 भारतीय भाषाओं के बोलने वाले लोगों की संसार के विभिन्न देशों की जनसंख्या के साथ तुलना करने के लिए देखिए, परिशिष्ट I इस परिशिष्ट में सभी संख्याएं या तो 1971 की वास्तविक अथवा अनुमानित हैं ये संख्याएं 1973 की संयुक्तराष्ट्र द्वारा प्रकाशित जनसंख्या संबंधी 'डेमोग्राफिक इयर बुक' से ली गई हैं

4 एनसाइक्लोपीडिया अमेरिकाना, 1956, ग्रंथ 2, पृष्ठ 411

5 एनसाइक्लोपीडिया ब्रिटेनिका, 1953, ग्रंथ 2, पृष्ठ 553

6 ग्रियर्सन, जी ए, लिंग्विस्टिक सर्वे ऑफ इंडिया, दिल्ली, मोतीलाल बनारसीदास 1967, पृष्ठ 568, ग्रंथ 1, भाग I भूमिका, पृष्ठ 22

7 एनसाइक्लोपीडिया ब्रिटेनिका, 1956 ग्रंथ III, पृष्ठ 513-514

8 ग्रियर्सन, जी ए लिंग्विस्टिक सर्वे ऑफ इंडिया, दिल्ली मोतीलाल बनारसीदास 1968, पृष्ठ 61

9 शर्मा सरोजिनी, गवेषणा, आगरा केंद्रीय हिंदी संस्थान, 1972 पृष्ठ 95-100

10 भारतीय आर्य भाषाओं के बोलने वालों की जनगणना के अस्थायी एवं अंतिम आंकड़ों में जैसे कि परिशिष्ट I के विवरण I एवं II से विदित होगा कुछ अंतर है, परंतु इस अंतर से इस अध्याय के निष्कर्षों में कोई फर्क नहीं पड़ता

11 ग्रियर्सन जी ए लिंग्विस्टिक सर्वे ऑफ इंडिया दिल्ली मोतीलाल बनारसीदास 1968 ग्रंथ 6, भारतीय आर्य परिवार मध्यस्थ ग्रुप पृष्ठ 9-13

12 पुष्प, पी एन, लैंग्विज ऑफ इंडिया, ए कलेडियस्कोपिक सर्वे पृष्ठ 45

13 एनसाइक्लोपीडिया अमेरिकाना, 1956 ग्रंथ 16, पृष्ठ 312

14 देखिए परिशिष्ट II

15 यह अनुमान भारत सरकार के शिक्षा मंत्रालय द्वारा प्रकाशित 'परिवर्धित नागरी' पुस्तक में संविधान के अनुच्छेद 351 के अनुवाद पर आधारित है पृष्ठ 16-40 में संस्कृत शब्दों का प्रतिशत अनुवाद में दिए गए संस्कृत शब्दों को उस अंश में दिए गए कुल शब्दों से भाग करके निकाला गया है

16 राघवन, वी.; लैंगुजिज ऑफ इंडिया, ए. कैलेडियस्कोपिक सर्वे, पृष्ठ 61-62

17. अहमद, जेड. ए. (संकलित) ; नेशनल लैंगुइज फार इंडिया, ए सिंपोजियम, इलाहाबाद, किताबिस्तान, 1941, पृष्ठ 108

18 नीलकांत शास्त्री, के. ए ; हिस्ट्री ऑफ साउथ इंडिया, लंदन, आक्सफोर्ड युनिवर्सिटी प्रेस, 1955, पृष्ठ 327

19. जयरामदास दौलतराम ; लैंगुजिज ऑफ इंडिया, 1968, पृष्ठ 63-65,

20 मकबूल अहमद, एस ; लैंगुइज सोसाइटी इन इंडिया प्रोसीडिंग्स ऑफ ए सेमिनार, शिमला, इन इंडियन इंस्टिट्यूट ऑफ एडवान्स्ड स्टडी, 1969, पृष्ठ 147

21 फयाज ग्वालियरी; उर्दू जुबान, उर्दू साप्ताहिक 'हमारी जुबान' में प्रकाशित, अगस्त 1, 1975, दिल्ली, अंजुमन तरक्की उर्दू, अगस्त 1975, पृष्ठ 1

22. एनसाइक्लोपीडिया अमेरिकना, 1956, ग्रंथ 27, पृष्ठ 59.

23. भारत, संविधान सभा की बहसें 'कांस्टिट्यूएंट एसेंबली डिबेट्स', नई दिल्ली, कांस्टिट्यूएंट एसेंबली, 1949, ग्रंथ 9, पृष्ठ 1460,

24. ग्रियर्सन, जी ए ; लिंगुस्टिक सर्वे ऑफ इंडिया दिल्ली, मोतीलाल बनारसीदास, 1967, ग्रंथ 4.

25. कुजन्नी राजा ; लैंगुइजिज ऑफ इंडिया, पृष्ठ 48

26. नीलकांत शास्त्री के. ए. ; हिस्ट्री ऑफ साउथ इंडिया, लंदन, आक्सफोर्ड यूनिवर्सिटी प्रेस, 1955, पृष्ठ 387.

27. एनसाइक्लोपीडिया ब्रिटेनिका, 1965, ग्रंथ 7, पृष्ठ 655

28 एंद्रानोव, एस. एस. ; द्राविडियन लैंगुजिज, मास्को नौका प्रकाशन गृह, 1970, पृष्ठ 194

अध्याय दो

सविधान सभा का निर्णय

15 अगस्त, 1947 ई. भारत के लिए एक नये युग के समारभ का द्योतक है। इस दिन वर्षों की दासता का अत हुआ और देश आज़ाद हो गया। स्वतन्त्रता के साथ जहा एक ओर नई उम्मीदो की लहर दौडी, दूसरी ओर अनेक राजनीतिक, आर्थिक, सामाजिक एव सास्कृतिक समस्याए सामने आ गईं, जिनके हल ढूढने का दायित्व अब भारतवासियो के कधो पर आ गया। इनमे से एक समस्या राजभाषा की भी थी। भारत के सविधान निर्माताओ को एक ऐसी भाषा का सघ की भाषा के लिए चुनना था जो भारतवासियों को मान्य हो। राजभाषा के प्रश्न पर सविधान सभा मे 12 सितबर, 1949 ई. से 14 सितबर, 1949 ई. तक चर्चा हुई। इस प्रश्न पर बोलने के लिए सभा के इतने अधिक सदस्य उत्सुक थे कि अध्यक्ष को इस बहस के लिए निश्चित अवधि से नौ घटे अधिक देने पडे। भाषा का प्रश्न सभी सदस्यो के लिए महत्त्वपूर्ण था, अत सविधान सभा के अध्यक्ष डा. राजेंद्र प्रसाद ने प्रातो का प्रतिनिधित्व और विषय के सभी पहलुओ को ध्यान मे रखते हुए, हर वर्ग के प्रतिनिधियो को अपने विचार व्यक्त करने के लिए अवसर देने की कोशिश की।[1]

बहस के शुरू होने से पूर्व अध्यक्ष ने सदस्यो को सावधान करते हुए कहा

> सविधान की कोई अन्य धारा ऐसी नही है जो (भाषा की तरह) हर दिन हर पहर या, कहा जा सकता है, हर क्षण अमल मे लाई जाएगी। सदस्यो को यह याद रखना होगा कि बहस मे बाल की खाल निकालने मे कोई लाभ नही होगा। इस सदन का फैसला समस्त देश के लिए मान्य होना चाहिए। भले ही कोई निर्णय बहुमत से पारित हो जाए, यदि वह उत्तर या दक्षिण में जनसाधारण के किसी भी बहुत बडे वर्ग को स्वीकार

नहीं होगा, तो संविधान को कार्यान्वित करने में बड़ी कठिनाई पैदा होगी।[2]

इस विषय पर विभिन्न राजनीतिक पार्टियों के बीच और हर पार्टी के सदस्यों में आपस में काफ़ी बहस हुई। संविधान सभा में 12 सितंबर, 1949 ई. से पूर्व भी इस विषय पर चर्चा शुरू करने का कई बार प्रयत्न किया गया था, परंतु हर बार वातावरण इतना उत्तेजनापूर्ण हो जाता था कि इस प्रश्न पर बहस को स्थगित करना पड़ता। जब संविधान सभा की कालावधि समाप्त होने को आई, तो इस विषय पर विचार करना और कुछ निर्णय लेना अनिवार्य हो गया। कांग्रेस दल के अंदर भी, जिसका संविधान सभा में बहुमत था, इस विषय पर काफ़ी मतभेद था। राजभाषा संबंधी 'मुंशी-आयंगर मसौदे' पर विचार करने के लिए 2 सितंबर, 1949 ई. को कांग्रेस दल की बैठक हुई। इस बात पर भी दो रायें थीं कि प्रस्ताव प्रारूप-समिति की ओर से सदन के सामने लाया जाए अथवा सदस्यों द्वारा उनकी निजी हैसियत से। प्रत्येक पक्ष में 70 मत थे। अंततोगत्वा, अंबेडकर, आयंगर और मुंशी ने यह प्रस्ताव व्यक्तिगत हैसियत से सदन में पेश किया।[3]

राजभाषा संबंधी 343 से 351 तक के अनुच्छेद भारतीय संविधान के XVII भाग में समाविष्ट हैं। ये अनुच्छेद निम्न चार अध्यायों में विभक्त हैं :

1. संघ की भाषा
2. प्रादेशिक भाषाएं
3. उच्चतम न्यायालय, उच्च न्यायालयों आदि की भाषा
4 विशेष निदेश।

संविधान सभा की बहस मुख्यतया अनुच्छेद 343 पर ही केंद्रित रही। इस अनुच्छेद की निम्नलिखित चार विशेषताएं हैं। संघ की राजभाषा हिंदी और इसकी लिपि देवनागरी होगी, राजकाज के कामों में भारतीय अंकों के अंतर्राष्ट्रीय रूप का प्रयोग होगा और इन सब निदेशों के बावजूद भारतीय संविधान के लागू होने से पंद्रह वर्ष की अवधि तक अंग्रेज़ी भाषा का उन सभी कामों में प्रचलन रहेगा जिनके लिए आज़ादी से पूर्व इस भाषा का इस्तेमाल हो रहा था। इन चार विशेषताओं में से अंतिम दो पर वाद-विवाद के दौरान काफ़ी गर्मागर्मी रही।

13 सितंबर, 1949 ई. के दैनिक पत्र 'हिंदू' ने लिखा कि भाषा के प्रश्न पर बहस करने के लिए जब सभा की बैठक हुई तो सभा में सदस्यों की उपस्थिति अभूतपूर्व थी। इससे पता चलता है कि सदस्य इस प्रश्न को कितने महत्त्व की दृष्टि से देखते थे।

सघ की भाषा के लिए अग्रेजी हिंदी, हिंदोस्तानी, सस्कृत और बगला के लिए दावे पेश किए गए। प्रत्येक दावे के पक्ष मे जो दलीलें दी गई, सक्षेप मे वे इस प्रकार थी

अग्रेजी एन गोपालास्वामी आयगर का यद्यपि भाषा-प्रस्ताव का मसौदा तैयार करने मे हाथ था, तथापि अग्रेजी का पक्ष लेते हुए उन्होंने कहा "मेरे विचार मे इस भाषा द्वारा हमने अपनी स्वतत्रता प्राप्त की है और इसपर अपनी आजादी की इमारत खडी की है।"[4] नजीरुद्दीन अहमद ने अग्रेजी को 'ससार की भाषा' बताते हुए इसे देश की राजभाषा बनाए रखने की अपील की। अपने प्रस्ताव के समर्थन मे उन्होंने जापान का उदाहरण दिया और कहा

> उसने (जापान ने) स्वेच्छया अग्रेजी को राजभाषा बनाया। जापान के लोग अमरीका और अन्य देशो मे गए और अग्रेजी भाषा सीखी। इस भाषा के द्वारा विज्ञान, नवीन चिंतन और कार्यकलापो का पूरा ससार उनके सामने उपस्थित हो गया। यदि दुर्भाग्यवश जापान को पिछले महायुद्ध मे न कूदना पडता तो जापान आज दुनिया की सबसे बडी ताकत होता। इसलिए मेरा अनुरोध है कि अग्रेजी को अनिवार्य भाषा बनाया जाए। यह अनिवार्यता भले ही अरुचिकर हो, पर यह अपरिहार्य है।[5]

अग्रेजी के विरुद्ध कटुता का दृष्टिकोण त्यागने का अनुरोध करते हुए एग्लो-इडियन नेता, फ्रैंक एथनी ने कहा

> आखिर हमारे देशवासियो ने पिछले 200 वर्षों मे अग्रेजी भाषा का जो ज्ञान प्राप्त किया है, वह अतर्राष्ट्रीय कार्मो के लिए भारत की महान् निधि है। मैं बलपूर्वक यह कहने को तैयार हू कि अतर्राष्ट्रीय क्षेत्र मे भारत के अग्रणी होने के दावे का आधार एव अन्य देशो द्वारा इस प्रकार की मान्यता प्राप्त करने का एकमात्र कारण यही है कि विदेशो मे रहने वाले हमारे प्रतिनिधि अतर्राष्ट्रीय मचो पर अधिकारपूर्ण अग्रेजी भाषा के माध्यम से अपने विचार व्यक्त कर सकते हैं।

डा श्यामाप्रसाद मुकर्जी ने जहा एक ओर सघ की राजभाषा के लिए हिंदी की सिफारिश की, वहा दूसरी ओर उन्होंने देश के राष्ट्रीय जीवन के लिए अग्रेजी की आवश्यकता को न्यायसगत बताया। उनका विचार था कि भावी भारत

* सदस्यो के निर्वाचन-क्षेत्र इस अध्याय के अत मे परिशिष्ट में दिए गए हैं।

में अंग्रेज़ी के स्थान का निर्णय देश की ज़रूरतों के आधार पर होना चाहिए। उन्होंने कहा :

> आख़िर, इस भाषा के कारण ही हमें अनेक उपलब्धियां हुई हैं। इसके अतिरिक्त, देश के राजनीतिक संगठन और इसकी स्वतंत्रता प्राप्ति में अंग्रेज़ी का बहुत बड़ा हाथ है। इसके माध्यम से संसार के अनेक भागों की संस्कृति के द्वार हमारे लिए खुल गए। विज्ञान तथा प्रौद्योगिकी की जो प्राप्ति हमें अंग्रेज़ी पढ़ने से हुई, वह अंग्रेज़ी की जानकारी के बिना मुश्किल थी।[7]

कुछ इसी प्रकार की बात प्रधानमंत्री जवाहरलाल नेहरू ने भी कही। उनका कथन था : "हमें अवश्य अपनी भाषा का प्रयोग करना चाहिए···परंतु अंग्रेजी भी भारत की एक सर्वाधिक महत्त्वपूर्ण भाषा बनी रहनी चाहिए। क्यों ? जब अंग्रेज हिंदोस्तान मे आए, उस समय की अपेक्षा संसार में अंग्रेज़ी का महत्त्व आज कही अधिक है। निस्संदेह, अंग्रेजी एक अंतर्राष्ट्रीय्य भाषा के निकटतम है।"[8]

कुछ सदस्यों का मत उपर्युक्त मतों के बिलकुल विपरीत था। आयंगर के कथन का विरोध करते हुए आर. पी. धुलेकर ने कहा :

> केवल उन्हीं लोगों ने स्वतंत्रता-संग्राम में भाग लिया जिन्होंने अंग्रेज़ी को भुला दिया, जिनकी अंग्रेज़ी के प्रति अनास्था थी और जो यह समझते थे कि अंग्रेज़ी भाषा एक ऐसी विषैली वस्तु है जो देश का नाश कर देगी।[9]

लक्ष्मीनारायण साहू ने अंग्रेज़ी के समर्थकों की तुलना उस शराबी से की जो यह सोचता है कि 'नशाबंदी से उसकी मृत्यु हो जाएगी।'[10] अलगूराय शास्त्री ने अंग्रेज़ी का विरोध करते हुए कहा कि यह देश के किसी भी भाग के लोगों की भाषा नही है।[11] उन्होंने इस बात पर जोर दिया कि भारतवासियों ने यह भाषा स्वेच्छया नही सीखी थी। ब्रिटिश राज्य को सस्ते क्लर्क उपलब्ध कराने के प्रयोजन से तैयार की गई योजना के अधीन देशवासियों को यह भाषा मजबूरी में सीखनी पड़ी थी।

हिंदी : एन. गोपालास्वामी के प्रस्ताव प्रस्तुत करने के तुरंत बाद सेठ गोविंद दास ने कहा :

> दक्षिण भारत तथा अन्य अहिंदी भाषा भाषी क्षेत्रों से निर्वाचित सदस्यों के प्रति मैं अपना आभार प्रकट करता हूं कि उन्होंने कम से कम एक बात तो

> स्वीकार कर ली है कि देवनागरी लिपि मे हिंदी ही सघ की भाषा बन सकती है, चाहे इसे राष्ट्रीय भाषा का नाम दें अथवा राजभाषा का ।[13]

इन शब्दो मे स्पष्ट है कि जब भाषा के विषय पर विवाद आरम्भ हुआ तो यह लगभग निर्विरोध रूप मे स्वीकृत था कि आयगर-मुशाव, जिसमें हिंदी को सघ की राजभाषा का स्थान दिया गया था, समझौते के रूप म माना जा चुका था। इसलिए यदि हिंदी को राजभाषा बनाने के दावे के पक्ष मे ज्यादा दलीलें पेश नही की गई तो इसमे आश्चर्य की कोई बात नही है।

अग्रेजी के मुकाबले मे हिंदी के लिए दलील पश करते हुए अलगूराम शास्त्री ने कहा कि देशज भाषा स्वराज्य का अविच्छेद्य भाग है। काव्यमय ढग से उन्होंने कहा

> भाषा, भेष और भोजन है जिसका अपना प्यारा
> उस पर कभी नही चलने को औरो का चारा।

श्यामप्रसाद मुकर्जी ने हिंदी का समथन इस आधार पर किया कि यह बहुसख्यक जनता की भाषा है। उनका कथन था

> ऐसी बात नही है कि हिंदी निर्विवाद रूप मे देश की सर्वोत्तम भाषा हो। इसे राजभाषा मानने का सबमे बडा कारण यह है कि देश की अधिकतम जनता इसे समझती है। यदि भारत के 32 करोड लोगो मे से 14 करोड किसी एक भाषा को समझते हो, और यह भाषा क्रमिक विकास के भी समर्थ हो, तो हमारा कहना है कि इसे समस्त भारत के लिए स्वीकार कर लेना चाहिए, परतु यह सब कुछ इस प्रकार होना चाहिए कि इससे राज कार्य अथवा प्रशासनिक कामो के स्तर मे कोई अपकर्ष न आए और न ही किसी प्रकार म देश या इसकी भाषाओ की प्रगति मे कोई विघ्न पडे।[13]

की दास ने कहा, "हमे मालूम है कि देश म एक जन-भाषा होनी चाहिए। हम हिंदी को स्वीकार करते हैं।"[14] परतु इस सबध मे उन्होंने किसी प्रकार के अनुदार अथवा उतावले दृष्टिकोण की निंदा की। उनका कहना था

> हम भी इसान हैं और दाल-रोटी की समस्या हमारे लिए उतनी ही जरूरी है जितनी कि आदर्शवादिता को बनाए रखने की। इसके बाद यू.पी. मे जो सदस्य बोलेंगे, उन्हे बताना चाहिए कि इस समस्या का वे क्या हल सोच रहे हैं कि इस प्रक्रिया में उडीसा, असम, बगाल अथवा मद्रास, बबई के कुछ

भाग, मैसूर, ट्रावनकोर जैसे दक्षिणी भागो की अपेक्षा उनका प्रतिनिधित्व न हो जाए। इस समस्या का समाधान उन्हे खोजना होगा।[15]

जी. दुर्गाबाई देशमुख ने आयंगर प्रस्ताव को सर्वसम्मति से स्वीकार करने की सिफ़ारिश की। उन्होने केंद्रीय प्रांत (मध्य प्रदेश) अथवा सयुक्त प्रात (उत्तर प्रदेश) की छाप वाली हिंदी का विरोध किया। लक्ष्मीनारायण ने हिंदी का समर्थन किया और दुर्गाबाई देशमुख के कथन के एक आंशिक भाग का विरोध करते हुए कहा :

अध्यक्ष महोदय, मैं उत्कल निवासी हू, परतु मैं हिंदी को राष्ट्रभाषा बनाने का पूरा समर्थन करता हूं। हिंदी भाषा के साथ हमे इसका साहित्य भी ग्रहण करना होगा। यह मुमकिन नही है कि कोई भाषा तो अपना ली जाए और उसके साहित्य का परित्याग कर दिया जाए। ऐसी हिंदी का निर्माण नितांत असंभव है जिसमें ऐसे सरल शब्द हों जो देश के सभी जनसाधारण आसानी से समझ लें। यह स्थिति कभी नही आ सकती। जब हम अंग्रेजी बोलते हैं तो इस बात का ध्यान रखते है कि हम इसे ठीक बोलें न कि जैसे हमारी मर्जी आए वैसे बोलते जाएं।[16]

हिंदोस्तानी : तत्कालीन शिक्षा मंत्री तथा उर्दू, फारसी और अरबी के महान् पंडित मौलाना अबुल कलाम आज़ाद ने हिंदोस्तानी के लिए एक जोरदार दावा प्रस्तुत किया। उनके मतानुसार हिंदोस्तानी उर्दू और हिंदी के बीच बनी खाई को दूर कर देगी। साथ ही यह भाषा अधिक व्यापक है, क्योंकि इसमें उत्तर भारत की सभी भाषाएं समाहित हो जाती है।

हुकम सिंह ने पहले देवनागरी लिपि में हिंदी का समर्थन किया किंतु बाद में उन्होंने अपना मोर्चा बदल लिया। उन्होने कहा, "मैं उन लोगों मे से हू जिन्होंने हिंदी के समर्थकों के कट्टरपन और अनुदारता के दृष्टिकोण को देखकर इस भाषा को अपना समर्थन देना बंद कर दिया है।"[17]

परंतु कुछ लोगों के विचार मे हिंदोस्तानी राजभाषा का भार वहन करने के योग्य नही थी। उदाहरणार्थ, रविशकर शुक्ल ने हिंदोस्तानी का विरोध इसलिए किया कि यह भाषा हिंदी की एक शैली मात्र है और भाषा के स्वरूप का निश्चय उसके बोलने वाले करते हैं न कि संविधान सभाएं। प्रसिद्ध भाषा-शास्त्री रघुवीर ने कहा :

मैं न तो हिंदी का पक्ष ले रहा हूं और न उर्दू का। मैं आपके सामने केवल

नामकरण की समस्या प्रस्तुत कर रहा हूं। यदि यह मामला एक निष्पक्ष अधिकरण के सामने, जिसमें उच्च न्यायालय के न्यायाधीश हों, पेश करें और हिंदोस्तानी शब्द और इससे संबंधित सभी प्रमाण इस अधिकरण के सामने रख दें तो उनका सर्वसम्मत यही निर्णय होगा की हिंदोस्तानी उर्दू है। जब भिन्न-भिन्न लोगों के लिए हिंदोस्तानी शब्द का अभिप्राय अलग-अलग है, तो ऐसी स्थिति में एक निश्चित शब्दावली का प्रयोग करना ही उत्तम होगा।[18]

संस्कृत कुछ सदस्यों ने राजभाषा के लिए संस्कृत की हिमायत की। लक्ष्मीकांत मैत्र ने हिंदी की जगह संस्कृत की स्थापना और इसके फलस्वरूप आयंगर फार्मूले में अनुवर्ती परिवर्तनों की सिफारिश की। उनके विचारानुसार, "संसार की सभी भाषाओं की अपेक्षा संस्कृत की शब्दावली प्राचीनतम एवं प्रतिष्ठा-प्राप्त है चाहे तो हम संस्कृत को गहन दर्शन अथवा विज्ञान के अध्ययन में इस्तेमाल करें और चाहे तो सुगम साहित्य के लिए। सभी प्रकार की अर्थ-छटाएं इस भाषा के माध्यम द्वारा आसानी से व्यक्त की जा सकती हैं।[19] उनका अनुरोध था कि संस्कृत भारत की क्षेत्रीय नहीं, अपितु राष्ट्रीय निधि है और दक्षिण की भाषाएं भी संस्कृत के शब्द संग्रह से प्रचुर मात्रा में अलंकृत हुई हैं। उन्होंने आगे कहा कि यदि भाषा का विवाद इस प्रकार अवांछनीय स्थिति धारण न करता तो वे हिंदी के स्थान पर संस्कृत को आसीन करने की चर्चा न चलाते। इस संबंध में उन्होंने कहा

> मेरे विचार में सही बात यही है कि भाषा का संपूर्ण अध्याय या तो एकसाथ स्वीकार कर लिया जाए अथवा एकदम निकाल दिया जाए। इसका यह मतलब नहीं कि यत्र-तत्र थोड़े बहुत परिवर्तन नहीं किए जा सकते, परंतु यह बात हमें कदाचित् स्वीकार नहीं होगी कि पहले भाग को जिसमें यह निर्दिष्ट किया गया है कि 'देवनागरी लिपि में हिंदी' देश की भाषा होगी तो मान लिया जाए और शेष उपबंधों का बहिष्कार कर दिया जाए। हिंदी को इस शर्त पर मंजूर किया जा सकता है कि बाकी उपबंध भी मान लिए जाएंगे।[20]

कुलाधर छालिया ने भी इस प्रकार की द्विअर्थक बात कही। उन्होंने इस प्रकार कहा

> मेरा व्यक्तिगत मत है कि संस्कृत हमारी राष्ट्रीय भाषा होनी चाहिए।

> संस्कृत और भारत का विकास एकमाय हुआ है—हमारी संस्थाएं इस भाषा के साथ जुड़ी हुई है और हमारे जीवन मूल्यों के निर्माण में संस्कृत भाषा के दर्शन ग्रंथों का बहुत बड़ा हाथ है।[21]

उनका यह भी कथन था कि समझौते के तौर पर आयगर-फार्मूला स्वीकार करने मे उन्हें कोई आपत्ति नही होगी।

बंगाली : बंगाली को राजभाषा मानने का मामला भी किंचित् शिथिलता से ही प्रस्तुत किया गया, मानो इसके समर्थको को विश्वास नहीं था कि जो वे कहने जा रहे है उसमे काफी वज़न है। सतीशचंद्र सामंत ने बंगाली को राजभाषा बनाने के लिए अनुरोध किया। उन्होने कहा कि "अधिक संख्या में लोग हिंदी को समझते है, इस आधार पर हिंदी के पक्ष में निर्णय लेना सही नही होगा। इससे अधिक महत्त्वपूर्ण मानदंड कुछ और हैं। भारत की राजभाषा अंतर्राष्ट्रीय भाषा बनने के लिए समर्थ होनी चाहिए। बंगाली भाषा आक्सफ़ोर्ड, वार्सा आदि विश्वविद्यालयों मे पढ़ाई जाती है, हार्वर्ड (अमरीका) में रवीद्र पीठ है, और टैगोर का नाम सारी दुनिया जानती है।" यह सब कहने के उपरांत, अपने भाषण की समाप्ति से पूर्व उन्होंने कहा कि "मैंने आपके सम्मुख बंगाली की बात रखी है, परतु मैं यह भी कहना चाहूंगा कि व्यक्तिगत तौर पर मैं उस निर्णय को मानने को तैयार हूं जो इस सदन में बहुमत से लिया जाएगा।"[22]

लिपि : भाषा की तरह, लिपि के बारे में भी विचारों में काफ़ी मतभेद था। जिन तीन लिपियों के बीच होड़ थी, उनके नाम हैं : देवनागरी, रोमन एवं फ़ारसी अथवा उर्दू लिपि।

देवनागरी लिपि के गुणों पर विचार व्यक्त करते हुए अलगूराय शास्त्री ने कहा कि इसका आधार ध्वनिक है, इसलिए इसे लिखने में आसानी होती है। आशुलिपि के लिए भी यह आसान है। देवनागरी लिपि की रोमन और उर्दू लिपियो से तुलना करते हुए उन्होंने कहा :

> हम बच्चों की प्राथमिक शिक्षा 'अ', 'आ' आदि से प्रारंभ करते है। यदि हम 'अ', 'आ' ध्वनियों के लिए 'ए' (A) बोलें, तो यह अवैज्ञानिक होगा। इस तरीके से बच्चों का प्रशिक्षण सही नही हो सकता। 'ए', 'बी', 'सी', 'डी' (A, B, C, D) रोमन लिपि की वर्णमाला में है। हम बोलते तो हैं 'ए' (A) एवं 'बी' (B), परंतु हमारा तात्पर्य होता है 'अ' अथवा 'आ' या 'ब'। इसी प्रकार 'स' की ध्वनि के लिए 'सी' (C) का प्रयोग किया

जाता है। यह सब अवैज्ञानिक है। ऐसा कहना अनुपयुक्त नहीं होगा कि रोमन लिपि एक प्रकार वीभत्स लिपि है। रोमन लिपि में यह बहुत भारी त्रुटि है। उर्दू लिपि में भी उसी प्रकार की त्रुटियां हैं जैसे कि रोमन लिपि में। उर्दू में वर्णों और उनकी ध्वनियों में भिन्नता रहती है— 'अलिफ' (ا) का वर्ण 'अ' अथवा 'आ' ध्वनि के लिए प्रयुक्त किया जाता है। हम उच्चारण तो कर रहे होते हैं 'लाम' (ل), परन्तु हमारा अभिप्राय होता है 'ल'। यदि हमें 'लोकाट' शब्द लिखना हो तो इस शब्द में उर्दू के ये वर्ण आएंगे—'लाम', 'वाव', 'काफ', 'अलिफ' और 'त'। उर्दू के वर्णों का उनके उच्चारण से संबंध नहीं रहता।[23]

लिपि के मामले पर मौलाना अबुल कलाम आज़ाद का विचार इस प्रकार था

जहां तक लिपि का प्रश्न है, कांग्रेस का निर्णय था कि देवनागरी और उर्दू दोनों लिपियों को अंगीकार किया जाएगा। इस निर्णय पर यह आपत्ति उठाई गई कि यदि इस निर्णय के कारण दोनों लिपियों को सरकारी दफ्तरों की दस्तावेजों में बराबरी का दर्जा देना पड़े तो इसमें कई कठिनाइयां आएंगी। इसमें कर्मचारियों को अधिक काम करना पड़ेगा, और खर्चा भी बढ़ जाएगा। मैं इस दलील के वजन को समझता हूं, इसलिए मैं इस बात पर सहमत हो गया कि सरकारी दफ्तरों के लिए देवनागरी लिपि को अंगीकार कर लिया जाय।[24]

मौलाना आज़ाद ने यह भी कहा कि सभी सरकारी घोषणाएं, और विज्ञप्तियां आदि देवनागरी एवं उर्दू, दोनों लिपियों में प्रकाशित होनी चाहिए। मुहम्मद इस्माइल ने सरकारी कामकाज में देवनागरी तथा उर्दू, दोनों लिपियों के इस्तेमाल की सिफारिश की।

देवनागरी के अतिरिक्त संविधान में उर्दू लिपि को शामिल करने हेतु प्रस्तुत संशोधन के पक्ष में बारह वोट पड़े, इसलिए यह संशोधन अस्वीकार हो गया।

हुकम सिंह ने पहले तो देवनागरी लिपि में हिंदी भाषा का समर्थन किया था, परन्तु बाद में वे रोमन लिपि में हिंदोस्तानी भाषा के पक्ष में हो गए। रोमन लिपि के पक्ष में उनकी दलीलें इस प्रकार थीं

1 सशस्त्र सेना के जवान रोमन लिपि में हिंदोस्तानी भाषा को अनिवार्य रूप से पढ़ते हैं। उत्तर तथा दक्षिण के सभी लोग इसे आसानी से सीख लेते हैं।[25]

2. अपेक्षाकृत अधिकांश लोग रोमन लिपि में प्रवीण है ।
3. ग़ैरमामूली परिवर्तन के बिना देवनागरी लिपि मुद्रण के लिए अनुपयुक्त रहेगी ।
4. बिंदु तथा डैशों (डॉट एंड डैशेज़) के यत्रतत्र बढ़ाने के उपरांत रोमन लिपि हमारे मतलब के अनुकूल बन सकती है । ऐसा करने से स्थानों के नामों, रेल की समय-सारणियो एवं टेलिग्राफ कोडों मे कोई उलझन पैदा नही होगी ।
5. सबसे अधिक जरूरी बात यह है कि इसके द्वारा हम बाकी दुनिया के साथ जुड़ जाएगे । यह बात कहते समय मैं सुभाषचंद्र बोस के नाम का भी ज़िक्र करना चाहूंगा, क्योंकि उन्होंने भी इसी मत की वकालत की थी ।
6. मेरी अंतिम राय है कि सदन में जो तनातनी बनी हुई है, वह रोमन लिपि अपनाने से दूर हो जाएगी और हमारे दक्षिण के मित्र भी इस भाषा को सरलता से सीख सकेंगे ।[26]

जब तक यह समस्या विवादास्पद नही बनी थी, फ्रैंक एंथनी ने देवनागरी लिपि मे हिंदी का समर्थन किया था । उनका कथन था :

विवाद मे संकट की स्थिति होने से पूर्व मैं इसे स्वयंसिद्ध सत्य समझता था कि हिंदी ही देश की राष्ट्रभाषा होगी । उस समय लिपि के सबंध में मेरे मन मे किसी ओर कोई विशेष झुकाव उत्पन्न नही था ·· यह (देवनागरी) ससार की सरलतम लिपियों में से है ।[27]

रोमन लिपि में हिंदी लिखने का विरोध करते हुए लक्ष्मीनारायण साहू ने कहा :

जब हिंदी को रोमन लिपि में लिखा जाता है, तब इसे समझने और इसके उच्चारण मे कठिनाई होती है । अतः मेरा कहना है कि रोमन लिपि सर्वथा अस्वीकार्य है, यह बीभत्स और अवैज्ञानिक है । देवनागरी लिपि में लिखी हुई हिंदी ही सर्वाधिक वैज्ञानिक है और इसी का प्रयोग होना चाहिए ।

अंक : सरकारी कामकाज मे प्रयुक्त होने वाले अंकों के स्वरूप की समस्या पर सदन में जो वादविवाद हुआ, उसमें भी काफ़ी कटुता रही । भारतीय अंकों के अंतर्राष्ट्रीय स्वरूप के इस्तेमाल के पक्ष में एन. गोपालस्वामी आयंगर का कहना था :

> अंकों के इस स्वरूप का आविर्भाव हमारे देश में ही हुआ, इसलिए इन अंकों का सर्वत्र प्रयोग जारी रखने में हमें गर्व होना चाहिए और इसे राजभाषा के भावी ढांचे का अंश बनाना चाहिए। दूसरी बात यह है कि एक दो अपवादों को छोड़कर सारे संसार ने इन अंकों को अपना लिया है। ठीक यही होगा कि हम भी दुनिया के साथ कदम मिलाकर चलें। वास्तविक बात तो यह है कि सारी दुनिया हमारे साथ कदम मिलाकर चलने को पहले से ही तैयार है, क्योंकि हमने ही ये अंक संसार को दिए हैं। क्या हमें संसार में इस गौरवमय स्थान और इसके साथ मिलनेवाले अतिरिक्त लाभों को छोड़ देना चाहिए ?[29]

मौलाना आज़ाद ने अंकों की उत्पत्ति पर प्रकाश डालते हुए कहा

> आठवीं शताब्दी ईस्वी में जबकि द्वितीय अब्बासीदी खलीफा, अल मंसूर, की हकूमत थी, भारतीय आयुर्वेदिक डाक्टरों की एक टोली बगदाद पहुंची और अल मंसूर के दरबार में आई। इस दल का एक वैद्य खगोल-शास्त्र का विशेषज्ञ था और उसके पास ब्रह्मगुप्त की 'सिद्धांत' नाम की पुस्तक भी थी। जब अल मंसूर को इसका पता चला तो उसने अरब के एक दार्शनिक इब्राहीम अलफ़ाज़ारी को 'सिद्धांत' का भारतीय पंडित की मदद से अरबी में अनुवाद करने का आदेश दिया। ऐसा माना जाता है कि अरब के लोगों को इस अनुवाद द्वारा भारतीय अंकों की जानकारी हुई और जब उन्होंने इन अंकों के प्रचुर लाभ को देखा तो उन्होंने तत्काल इन्हें अपना लिया। लातीनी की भांति अरबी में भी अंकों के लिए कोई विशेष चिह्न नहीं थे। प्रत्येक संख्या और अंकों को शब्दों में लिखा जाता था। संक्षेप के लिए कुछ वर्णों का प्रयोग किया जाता था, और इन वर्णों का संख्यात्मक मूल्य होता था। इस परिस्थिति में भारतीय अंकों द्वारा गिनती के लिए उन्हें एक बहुत सरल प्रणाली उपलब्ध हो गई। तत्पश्चात् ये अंक अरबी अंकों के नाम से प्रसिद्ध हो गए। यूरोप पहुंचने के बाद उन्होंने वह अंतर्राष्ट्रीय स्वरूप धारण किया और आज हम इन्हें इस रूप में पाते हैं।[30]

देवनागरी अंकों के समर्थकों को संबोधित करते हुए जवाहरलाल नेहरू ने कहा

> यह ध्यान देने की बात है कि हिंदी अंकों को बहिष्कृत नहीं किया जा रहा है। इच्छानुसार कोई भी इनका प्रयोग कर सकता है, परंतु

> सरकारी काम में जहां बैंकिंग, लेखापरीक्षण, जनगणना और अन्य सभी प्रकार के आंकडे आते हैं, निस्संदेह अंतर्राष्ट्रीय अंकों का इस्तेमाल लाभप्रद होगा और इसके अतिरिक्त दूसरे भी बहुत से लाभ हैं। इन अंकों के द्वारा हमारे और दूसरे देशों के बीच व्यवधान नहीं रहेगा। यह एक बहुत बड़ी बात है क्योंकि विज्ञान के विकास और इसके अनुप्रयोग में अंकों का काफ़ी महत्त्व है।[31]

पुरुषोत्तम दास टंडन का कहना था कि देवनागरी अको को अस्वीकार करने से किसी को लाभ तो नहीं होगा, हां, इससे हिंदी को क्षति जरूर होगी। इसलिए समझौते के तौर पर उन्होंने अनुरोध किया कि पंद्रह वर्ष तक देवनागरी और अंतर्राष्ट्रीय अंकों को बनाए रखना चाहिए और फ़ैसला भावी पीढियों पर छोड़ देना चाहिए। एन. वी. गाडगिल का कहना था कि :

> सब संशोधनो और व्याख्यानों को देखने के बाद मैं इस नतीजे पर पहुंचा हूं कि मतभेद केवल अंकों पर ही है। यह एक अत्यंत दुखद निर्णय होगा यदि इस देश की एकता और एकप्राणता की आहुति अंकों की वेदी पर दे दी जाए। ˝

अतः उन्होंने हिंदी के समर्थकों से प्रार्थना की कि इस प्रश्न को वे भविष्य के निर्णय के लिए छोड़ दें।

जब संविधान सभा अंतर्राष्ट्रीय अंक स्वीकार करने का फ़ैसला कर चुकी तो अध्यक्ष, डा. राजेंद्रप्रसाद, ने कहा :

> मुझे आश्चर्य हो रहा था कि इस छोटे से मामले पर विचार करने के लिए आख़िर इतनी बहस और इतने समय का व्यय किस लिए? ले देकर ये अंक क्या हैं ? ये दस अंक है। जहां तक मुझे याद पड़ता है, इनमें से तीन अंक अंग्रेजी और हिंदी में एक समान है। ये है 2, 3, 0। मेरे विचार में और चार अंक शक्ल में सारूप हैं, यद्यपि अर्थ मे वे अलग हैं। उदाहरणार्थ, हिंदी का ४ अंग्रेज़ी के आठ (8) से बहुत मिलता-जुलता है। अंग्रेज़ी का 6 (छ.) हिंदी के ७ (सात) जैसा है, यद्यपि दोनो का मतलब अलग-अलग है। हिंदी के ९ का आधुनिक स्वरूप, जो महाराष्ट्र मे आया है, अंग्रेज़ी के 9 की भांति है। इस प्रकार अंग्रेज़ी और हिंदी के केवल दो या तीन अंक ऐसे रह जाते हैं जो आकार तथा अर्थ में असंबंधित हैं। अतः, जैसे कि कुछ सदस्यों ने कहा, इसमें छापेख़ाने की

> सुविधा या असुविधा का कोई प्रश्न नही। जहा तक मुद्रण की बात है, अंग्रेजी और हिंदी अंकों में लगभग कोई अंतर नही।[33]

डा राजेंद्र प्रसाद ने कहा कि राष्ट्रीय प्रश्नों का समाधान आदान प्रदान और त्याग की भावना से ही निकल सकता है। जब अहिंदी भाषा भाषी लोगों ने हिंदी भाषा और देवनागरी लिपि को स्वीकार कर लिया है तो हिंदी भाषा भाषी क्षेत्रों के लोगों को अहिंदी भाषा भाषी लोगों की इच्छानुसार अंतर्राष्ट्रीय अंकों को मानने में कोई आपत्ति नही होनी चाहिए।

कालावधि अंग्रेजी के स्थान पर हिंदी को राजभाषा बनाने के लिए संविधान सभा में क्या कालावधि निर्धारित की जाए, इस पर भी काफी विवाद हुआ। इस सिलसिले में सदस्यों ने जो मत प्रकट किए उन्हें तीन वर्गों में बांटा जा सकता है

(अ) अंग्रेजी के स्थान पर हिंदी को आसीन करने के लिए कोई कालावधि निश्चित नही की जाए।
(आ) अंग्रेजी के लिए पंद्रह वर्ष की अवधि बहुत लंबा पट्टा है।
(इ) प्रस्तावित पंद्रह वर्ष की अवधि उचित है और सदन द्वारा स्वीकार की जानी चाहिए।

करीमउद्दीन, अलगूराय शास्त्री और पी टी चक्को पहले मत के पक्ष में थे, परंतु हरएक का कारण अलग था। करीमउद्दीन का विचार था कि देश के विभाजन का ज़ख्म अभी ताज़ा है, संविधान सभा के सदस्यों का चुनाव सांप्रदायिक निर्वाचन वर्ग के आधार पर हुआ है, इसलिए समझदारी इसी में है कि भाषा के प्रश्न पर सोच-विचार स्थगित कर दिया जाए।[34] हो सकता है कि आगामी वर्षों में आपसी सहिष्णुता का वातावरण व्याप्त हो जाए और तब फारसी लिपि में उर्दू को भी संघ की भाषा मान लिया जाए। अलगूराय शास्त्री का कहना था कि कालावधि का नियत करना समस्या की तफसील में जाने वाली बात है, इसलिए इसे भावी पार्लियामेंट और निर्वाचित सरकार के लिए छोड़ देना चाहिए। पी टी चक्को का मत था कि भाषाओं का क्रमश विकास होता है और भाषा का निर्णय वोटों द्वारा नही किया जा सकता। उन्होंने आगे कहा, 'संभवत शेक्सपियर ने अंतिम रूप से इंग्लैंड की राष्ट्रीय भाषा का निर्णय कर दिया और इटली के लिए शायद दांते ने यह फैसला किया। मेरे विचार में भविष्य में कोई साहित्यिक प्रतिभा भारत की राष्ट्रभाषा का निर्णय इसी

प्रकार कर देगी।[35]

अंग्रेजी को पंद्रह वर्ष तक बनाए रखने के विचार की निंदा करते हुए, आर. वी. धुलेकर ने कहा कि इसे 'एक मिनट भी' राजभाषा नहीं रखना चाहिए। उन्होंने कहा :

> लार्ड मैकाले की प्रेतात्मा क्या कहेगी ? वह जरूर हम पर हसेगी और कहेगी—'ओल्ड जानी वाकर मे अभी काफी जान है।' और वह कहेगी—'हिंदोस्तानियो पर अंग्रेजी भाषा का इतना जादू है कि वे इसे पंद्रह वर्ष और बनाए रखेगे।' कुछ सदस्यों का कहना है कि यह बीस वर्ष तक बनी रहेगी और कुछ इस अवधि को पचास वर्ष बताते हैं और अभी कुछ लोगों का कहना है कि मालूम नहीं कि कब तक यह हमारे देश की राजभाषा बनी रहेगी।[36]

मौलाना आजाद जैसे सदस्यों का कहना था कि "यदि राष्ट्रीय भाषा जैसी महत्त्वपूर्ण समस्या का हल पंद्रह वर्ष मे मिल सके, तो हमे यह समझौता मान लेना चाहिए क्योंकि यह बहुत सस्ता सौदा होगा।" कृष्ण मूर्ति राव का कहना था कि भाषा सीखने में समय लगता है और यदि उत्तर के लोग दक्षिण की भाषा सीखे तो उन्हें पंद्रह वर्ष से कम समय नही लगेगा। जो रोम डीसूजा ने इस बात पर बल दिया कि सघ की भाषा केवल भारतीय ही नही सीखेंगे, अनेक विदेशियों को भी, जो भारत मे राजनयिक और वाणिज्य प्रतिनिधि है, यह भाषा सीखनी होगी, इसलिए पंद्रह साल का समय बहुत जरूरी है।

इस समस्या के दो और पहलुओं पर भी विवाद छिडा, यद्यपि उसके फलस्वरूप बिल के प्रारूप में कोई भी तब्दीली नही हुई। ये पहलू संविधान के अनुच्छेद 344 और 348 जो राजभाषा के सिलसिले मे आयोग और पार्लियामेंट कमेटी की नियुक्ति और उच्च एव उच्चतम न्यायालयों की भाषा आदि की ओर संकेत करते हैं।[37]

आयोग एवं ससदीय समिति की नियुक्ति का उद्देश्य ऐसी सिफारिशे करना था जिससे हिंदी का क्रमिक प्रयोग बढ़ाया जा सके। पुरुषोत्तमदास टंडन का कहना था कि इस उपबंध का परिणाम यह होगा कि पाच वर्ष तक हिंदी मे कोई काम नही हो सकेगा। अपनी बात जारी रखते हुए उन्होंने कहा कि आयोग और समिति को भी समय चाहिए, इस प्रकार हिंदी को लाने मे और देर लगेगी। ठीक इसके प्रतिकूल रामालिंगम चेट्टियार का विचार था कि पहले पाच वर्ष के बाद एक आयोग और फिर दस साल के बाद दूसरा आयोग नियुक्त करना पद्रह वर्ष की अवधि को रद्द करने का प्रयास है।

सविधान के अनुच्छेद 348 के अनुसार, जब तक पार्लियामेंट कोई दूसरा फैसला न ले ले, उच्चतम न्यायालय एव उच्च न्यायालयो की समस्त कार्यवाही और सभी विधानमडलो में प्रस्तुत किए जाने वाले बिलो और प्रस्तावो तथा प्रवर्तित होने वाले तमाम अध्यादेशों का प्रामाणिक मज़मून अंग्रेज़ी में होगा। आयगर का कहना था कि इन कामो के लिए अंग्रेज़ी पद्रह साल से अधिक समय तक बनी रहेगी, क्योंकि इस दृष्टि से हिंदी में अंग्रेज़ी की सी सूक्ष्मता नही है। पुरुषोत्तमदास ने इस प्रकार की प्रवृत्तियो को खेदजनक बताया और कहा कि "मेरे प्रात में ही, सभी बिलो और अधिनियमो का मूल मज़मून हिंदी भाषा में होता है।"[38] वे इस बात पर तो सहमत थे कि उच्चतम न्यायालय में अंग्रेज़ी में काम हो, परतु उनका कहना था कि जिन विधानमडलो एव उच्च न्यायालयो मे पहले से हिंदी के माध्यम से काम हो रहा है वहा स्थिति में कोई परिवर्तन नही होना चाहिए। सेठ गोविंददास ने भी सविधान के प्रारूप में इस अनुबध को प्रतिगामी कदम बताया। रविशकर शुक्ल इस बात के हामी थे कि पद्रह वर्ष की अवधि सर्वांगी रूप से बनाई रखी जानी चाहिए और न्यायालय और विधानमडल अपवाद नही होने चाहिए।

अंतर्विरोधपूर्ण समझौता

निरतर मेहनत, अभिलषित लक्ष्यो के त्याग और मेल-मिलाप की भावनाओं को अग्रवर्ती करने के उपरात ही समझौते का लगभग सर्वसम्मत प्रारूप तैयार हो सका। फिर भी, राजभाषा के अध्याय में जो अन्तर्विरोध निहित रहे, उनकी उपेक्षा नही की जा सकती। उदाहरण के तौर पर, अनुच्छेद 343(1) और 343 (2) में सुनिश्चित रूप से लिखा है कि सविधान के लागू होने के पद्रह वर्ष बाद से हिंदी हिंदुस्तान की राजभाषा होगी और अतर्राष्ट्रीय रूप में प्रचलित भारतीय अकों का इस्तेमाल होगा। परतु अनुच्छेद 343 (3) के अनुसार ससद को अधिकार दिया गया कि यदि वह चाहे तो विशेष कार्यों के लिए अंग्रेज़ी भाषा अथवा देवनागरी अको के प्रयोग के लिए कानून पास कर सकती है।

अनुच्छेद 344 (1) के अनुसार पाच वर्ष के बाद पहले आयोग और दस वर्ष के बाद दूसरे आयोग की नियुक्ति अनिवार्य थी, परतु तेरह वर्ष बाद कानून मत्री ए० के० सेन ने पार्लियामेंट में कहा कि (बाध्यकारी) 'शैल' शब्द का तात्पर्य इच्छासूचक 'मे' शब्द नहीं होता, इसलिए सविधान के अनुसार आयोग की नियुक्ति अनिवार्य नहीं है। सदस्यो ने इस व्याख्या का विरोध अवश्य किया, परतु तथ्य यही है कि दूसरे आयोग की नियुक्ति नहीं हुई।

अनुच्छेद 344 (6) के अनुसार ससदीय कमेटी, जिसके सघटन के बारे

में अनुच्छेद 344(4) में लिखा है, कि रिपोर्ट के उपरांत राष्ट्रपति राजभाषा के संबंध में आदेश जारी करेंगे। दूसरे शब्दों में इसका अर्थ यह हुआ कि राष्ट्रपति संविधान निर्माताओं के किसी या प्रत्येक निर्णय को एक तरफ़ रख सकते हैं।

इस प्रकार के अनेक उदाहरण दिये जा सकते हैं। यद्यपि हर समझौते में कुछ प्रतिवाद रहते हैं परन्तु इन व्याघातों में बहुत सा काम भावी पीढ़ियों के लिए रह गया। यह स्मरण रखना चाहिए कि इन अंतर्विरोधों का समावेश संविधान के अंतर्गत बहस के दौरान अभिव्यक्त विरोध विचारों को समन्वित करने के उद्देश्य से नहीं हुआ था, ये प्रतिवाद संसद के सामने प्रस्तुत किए गए मूल प्रारूप में अंतर्भूत थे। बहस के दौरान प्रारूप में बहुत परिवर्तन नहीं किए गए। आयंगर ने भी बहस के अंत के निकट कहा, "मेरी समझ के अनुसार केवल चार पांच तब्दीलियां करनी हैं। इनमें दो केवल शाब्दिक हैं। शेष दो या तीन में थोड़े तत्त्व की बात है।"[39]

जब संसद में बिल पारित हो चुका तो अध्यक्ष डा. राजेंद्र प्रसाद ने संसद को स्थगित करने से पूर्व सदस्यों को संबोधित करते हुए कहा, "हमने संभवतः उच्चतम बुद्धिमत्ता का निर्णय लिया है और मुझे खुशी है, और उम्मीद भी है कि आगामी पीढ़ियां इसके लिए हमारी कृतज्ञ होंगी।"[40] आज की स्थिति में इन शब्दों का मूल्यांकन वांछनीय होगा।

भाषा संबंधी कुछ धारणाएं

भाषा के संबंध में कुछ एक धारणाएं प्रचलित हैं। इनके बारे में भी विचार करना ठीक होगा, यद्यपि इस संबंध में वादविवाद मौजूदा संदर्भ में केवल शैक्षिक अर्थ ही रखता हो।

इस तरह की धारणा प्रचलित है कि यदि हिंदी के स्थान पर संस्कृत को राजभाषा चुन लिया जाता, तो उत्तर एवं दक्षिण के लोग इसे जल्दी निर्विरोध स्वीकार कर लेते। यह तथ्य छुपा नहीं है कि दो एक सदस्यों को छोड़ कर, जिन्होंने संस्कृत की थोड़ी बहुत हिमायत की, और किसी सदस्य ने भी संस्कृत के लिए आवाज नहीं उठाई। इस बात से सिद्ध हो जाता है कि इस प्रकार की कल्पना निर्मूल है।

एक धारणा यह भी है कि यदि आज़ादी के तुरंत बाद हिंदी को देश की राजभाषा बना दिया जाता तो राजभाषा की समस्या आसानी से हल हो जाती, क्योंकि उन दिनों देश-प्रेम और राष्ट्रीय भावनाओं की एक लहर चल रही थी और विघटनकारी प्रवृत्तियां, जो बाद में सामने आईं, उस समय अजन्मा थीं। संविधान सभा की बहस के अध्ययन के उपरांत इस धारणा की बुनियाद भी कमज़ोर दिखाई पड़ती है। डा. पी. सुब्बारायन ने बहस के दौरान जो कुछ

कहा, उससे इस शताब्दी के चौथे दशक में हिंदी के प्रति दक्षिण का जो प्रतिरोध था उसका अंदाजा हो सकता है। उनका कथन था

जब मैं मद्रास में शिक्षा मंत्री के पद पर था, और जब हिंदी हाई स्कूलों की पहली तीन कक्षाओं में अनिवार्य रूप से लागू की गई, यदि आपको उस समय की स्थिति का पता चले तो तभी आप अनुमान लगा सकेंगे कि मैं क्यों चिंतित हूं, और घर जाने से पूर्व मेरे लिए कुछ उपलब्ध करना क्यों जरूरी है। तीन मास तक हर सुबह जब मैं घर से बाहर जाता था तो एक ही नारा सुनाई पड़ता था, 'हिंदी मुर्दाबाद, तमिल जिंदाबाद। सुब्रायन हाय-हाय, राजगोपालाचारी हाय-हाय।' तीन महीने तक आकाश में केवल यही आवाज गूंजती रही। हमें मजबूर होकर दंड कानून संशोधन ऐक्ट, जिसका हमने अभी बहिष्कार किया है, का आश्रय लेना पड़ा।[41]

तीसरी धारणा, जिसका जिक्र कुछ वर्ष बाद मुस्लिम लीग पार्टी के नेता एम मुहम्मद इस्माइल ने 1967 ई में लोकसभा में किया, इस प्रकार है

कांग्रेस पार्टी ने भी हिंदी को राजभाषा केवल एक वोट के बहुमत से माना था। इस पर ओ पी त्यागी ने इस प्रकार कहा था, 'नहीं साहब, यह गलत बोल रहे हैं। लिपि के बारे में एक वोट से फैसला हुआ था। भाषा के बारे में सर्वसम्मति से हुआ था।' इस्माइल फिर भी अपनी बात पर अडिग रहे।[42]

अंकों के संबंध में निर्णय पर चर्चा करते हुए शिवाराव ने इसी प्रकार की स्थिति का वर्णन किया है। उन्होंने लिखा है

अततोगत्वा वोट पड़े। प्रत्येक पक्ष में 74 वोट थे। हिंदी के समर्थकों का दावा था कि जब गिनती शुरू हुई, उनके पक्ष में 75 वोट थे। फिर भी अंतिम निर्णय यही रहा कि इतने महत्त्वपूर्ण विषय पर इतने कम बहुमत से फैसला लेना बुद्धिमत्ता की बात नहीं होगी।[43]

इसलिए यह स्पष्ट है कि उस समय की स्थिति के अनुसार भाषा विधेयक पारित करना संविधान निर्माताओं के लिए बहुत भारी उपलब्धि भले ही रही हो, परंतु निरपेक्ष रूप में यह सफलता अति न्यून थी और आने वाली पीढ़ियों के लिए बहुत काम बाकी रह गया।

उपसंहार

बंगाली और संस्कृत भाषाओं के समर्थन में गिनेचुने लोगों द्वारा जो मंद आवाजें उठीं, यदि थोड़ी देर के लिए उन्हें भूल जाएं तो संविधान सभा के सदस्य भाषा के सवाल पर तीन शिविरों में बंटे दिखाई देते हैं। या तो वे राजभाषा पद के लिए हिंदी के समर्थक हैं, अथवा अंग्रेजी या हिंदोस्तानी के।

अंग्रेजी के समर्थकों का मत था कि अंग्रेजी द्वारा देश के एकीकरण और पुनर्जागरण में प्रचुर सहायता मिली। उन्होंने इस बात पर बल दिया कि यदि देश को आधुनिक विज्ञान, प्रौद्योगिकी और दूसरे क्षेत्रों में विदेशों द्वारा उपलब्ध ज्ञान से लाभान्वित होना है, तो भारत में अंग्रेजी के मौजूदा स्थान को बनाए रखना होगा। कुछ सदस्यों ने यह भी कहा कि अंतर्राष्ट्रीय मामलों में भारत की अगुआई विदेशों में हमारे प्रतिनिधियों द्वारा अंग्रेजी बोलने की प्रवीणता के साथ संबंधित है।

यह भी सिफारिश की गई कि देश में रोमन लिपि अपनाई जाए, क्योंकि इसमें मुद्रण की सुविधाएं अधिक हैं, और इसमें भारत को बाकी दुनिया से अपना संबंध जोड़ने में आसानी होगी। सदस्यों का कहना था कि अंग्रेजी के स्थान पर हिंदी लाने से सरकारी प्रशासन कौशल के घटने का भय है।

हिंदी के समर्थक राष्ट्रीय भावना के आधार पर इसे तुरत राजभाषा का स्थान देने के पक्ष में थे। उनके विचार में अंग्रेजी का स्थान बनाए रखना ब्रिटिश साम्राज्यवाद और देश की गुलामी के घाव की याद को बनाए रखने वाली बात है। उनका मत था कि हिंदी देश के सर्वाधिक लोगों की मातृभाषा है, इसलिए लोकतंत्रीय शासन प्रणाली के आधार पर भी इसे संघ की भाषा बनाना चाहिए।

यद्यपि हिंदोस्तानी का समर्थन मौलाना अबुल कलाम आजाद जैसे राष्ट्रीय राजनीतिक नेताओं ने किया, इस भाषा की पुष्टि करने वाले प्रायः उर्दू के उपासक ही थे, जो देश के विभाजन के उपरांत भारत में बहुत कम संख्या में रह गए थे। हिंदोस्तानी के समर्थकों का कहना था कि हिंदोस्तानी में सभी भाषाएं आ जाती हैं और इस भाषा से हिंदी-उर्दू का भेद समाप्त हो जाता है। हिंदोस्तानी के विपक्षियों का कहना था कि हिंदोस्तानी कहने को अलग भाषा है, पर वस्तुतः इसका उर्दू से अटूट रिश्ता है। कुछ सदस्यों का तो यह कहना था कि हिंदोस्तानी पृथक् भाषा न होकर हिंदी की एक शैली मात्र है, यद्यपि हिंदी के इतिहास की पुस्तकों में इस शैली का कहीं जिक्र तक नहीं मिलता है।

आश्चर्य की बात तो यह है कि हिंदी और अंग्रेजी के समर्थक प्रायः अपनी अपनी भाषा के गुणगान तक ही सीमित रह गए। उन्होंने अपने विपक्षियों द्वारा उठाए गए आक्षेपों के उत्तर देने की ओर ठीक से ध्यान नहीं दिया। उदाहरणार्थ,

जब अंग्रेजी के पक्ष में कहा गया कि यह भाषा आधुनिक ज्ञान भंडार की खिड़की है, तो प्रत्युत्तर में यह दलील दी जा सकती थी कि किसी भाषा को लाइब्रेरी-भाषा के तौर पर पढ़ना और उसे राजभाषा स्वीकार करना एक ही बात नहीं होगी। जहां तक अंतर्राष्ट्रीय क्षेत्र में देश के सम्मान का संबंध है, एक विदेशी भाषा इसका आधार नहीं हो सकती, अपेक्षाकृत इसके आधार देश की आर्थिक और प्रौद्योगिकीय योग्यता आदि के साधन होते हैं। इसी प्रकार हिंदी के विरोधियों ने यह प्रश्न नहीं उठाया कि इसके समर्थक राष्ट्र के लिए हिंदी के कौन-से ब्रांड की सिफारिश कर रहे हैं।

यह दुर्भाग्य की बात है कि आठवीं अनुसूची में सूचीगत भाषाओं के प्रोत्साहन के उपायों के बारे में संविधान सभा में कोई बहस न हो पाई। यह बहुत उचित होता यदि सभी भारतीय भाषाओं के विकास के संबंध में चर्चा की जाती। इस विषय पर भी विचार की आवश्यकता थी कि अनेक भारतीय भाषाओं के शब्द भंडार का विस्तार किस प्रकार से किया जाए। अनुवाद के कार्यक्रम (प्रोग्राम) पर भी सोच-विचार की आवश्यकता थी, क्योंकि इस कार्य से समस्त भारतीय संस्कृतियों एवं साहित्यों की वर्तमान निधि को संवर्धित किया जा सकता है। कम से कम कुछ सदस्यों से यह उम्मीद की जा सकती थी कि वे उस आधारिक संरचना की ओर इशारा करते जो संसार की विभिन्न लाइब्रेरी-भाषाओं में उपलब्ध ज्ञान को भारतीय भाषाओं में अनूदित करने के लिए वांछनीय है। निस्संदेह इन सब बातों को संविधान में लिखना जरूरी नहीं था, परंतु भाषा विकास के इन अनिवार्य पहलुओं की अवहेलना होना भी ठीक नहीं हुआ।

यद्यपि संविधान निर्माताओं ने समता, लोकतंत्र एवं समाजवादी प्रणाली की ओर अपने भाषणों में कई बार संकेत किया, परंतु किसी सदस्य ने भी अल्पसंख्यक वर्गों द्वारा बोली जाने वाली भाषाओं के विकास का प्रश्न नहीं उठाया। ऐसे कई अल्पसंख्यक समूह देश के अलग अलग भागों में रहते हैं जिनकी भाषाओं के लिपि-निर्माण के प्रश्न पर अभी तक विचार नहीं हुआ। इन सुदूरवर्ती लोगों में साक्षरता के प्रसार के लिए इनकी भाषाओं का लिपि-निर्माण करना अनिवार्य है, परंतु बहस इन सीमाओं से दूर दूर ही रह गई।

इस प्रकार हम देखते हैं कि जिस बहस से भारतीय भाषाओं के विकास एवं संवर्धन का एक नया अध्याय खुल सकता था, जो बहस भाषा के पंडितों का ध्यान लिपिरहित भाषाओं के लिए लिपि-निर्माण के कार्य की ओर आकृष्ट करती, और जिससे भाषा संबंधी नीति में अनेक नई दिशाएं खुल सकती थीं केवल हिंदी-अंग्रेजी राजनयिक मुक्केबाजी और प्रतिद्वंद्विता में ही खोई रह गई। यह खेद का विषय है कि यह द्वंद्व अनंत अनिर्णीत ही रहा, क्योंकि समय बहुत कम था और संविधान पारित करना था। यदि संविधान के राजभाषा संबंधी

अध्याय को भावी नीति संबंधी दस्तावेज़ की दृष्टि से देखा जाए तो अंकों के प्रश्न को छोड़कर, जिस विषय में वादविवाद द्वारा काफ़ी प्रकाश पड़ा, इस बहस से मंज़िल पर पहुचने का बहुत रास्ता तय न हो सका।

संदर्भ और टिप्पणियां

1 इंडिया, कनस्टिट्यूअंट असेंबली डिबेट्स, नई दिल्ली, कनस्टिट्यूअंट असेंबली, 1949, वाल्यूम 9, न 33, सितंबर 13. 1949, पृष्ठ 1426 और 1365 (संविधान सभा की बहस, ग्रंथ 9)

2. इंडिया, कनस्टिट्यूअंट असेंबली डिबेट्स, नई दिल्ली, कनस्टिट्यूअंट असेंबली, 1949, वाल्यूम 9, न. 32, सितंबर 12, 1949, पृष्ठ 1312.

3 शिवाराव, बी , फ्रेमिंग इंडियास, कनस्टिट्यूशन, ए स्टडी, नई दिल्ली, इंडियन इनस्टिट्यूट ऑफ पब्लिक एडमिनिस्ट्रेशन, 1968, पृष्ठ 794

प्रारूप समिति के सदस्यों की सूची इस प्रकार है .

अल्लादी कृष्णास्वामी अय्यर, एन. गोपालास्वामी आयंगर, बी आर अंबेडकर, के एम मुंशी, मुहम्मद सादुल्ला, बी एल. मित्तर, डी पी खेतान बाद में श्री बी. एल. मित्तर के स्थान पर एम. माधव राव को और डी. पी खेतान की मृत्यु के कारण रिक्त स्थान पर टी. टी कृष्णमचारी को नियुक्त किया गया.

4 इंडिया, कनस्टिट्यूअंट असेंबली, डिबेट्स, नई दिल्ली, कनस्टिट्यूअंट असेंबली, 1949, वाल्यूम 9, न. 32, सितंबर 12, 1949, पृष्ठ 1317

5 वही, पृष्ठ 1331.

6 वही, पृष्ठ 1361.

7. वही, पृष्ठ 1390

8 वही, पृष्ठ 1414

9. वही, पृष्ठ 1349

10 वही, पृष्ठ 1369

11. वही, पृष्ठ 1382

12. वही, पृष्ठ 1325

13 वही, पृष्ठ 1390

14. वही, पृष्ठ 1397

15. वही, पृष्ठ 1397.

16 वही पृष्ठ 1368 69

17 वही, पृष्ठ 1436-37

18 वही पृष्ठ 1460

19 वही पृष्ठ 1353 54

20 वही पृष्ठ 1357 58

21 वही, पृष्ठ 1402

22. वही पृष्ठ 1376

23 वही पृष्ठ 1380-81

24 वही, पृष्ठ 1457

25 भारत, शिक्षा मंत्रालय केंद्रीय हिंदी निदेशालय, परिवर्द्धित देवनागरी, हिन्दी, मैनेजर प्रकाशन विभाग, 1966, पृष्ठ 11 के अनुसार, सन् 1951 से सशस्त्र सेनाओं में रोमन लिपि के स्थान पर देवनागरी लिपि का प्रयोग होता है

26 इन्डिया, कनस्टिटयूअट असेम्बली डिबेटस, नई दिल्ली, कनस्टिटयूअट असेम्बली आफ इंडिया 1949 वाल्यूम 9, न 34 पृष्ठ 1437

27 वही, पृष्ठ 1361

28 वही पृष्ठ 1370

29 वही, पृष्ठ 1320

30 वही, पृष्ठ 1458

31 वही, पृष्ठ 1415

32 वही, पृष्ठ 1370-71

33 वही, पृष्ठ 1490-91

34 देखिए परिशिष्ट III

35 इंडिया कनस्टिटयूअट असेंबली डिबेट्स, नई दिल्ली, कनस्टिटयूअट असेंबली, 1949, वाल्यूम 9 न 33, सितंबर 13, 1949 पृष्ठ 1394

36 वही, पृष्ठ 1349

37 देखिए परिशिष्ट, IV

38 इन्डिया कनस्टिटयूअट असेम्बली डिबेट्स नई दिल्ली, कनस्टिटयूअट असेम्बली आफ इंडिया, 1949 वाल्यूम 9, न 34 पृष्ठ 1445

39 वही, पृष्ठ 1465

40 वही पृष्ठ 1491

41. वही, पृष्ठ 1401.

42. इसमे कोई सदेह नही है कि मुशी-आयगर सुझाव सविधान सभा ने 14 सितंबर, 1949 ई. को सर्वसम्मति से पास किया.

परतु संविधान सभा की काग्रेस पार्टी की बैठक (जहा सविधान सभा की बैठक मे मामला लाने से पूर्व इस विषय पर विवाद हुआ) के उपलब्ध विवरणो से पता चलता है कि इस विषय पर काफी गर्मागर्मी हुई, यद्यपि 1951 के पूर्व के पार्टी की बैठको के रिकार्ड नही मिलते, परतु डॉ. अबेडकर की पुस्तक 'थाट्स आन लिंगुस्टिक स्टेट्स', सेठ गोविंद दास की आत्मकथा और अन्य कुछ स्रोतो से पता चलता है कि एक वोट वाली कहानी का सबध सविधान सभा की काग्रेस पार्टी की 26 अगस्त, 1949 ई की बैठक से है, जहां पर अको के सवाल पर 75 वोट विपक्ष मे और 74 पक्ष मे थे, परतु पट्टाभि सितारमैया, जो बैठक के सभापति थे और जवाहरलाल नेहरू के परामर्श पर निर्णय स्थगित कर दिया गया.

(देखिए गृह मत्रालय, भारत सरकार, नई दिल्ली द्वारा प्रकाशित पुस्तक 'राजभाषा भारती' में बृज किशोर का लेख 'क्या हिंदी एक वोट से राजभाषा बनी'. जुलाई 2, 1978).

43. शिवाराव, बी., फ्रेमिंग इडियाज कनस्टिट्यूशन : ए स्टडी, नई दिल्ली, इडियन इनस्टिट्यूट ऑफ पब्लिक एडमिनिस्ट्रेशन, 1968, पृष्ठ 793-794.

परिशिष्ट : सदस्यों के निर्वाचन क्षेत्र

क्रमांक	संसद सदस्य का नाम	निर्वाचन क्षेत्र
1	अलगूराय शास्त्री	संयुक्त प्रांत (अब, उत्तरप्रदेश)
2	बी दास	उड़ीसा
3	फ्रैंक एंथनी	मध्यप्रांत एवं बरार (अब, मध्यप्रदेश)
4	जी दुर्गाबाई देशमुख	मद्रास
5	हुकम सिंह	पूर्वी पंजाब (अब, पंजाब)
6	जवाहरलाल नेहरू	उत्तरप्रदेश
7	जे 'रोम डेसूजा	मद्रास
8	करीमउद्दीन	मध्यप्रदेश
9	कृष्णमूर्ति राव, एम वी	मैसूर
10	कुलाधर छालिया	असम
11	लक्ष्मीकांत मैत्र	पश्चिम बंगाल
12	लक्ष्मीनारायण साहू	उड़ीसा
13	मौलाना अबुल कलाम आज़ाद	उत्तरप्रदेश
14	मुहम्मद इस्माइल	उत्तरप्रदेश
15	नजीरउद्दीन अहमद	पश्चिम बंगाल, मुस्लिम
16	एन गोपालास्वामी आयंगर	मद्रास
17	एन वी गाडगिल	बंबई
18	डा पी सुब्बारायन	मद्रास
19	पी टी चक्को	केरल
20	पुरुषोत्तम दास टंडन	उत्तरप्रदेश
21	डा रघुवीर	मध्यप्रदेश
22	डा राजेंद्र प्रसाद	बिहार
23	रामालिंगम चेट्टियार, टी ए	मद्रास
24	रविशंकर शुक्ल	मध्यप्रदेश
25	आर वी धुलेकर	उत्तरप्रदेश
26	सतीशचंद्र सामंत	पश्चिम बंगाल
27	सेठ गोविंद दास	मध्यप्रदेश
28	डा श्यामाप्रसाद मुकर्जी	पश्चिम बंगाल

अध्याय · तीन

हिंदी बनाम अंग्रेज़ी

संविधान सभा में भाषा के विषय पर एक प्रकार की विराम संधि पर सहमति तो हो गई परंतु 'शीतयुद्ध' की स्थिति बनी रही, और बाद में परिस्थितियों ने कुछ ऐसे मोड़ लिए कि भाषा के विवाद को लेकर देश में विस्फोट होने लगे। अब लड़ाई केवल हिंदी और अंग्रेज़ी के बीच ही सीमित हो गई थी। यदि और निश्चित रूप से कहा जाए, तो विवाद का विषय यह था कि कितने समय में अंग्रेज़ी के स्थान पर हिंदी को संघ की भाषा के पद पर आसीन किया जाए। लिपि और अंक अब चर्चा का विषय नहीं थे। इन दो भाषाओं की मुठभेड़ की प्रबलता एवं तीव्रता जानने के लिए गत कुछ वर्षों की घटनाओं का अवलोकन आवश्यक है।

आयोग एवं समिति का गठन

संविधान के अनुच्छेद 344(1), 344(4) और 344(6) के अनुसार 7 जून, 1955 ई. को इक्कीस सदस्यों के एक भाषा आयोग (इसके बाद इसके लिए केवल 'आयोग' शब्दों का प्रयोग किया गया है) की नियुक्ति की गई। 930 जबानी और अनेक लिखित गवाहियों के आधार पर 31 जुलाई, 1956 ई. को आयोग ने राष्ट्रपति को अपनी रिपोर्ट पेश की। पार्लियामेंट के तीस सदस्यों की एक संयुक्त समिति (इसके बाद इसके लिए केवल 'समिति' शब्दों का प्रयोग किया गया है) ने, जिनमें बीस लोकसभा के और दस राज्यसभा के सदस्य थे, नवंबर 1957 ई. से 8 फरवरी, 1958 ई. तक इस रिपोर्ट का पुनरावलोकन किया। इस समिति की सिफारिशों के आधार पर राष्ट्रपति ने 27 अप्रैल, 1960 ई. को परिशिष्ट VII पर दिया गया आदेश जारी किया। यह पहली महत्त्वपूर्ण घटना थी, क्योंकि आयोग को संघ के सरकारी कामों के लिए हिंदी के प्रयोग को उत्तरोत्तर बढ़ाने और अंग्रेज़ी के इस्तेमाल को कम करने के संबंध में

सिफारिशें करनी थी।

आयोग के विचारार्थ विषय वही थे जिनका वर्णन परिशिष्ट पर दिए गए संविधान के भाग 17 के अनुच्छेद 344(2) में मिलता है। इन विषयों में एक अंश यह भी जोड़ दिया गया था कि आयोग 'एक समय-सारणी तैयार करेगा जिसके अनुसार हिंदी संघ की भाषा, संघ और राज्यों के बीच पत्रव्यवहार और राज्यों के बीच परस्पर संपर्क के लिए अंग्रेजी का स्थान ले लेगी।'

यदि इस अतिरिक्त विचारार्थ विषय की बात सबसे पहले की जाए तो यह कहना होगा कि दोनों आयोग और समिति समय-सारणी तैयार करने में असफल रहे। पार्लियामेंट की समिति के सदस्य पुरुषोत्तमदास टंडन एवं सेठ गोविंद दास ने कमेटी की रिपोर्ट के साथ अपने असहमति नोट में सरकार की इस बात के लिए आलोचना की कि सरकार ने न तो कमीशन के सम्मुख और न ही समिति के सामने इस संबंध में प्रोग्राम का मसौदा पेश किया। उनका मत था कि सरकार इस विषय में वचनबद्ध होने के लिए आना-कानी करती रही है। पार्लियामेंट की समिति के सभापति गृहमंत्री गोविंद वल्लभ पंत थे। गृह मंत्रालय को ही यह सूचना सरकार को देनी थी, इसलिए सरकार की लापरवाही का कोई यथार्थ कारण दिखाई नहीं देता।

आयोग को यह सुझाव भी देना था कि किस प्रकार क्रमशः हिंदी का प्रयोग बढ़ाया जाए और अंग्रेज़ी का प्रयोग सीमित किया जाए। परंतु अंग्रेज़ी के संबंध में आयोग ने कहा कि 'अंग्रेज़ी के प्रयोग पर कोई अंकुश न लगाया जाए।' समिति ने एक कदम और आगे बढ़कर सिफारिश की

> इस प्रश्न के समाधान का उपाय लचीला एवं व्यावहारिक होना चाहिए। समिति के विचारानुसार संघ की मुख्य सरकारी भाषा अंग्रेज़ी और सहायक भाषा हिंदी होनी चाहिए और 1965 में जब हिंदी मुख्य सरकारी भाषा बन जाए, तो कुछ निश्चित कामों के लिए अंग्रेज़ी तब सहायक भाषा के रूप में चलती रहे, और इस प्रयोजन के लिए पार्लियामेंट को आवश्यकतानुसार नियम निर्धारित करने का अधिकार होगा।[1]

यह कैसी विडंबना है कि जिन अधिकृत निकायों को राज्य के कामों में अंग्रेज़ी के इस्तेमाल को सीमित करने के हेतु सुझाव देने के लिए नियुक्त किया गया, उन्होंने अंग्रेजी को संविधान में निर्धारित समय से आगे तक जारी रखने के लिए सिफारिश की।

आयोग को संविधान के अनुच्छेद 348 के तहत विधान एवं न्याय की भाषा संबंधी सिफ़ारिशें भी करनी थी। इस संबंध में आयोग ने सिफारिश की कि केंद्र

और राज्यों की विधानसभाओं में सदस्यों को छूट होनी चाहिए कि वे अपनी सुविधानुसार किसी भी भाषा में अपने विचार अभिव्यक्त कर सकें, परन्तु विधि-निर्माण की भाषा असंदिग्ध होनी चाहिए, और देश के विभिन्न न्यायालयों में इन पर जो अर्थ विवेचन होगा उसके लिए समर्थ होनी चाहिए। आयोग ने यह भी कहा :

> हमारे विचार से यह जरूरी है कि जब संक्रमण का समय आए, तब देश की पूरी कानूनी पुस्तक एक ही भाषा में हो, और निस्संदेह यह भाषा केवल हिंदी ही हो सकती है। इसलिए विधानसभाओं एवं संसद की विधि निर्माण और तत्पश्चात् किसी भी कानून के अधीन जारी किए गए समस्त सांविधिक उपबंधों एवं विनियमों आदि की भाषा हिंदी होनी चाहिए।[2]

स्थिति को सुचारु रूप से समझने के लिए जरूरी है कि भाषा आयोग और संसदीय समिति की रिपोर्ट तथा इनके साथ राष्ट्रपति के संबंधित आदेश का एक साथ अध्ययन किया जाए। कुछ एक महत्त्वपूर्ण सिफारिशों का आगे विश्लेषण प्रस्तुत करने का प्रयत्न किया गया है।

आयोग ने अंग्रेज़ी से हिंदी की संक्रमण-अवधि निश्चित नहीं की और समिति भी इसे निर्धारित न कर सकी। समिति ने संसद एवं विधानसभाओं के सदस्यों की विचार विनिमय की भाषा पर अपनी राय प्रकट न की, क्योंकि इसके अनुसार यह आयोग एवं समिति के विचारणीय विषयों की परिधि के अंतर्गत नहीं आता था। समिति का सुझाव था, और राष्ट्रपति ने भी इसे स्वीकार किया कि राज्य विधान-सभाएं अपने अपने राज्यों की भाषा में कानून बनाएं और इसका अधिप्रमाणित अनुवाद अंग्रेजी और हिंदी (जहां मूल विषयवस्तु हिंदी में न हो) में दिया जाए, परंतु संसदीय कानून बनाने का क्रम अंग्रेज़ी में चलता रहे, और साथ में अधिप्रमाणित अनुवाद हिंदी में दे दिया जाए। यह विवाद का विषय है कि जब राज्यों में मूल कानून हिंदी में बनाए जा सकते हैं और केंद्रीय कानूनों का अधिप्रमाणित अनुवाद हिंदी में तैयार हो सकता है, तो आयोग की पूर्वकथित सिफ़ारिश का समिति द्वारा समर्थन न करना और हिंदी को संसदीय विधान निर्माण की भाषा न मानना कहां तक तर्कसंगत था। यदि कुछ बातों के आधार पर हिंदी को अन्य भारतीय भाषाओं की अपेक्षा अधिक महत्त्व नहीं देना था, तो बात अलग है।

उच्चतम न्यायालय की भाषा के संबंध में आयोग का कहना था कि अंततोगत्वा उच्चतम न्यायालय की भाषा हिंदी ही होगी। राष्ट्रपति ने यह सिफारिश 'सिद्धांत रूप' में मान तो ली, परंतु इसके साथ यह जोड़ दिया कि ऐसा तब किया जाए 'जब संक्रमण के लिए समय उपयुक्त हो'। उच्च न्यायालयों के

संबंध में आयोग ने सुझाव दिया था कि सभी क्षेत्रों में फैसले और आदेश हिंदी में दिए जाएं, परंतु राष्ट्रपति ने समिति की राय, जो कुछ अलग थी, को ही माना। समिति का मत था कि उच्च न्यायालय चाहे तो हिंदी का प्रयोग करें, और यदि वे चाहें तो इन कामों के लिए राज्य की भाषा का इस्तेमाल कर सकते हैं।

आयोग ने सिफ़ारिश की कि सरकारी कर्मचारियों को हिंदी माध्यम द्वारा काम करने के योग्य बनाने के लिए सेवाकालीन प्रशिक्षण की व्यवस्था की जानी चाहिए। समिति ने इस सिफारिश का समर्थन किया, परंतु इस प्रशिक्षण को उन कर्मचारियों तक ही सीमित रखा गया जिनकी आयु 45 वर्ष से कम थी। इस बात की व्यवस्था कहीं भी नहीं की गई कि जिन कर्मचारियों को प्रशिक्षित किया जाएगा वे सुनिश्चित रूप से हिंदी में ही काम करेंगे। इस प्रकार कर्मचारियों के प्रशिक्षण का व्यावहारिक प्रयोग नहीं किया गया।

आयोग और कमेटी ने केंद्रीय सरकार की नौकरियों में भरती के लिए हिंदी में कुछ न्यूनतम योग्यता का निर्धारण अनिवार्य बताया, परंतु राष्ट्रपति के आदेश के अनुसार इस सिफ़ारिश को 'फिलहाल' केंद्रीय सरकार के उन दफ्तरों के संबंध में लागू किया जा सकता था जो हिंदी भाषा भाषी क्षेत्र में हैं।

इस प्रकार इन दो उच्चाधिकार प्राप्त निकायों, जिन्होंने विचार विनिमय में दो वर्षों से अधिक समय व्यय किया, की सिफ़ारिशों तथा इन पर राष्ट्रपति के कुछ आदेशों का प्रतिदर्श सर्वेक्षण करने से पता चलता है कि उनके काम से हिंदी का बहुत कम लाभ हुआ। इसके प्रतिकूल अंग्रेज़ी के लिए उज्ज्वल संभावनाएं थीं और जिन क्षेत्रों में अंग्रेज़ी की तूती बोल रही थी वहां हिंदी के प्रवेश के लक्षण दिखाई नहीं पड़ते थे। हिंदी के पक्ष में की गई आयोग की सिफारिशों का वज़न पहले समिति द्वारा और फिर राष्ट्रपति के आदेश द्वारा घटा दिए जाने के फलस्वरूप हिंदी का मामला कमज़ोर और अंग्रेज़ी का मज़बूत हो गया।[3]

नेहरू जी का आश्वासन

हिंदी-अंग्रेज़ी की रस्साकशी की दूसरी महत्त्वपूर्ण घटना 1959 ई की है, जब एंग्लो-इंडियन वर्ग के नामजद प्रतिनिधि फ्रैंक एंथनी ने अंग्रेज़ी को संविधान की आठवीं अनुसूची में शामिल करने के लिए लोकसभा में एक गैरसरकारी प्रस्ताव प्रस्तुत किया।[4] इस प्रस्ताव पर संसद में 24 अप्रैल, 8 मई और 7 अगस्त, 1959 ई को बहस हुई। प्रस्ताव की स्वीकृति की वकालत करते हुए श्री एंथनी ने कहा कि संविधान के अनुच्छेद 351 के अनुसार भारत की सामाजिक संस्कृति के प्रतिनिधित्व के लिए हिंदी को आठवीं अनुसूची की भाषाओं से सामग्री लेनी है। अंग्रेज़ी एक समृद्ध भाषा है और हिंदोस्तान की काफी जनसंख्या इसे बोलती है।

इसलिए उसके द्वारा पेश किया गया प्रस्ताव उचित है।[5] उन्होंने यह भी कहा कि अंग्रेजी भारत के लिए निष्पक्ष भाषा है। इसके बोलने वाले सारे देश में बराबर संख्या मे फैले हुए हैं। देश के सभी क्षेत्रों की शिक्षा प्रणाली मे यह भाषा व्याप्त है, और संसद का अधिकांश कार्य इसी भाषा में ही होता है।[6]

इस संदर्भ में परिशिष्ट V पर दृष्टि डालने से पता चलेगा कि लोकसभा एवं राज्यसभा ने अपने कामकाज के लिए हिंदी एवं अंग्रेजी को निर्धारित किया था और इनमे अंग्रेजी का इस्तेमाल क्रमश 83 2 और 85 प्रतिशत था। परंतु राज्यों के संदर्भ में स्थिति भिन्न थी। अठारह राज्यों मे से, आठ ने अपनी अपनी क्षेत्रीय भाषाओं को अपनी विधानसभा एवं विधानपरिषद् के लिए निश्चित किया था। ये आठ राज्य थे—समस्त हिंदी भाषा भाषी प्रदेश, उडीसा, जम्मू कश्मीर और सौराष्ट्र। इन राज्यों मे, क्षेत्रीय भाषाओं का प्रयोग प्रधान भी था। कुछ राज्यों मे तो शत प्रतिशत क्षेत्रीय भाषा का इस्तेमाल होता था। यद्यपि शेष दस राज्यों ने भाषा के विषय मे कोई दृढ नीति नहीं अपनाई थी, परंतु असम को छोडकर इन सभी राज्यों में अधिकतर क्षेत्रीय भाषाएं ही इस्तेमाल होती थीं। उदाहरणार्थ, आंध्रप्रदेश में 90 प्रतिशत भाषण तेलुगु मे थे और 10 प्रतिशत अंग्रेजी मे, पंजाब मे केवल 0.27 प्रतिशत भाषण अंग्रेजी में थे और शेष हिंदी अथवा पंजाबी में। पेप्सू में अंग्रेजी का प्रयोग 2.7 प्रतिशत था और हैदराबाद में 5 प्रतिशत। (राज्यों के पुनर्गठन के समय कुछ राज्यों का विलय हो गया और कुछ नये राज्यो का निर्माण हुआ। इसलिए पेप्सू आदि पुराने राज्यों के नाम अब प्रयोग में नहीं आते।)

प्रस्ताव का विरोध करते हुए, साम्यवादी (सी. पी. आई.) नेता हीरेन मुखर्जी ने कहा कि इस प्रस्ताव को स्वीकार करने का अर्थ यह होगा कि हम हमेशा के लिए अंग्रेजी की यथाशक्ति बनाए रखना चाहते हैं और इसके परिणामस्वरूप, बिना किसी राष्ट्रीय हित के, संक्रमण अवधि को और लम्बा पट्टा दे देंगे। उन्होंने कहा :

> शायद कोई भी सांख्यिकीविद् देश के उस मानसिक नुकसान की अभिकल्पना नहीं कर सके जो एक सर्वथा विदेशी भाषा को सीखने के कारण हुआ है। निस्संदेह यह सारी कोशिश व्यर्थ नहीं रही है। मानसिक विविधता व्यक्तिगत दृष्टि से भले ही आकर्षणयुक्त हो, परंतु इससे राष्ट्र की हानि होती है। और इस हानि का कारण है हमारी सभ्यता मे अंग्रेजी का बोलबाला। यदि हमें एक नव संस्कृति की सृष्टि करनी है तो अंग्रेजी के प्रभुत्व को समाप्त करना होगा।[7]

भाषा संबंधी इस बहस में अंग्रेजी के पक्ष में एक महत्त्वपूर्ण मोड़ 7 अगस्त, 1959 ई. को आया जब प्रधानमंत्री नेहरू ने संसद में निम्न आश्वासन दिया

> मैं दो बातों में विश्वास करता हूं। जैसे कि मैंने अभी कहा किसी प्रकार की जबरदस्ती नहीं होनी चाहिए। दूसरी बात यह है कि अनिश्चित काल तक—मुझे मालूम नहीं कब तक—अंग्रेजी को एक अनिश्चित सहयोगी भाषा के रूप में रखना चाहिए और मैं रखूंगा। मैं केवल इसमें उपलब्ध सुविधाओं के कारण ही ऐसा नहीं करना चाहता, यद्यपि इस प्रकार के लाभ की भी अवहेलना नहीं की जा सकती, परन्तु इसलिए भी अंग्रेजी को बनाए रखना होगा क्योंकि मैं नहीं चाहता कि अहिंदी भाषी लोग ऐसा महसूस करें कि उन्नति के कुछ मार्ग उनके लिए बंद हैं, क्योंकि सरकार का पत्र-व्यवहार हिंदी भाषा के माध्यम से होता है। अतः जब तक जनता की इच्छा होगी, मैं अंग्रेजी को विकल्प भाषा बनाए रखूंगा और इस बात का निर्णय मैं हिंदी भाषा भाषी लोगों के हाथों में नहीं, वरन अहिंदी भाषा भाषी लोगों पर छोड़ूंगा।[8]

यह आश्वासन प्राप्त करने के तुरंत बाद फ्रैंक एंथनी ने अपना प्रस्ताव वापिस ले लिया और बहस का समापन करते हुए कहा, "मैं प्रधानमंत्री के प्रति आभार प्रकट करना चाहता हूं क्योंकि जितना मैंने मांगा था, उन्होंने उससे अधिक दे दिया है।"[9]

इस आश्वासन से हिंदी को काफी क्षति पहुंची और इसके फलस्वरूप एक नए कानून निर्माण की नींव तैयार हो गई जिससे हिंदी के समर्थकों को और अधिक निराश होना पड़ा।

राजभाषा विधेयक, 1963

चार वर्ष बाद, 13 अप्रैल, 1963 ई. को गृहमंत्री, लालबहादुर शास्त्री ने लोकसभा में 'राजभाषा विधेयक, 1963' प्रस्तुत किया। इस विधेयक का ध्येय जहां नेहरू के 1959 ई. के आश्वासन की पूर्ति था, वहां संविधान के उन प्रतिबंधों को हटाना भी था जिनके कारण 1965 ई. के बाद अंग्रेजी का इस्तेमाल वर्जित बन जाता। विधेयक का मुख्य कार्यकारी खंड इसके तीसरे अनुच्छेद में है, जो निम्नांकित है। इसके आधार पर एक नई भाषा नीति की नींव पड़ी और भाषा की सांविधानिक स्थिति में काफी तब्दीली आ गई।

> संविधान के प्रारंभ से पंद्रह वर्ष की कालावधि के समाप्त होने पर भी,

> निश्चित तिथि से, हिंदी के अतिरिक्त अंग्रेजी भाषा का प्रयोग भी निम्न कार्यों के लिए प्रचलित रहेगा :
> (i) उन सभी सरकारी कामों मे जिनके लिए यह निश्चित तिथि से पूर्व इस्तेमाल हो रही थी; और
> (ii) संसद के कार्य व्यापार के लिए।

फ्रैंक एंथनी एवं मनोहरन आदि सदस्यों ने मांग की कि विधेयक के मसौदे मे तब्दीली की जाए और नेहरू के आश्वासन को पूरी तरह इसमे समाहित किया जाए। एंथनी का कहना था कि विधेयक में 'मे'(इच्छासूचक अंग्रेजी शब्द) इस वचन की पूर्ति नहीं करता जो अहिंदी भाषी लोगों को दिया गया था।

हिंदी भाषी लोगों द्वारा विधेयक का कट्टर विरोध हुआ, क्योंकि यदि यह विधयक पेश न होता तो 26 जनवरी, 1965 ई. से केवल हिंदी ही हिंदोस्तान की राजभाषा हो जाती।

विधेयक के प्रस्तुत करने के समय संसद के अंदर और बाहर आवेशपूर्ण स्थिति थी। 14 अप्रैल, 1963 ई. के 'टाइम्स आफ इंडिया' ने इस भावोत्तेजक वातावरण पर टिप्पणी करते हुए लिखा : "संसद के इतिहास में इस प्रकार के हुल्लडबाजी के दृश्य इससे पूर्व कभी दिखाई नहीं दिए।" नेहरू ने इस दृश्य को घृणित एवं लज्जाजनक बताते हुए कहा, "मैं फिनिश, स्वीडिश अथवा किसी अन्य भाषा को तरजीह दूंगा, परंतु मैं इस प्रकार का व्यवहार सहन करने और लोकतंत्र तथा सब कुछ का नाश करने को तैयार नहीं।"[10] अनेक सदस्य सदन की बैठक को छोड़कर बाहर चले गए, तीन सदस्यों को मुअत्तल और दो को जबरदस्ती बाहर कर दिया गया। एक सदस्य पार्लियामेंट के भवन मे विधेयक की होलिका जला रहे थे और बाहर लोगो की बहुत बड़ी भीड़ नारे लगा रही थी।

एल. एम. सिंघवी का कहना था कि यह विधेयक संविधान के अनुच्छेद 343(3)का उल्लंघन करता है, जिसके अनुसार 1965 ई. के पश्चात् अंग्रेजी का प्रयोग केवल निश्चित कार्यों के लिए ही हो सकता था। प्रकाशवीर शास्त्री ने कहा :

> प्रधानमंत्री का इस प्रकार का आश्वासन देना संविधान-विरुद्ध है, या यूं कहें संविधान की मान्यताओं का उल्लंघन है,...आप मुझे इस कटु सत्य को कहने की आज्ञा दीजिए कि प्रधानमंत्री का यह आश्वासन उसी प्रकार की भूल है, जिस प्रकार की भूल उन्होंने काश्मीर में जनमत संग्रह का आश्वासन देकर की थी।[11]

उन्होंने इस विधेयक को असामयिक ठहराया और कहा कि 1962 ई० के चीनी आक्रमण से देश में जो एकता आई थी उस पर यह बिल पानी फेर देगा। एस० एम० बैनर्जी का मत था कि जब 1965 ई० तक स्थिति स्पष्ट थी तो 1963 ई० में यह विवाद उठाना अनावश्यक था। बिल का कड़ा विरोध करते हुए गोविंद दास ने दार्शनिक ढंग से इसकी समीक्षा की। उनका कहना था कि स्वतंत्र भारत को चार चीजों की सुरक्षा करनी होगी : राष्ट्रीय एकता, समाजवादी प्रणाली, लोकतंत्र एवं आर्थिक विकास, और इन सब की सुरक्षा अंग्रेजी द्वारा नहीं, अपितु हिंदी द्वारा ही हो सकती है। अपने विचारों के स्पष्टीकरण में उन्होंने कहा कि हिंदी के माध्यम द्वारा ही भारत के जन समूह एक दूसरे के समीप आ सकते हैं और विशिष्ट वर्ग और जनसाधारण के बीच की खाई पाटी जा सकती है। उन्होंने बलपूर्वक कहा कि हिंदी ही विशाल बहुसंख्या की इच्छापूर्ति कर सकती है और विदेशी भाषा की अपेक्षा भारतीय भाषा के माध्यम से ही वैज्ञानिक एवं तकनीकी जानकारी आम जनता तक पहुंचा कर देश की आर्थिक स्थिति के उत्थान में योगदान मिल सकता है। उन्होंने कहा कि क्षेत्रीय भाषाओं की प्रगति का हिंदी की प्रगति के साथ सीधा रिश्ता है, क्योंकि सारी की सारी एक ही देश की भाषाएं हैं। अंग्रेजी क्षेत्रीय भाषाओं के विकास में सहायक नहीं हो सकती, क्योंकि इसकी पूरी इमारत विदेशी है।

हरिकृष्ण मेहताब ने बिल का समर्थन किया और इसे पूर्ण सांविधानिक बताते हुए कहा :

> संविधान के निर्माता बुद्धिमान् लोग थे। यदि उन्होंने इसे (हिंदी को) बिना किसी शर्त के मान लिया होता तो संविधान में केवल एक ही धारा होती। उन्होंने इतने अनुच्छेद क्यों जोड़ दिए? संविधान सभा में सदस्यों के एकमत की काफी चर्चा की गई है। यह एकमत इन्हीं मिलीजुली धाराओं के कारण ही बन पाया था। इन्हीं के कारण भिन्न-भिन्न मतों के सदस्यों को विश्वास दिया जा सकता था। सदस्यों को इन कठिनाइयों का पूर्वानुमान था, इसीलिए उन्होंने पंद्रह वर्ष की अवधि, आयोग और संसदीय समिति की नियुक्ति, परीक्षाओं के प्रबंध संबंधी धाराओं को संविधान में जोड़ दिया था। जहां तक मुझे स्मरण है, जब श्री गोपालास्वामी आयंगर ने इन धाराओं को स्वीकृति के लिए बिल रूप में प्रस्तुत किया था, तो उन्होंने स्पष्ट कहा था कि उन्होंने यह सब इसलिए रखा है, क्योंकि उन्हें ऐसा आभास है कि अंग्रेजी बहुत वर्षों तक प्रचलित रहेगी। आखिर श्री गोपालास्वामी आयंगर ने विधेयक में इतनी धाराएं क्यों रखीं, इसलिए कि समय ऐसा था, और संविधान को अधिकाधिक बहुमत से पारित करना था।[12]

हेम बरुआ ने बिल की सराहना करते हुए कहा कि इससे अहिंदी भाषी लोगों के आर्थिक हितों तथा क्षेत्रीय भाषाओं के निर्जीव होने से रक्षा हो सकेगी। इसके साथ उन्होंने यह भी कहा कि एक न एक दिन अंग्रेज़ी को राजभाषा के पद से हटाना होगा, क्योंकि 'संसार का कोई भी देश तब तक लोकतांत्रिक एवं स्वतंत्र कहलाने का दावा नहीं कर सकता जब तक वहां कामकाज किसी ऐसी भाषा में चलता रहे जो देश की प्रकृति के लिए विजातीय हो।' लगभग इन्हीं दलीलों के आधार पर हीरेन मुखर्जी ने भी विधेयक का समर्थन किया और कहा कि इस बिल द्वारा सरकारी नौकरियों के संबंध में जो संशय थे वे दूर हो जाएंगे। उन्होंने यह भी कहा कि "हमारे देश में कुछ लोग अंग्रेजी के अनिश्चित काल तक प्रचलित रहने की चेष्टा कर रहे हैं। ऐसी चेष्टा को संसद को सुस्पष्ट रूप में अस्वीकार कर देना चाहिए।"[13] कबीर, दादू, नानक, चैतन्य, रविदास, हजरत निज़ामुद्दीन, मोनिउद्दीन चिश्ती, तुलसीदास, थीरुवल्लूवर ज्ञानेश्वर एवं तुकाराम के उदाहरण देते हुए उन्होंने कहा कि "हमारे महापुरुषों में अंग्रेज़ी जानने वाले वर्ग का भी बहुत योगदान है, परंतु जहां तक गहनतम योगदान का संबंध है वह उन व्यक्तियों के द्वारा ही मिला, जिन्होंने अपनी भाषाओं को ही अभिव्यक्ति का माध्यम चुना।"

बिल के समर्थकों का कहना था कि द्विभाषिता कोई ऐसी अनोखी बात नहीं जो केवल भारत ही अपना रहा हो। यह बहुत से देशों में पहले प्रचलित है।[15] इसके अतिरिक्त, इस बिल के द्वारा संक्रमण में केवल जल्दबाज़ी से ही रक्षा की जा रही है और अहिंदी भाषियों को हिंदी सीखने के लिए अधिक समय दिया जा रहा है ताकि संक्रमण के बाद किसी प्रकार की अव्यवस्था न हो। लाल-बहादुर शास्त्री ने बिल की स्वीकृति के लिए बल देते हुए कहा, "हिंदी की प्रगति के लिए अहिंदी भाषी लोगों की सद्भावना आवश्यक है।"

अंत में विधेयक पारित हो गया। स्पष्टतया हिंदी के हिमायतियों को यह एक और बड़ा धक्का था।

निर्णायक तिथि

26 जनवरी, 1965 ई. निर्णायक तिथि थी। हिंदी और अंग्रेज़ी, दोनों, संघ की राजभाषाएं बनी रहीं। 1963 ई. के भाषा-विधेयक के पारित होने के पश्चात् दोनों विपक्षी दलों, हिंदी के पोषकों तथा अंग्रेज़ी के हिमायतियों ने, द्विभाषिता की स्थिति को स्वीकार कर लिया था; अतः यदि तर्कसंगत दृष्टिकोण अपनाया जाता तो अब कोई समस्या शेष नहीं थी। परंतु राजनीति और जन साधारण के व्यवहार हमेशा पूर्वानुमानित मार्ग का अनुसरण नहीं करते। द्रविड मुन्नेत्र कडगम (डी. एम. के.) ने 1965 ई. के गणराज्य दिवस को शोक दिवस

के रूप म मनाने का फैसला किया, क्योंकि इस दिन स हिंदी सघ की प्रथम भाषा बन गई। हिंदी के विरुद्ध दक्षिण तथा पश्चिम बगाल मे बडे पैमाने पर प्रदर्शन हुए और कुछ एक प्रदर्शनो मे तो हिंसात्मक कार्यवाहिया भी हुई। एक कथनानुसार, मद्रास मे इन प्रदर्शनो के कारण 78 लोग मारे गए। एक अन्य बयान के मुताबिक तमिलनाडु मे मृतको की सख्या 150 थी। पाच व्यक्तियो ने विरोधस्वरूप आत्मदाह कर डाला। सरकार ने इन आकडो की न तो पुष्टि की और न ही इनका खडन किया।

18 फरवरी, 1965 ई को हीरेन मुखर्जी ने सरकार द्वारा इस मामले को ठीक तरह से न सभाले जाने पर सरकार की निंदा करने के लिए लोकसभा मे एक काम रोको प्रस्ताव पेश किया। उन्होंने कहा, "इस प्रकार की भावातिरेकता मजबूत से मजबूत सिंहासनो को भी भस्म कर सकती है, फिर इन प्रतिभाहीन शिथिल ढाचों की जिन पर सरकार अवलम्बित है तो बात ही क्या है। सरकार को सावधान रहना चाहिए कि दिल्ली का नगर कोतवाली आनबान का सवदरा है।"[5] उनका मत था कि प्रधानमत्री, लालबहादुर शास्त्री को नेहरू के आश्वासनो की पुनरावृत्ति 11 फरवरी की बजाय 26 जनवरी सन् 1965 ई को करनी चाहिए थी। उनके विचार मे हिंदी भाषी राज्यो को अग्रेजी को सयुक्त राजभाषा बनाए रखने के लिए विधेयक पारित करने चाहिए थे, क्योंकि ऐसे कानून के बिना सविधान के अनुच्छेद 210(2) के अनुसार 1965 ई से अग्रेजी इन राज्यो की राजभाषा नहीं रही, केवल हिंदी ही इनकी राजभाषा बन गई है।[6]

प्रकाशवीर शास्त्री ने लोकसभा मे जोरदार चेतावनी देते हुए कहा कि यदि सरकार के निर्णय हिंसात्मक कार्यवाहियो से बदलते हैं तो हिंदी के हिमायती भी ऐसा मार्ग अपना सकते हैं। उन्होंने कहा कि हिंदी भाषी क्षेत्रो के लोगो ने ऐसे प्रदर्शनो का तब आयोजन किया था जब अग्रेजी के पिट्ठू अभी अपने अग्रेज आकाओ के तलवे झाड रहे थे। दक्षिण मे गाडियो, डाकखानो आदि के जलाने की हिंसात्मक घटनाओ की ओर सकेत करते हुए उन्होंने कहा

> मुझे अच्छी तरह से याद है कि 26 जनवरी को मद्रास नगर म जब हिंदी विरोधी जुलूस निकला तो उसमे कुछ लडके थे, और वह भी छोटी आयु के थे। आप यदि चाहे तो उनके चित्र भी मेरे पास मौजूद है, और मैं उन्हे आपके सामने प्रस्तुत कर सकता हू। हमसे कहा जाता है कि मद्रास मे रेलगाडिया जलाई गई, मद्रास मे डाकखाने जलाए गए, और उसके बाद सरकार के नेता विवश हुए इस तरह का निर्णय लेने के लिए। तो प्रधानमत्री जी, मैं आपसे स्पष्ट कहना चाहता हू कि हम इस क्षेत्र के

> निवासी जो कि पिछले 20 सालों से अपनी जबान पर ताला डाले हुए हैं इस प्रकार की हिंसात्मक कार्यवाहियों से यदि सरकार के निर्णय बदलने लग गए तो आप याद रखिए कि हमने रेलगाड़ियों की पटरियां उस समय उखाड़ी थीं जिस समय ये लोग अंग्रेजों के तलवे झाड़ रहे थे। सन् 1942 ई का वातावरण उनको याद होगा। अगर हमने कहीं इस तरह की ज्वालाएं भड़का दीं जैसी वहां उठ रही हैं और क्रांति की यह चिंगारी देश के अंदर उठ पड़ी, जैसे कि आसार बनने लगे हैं, तो ये ज्वालाएं आकर संसद भवन को छुएंगी, और स्थिति को आप बचा नहीं सकेंगे। साथ ही उनकी सारी जिम्मेदारी इस कमजोर सरकार पर होगी जो इस प्रकार का निर्णय करती है।[17]

इस प्रकार 1965 ई. का प्रारंभ भाषा की समस्या को लेकर चुनौतियों एवं प्रतिचुनौतियों, आक्षेपों एवं प्रतिआक्षेपों और अग्निकांडों का वर्ष था, परन्तु सांविधानिक स्थिति अपरिवर्तित बनी रही।

राजभाषा संशोधन अधिनियम, 1967

शायद इस द्वंद्व का एक और मुख्य दौर अभी बाकी था। दिसंबर 1967 में राजभाषा (संशोधन) विधेयक और पार्लियामेंट में भाषा संबंधी संकल्प को पेश करने की तैयारियां शुरू हुईं। यह बिल 7 दिसंबर, 1967 ई. को संसद में पेश हुआ। *इसके अनुसार राजभाषा विधेयक, 1963 की धारा (3) में निम्न सुझाव रखा गया :

> ये उपबंध "तब तक लागू रहेंगे जब तक उन सभी राज्यों की विधान-सभाएं, जिनकी सरकारी भाषा हिंदी नहीं है, अंग्रेजी को हटाने के लिए प्रस्ताव पारित नहीं कर देतीं और इन प्रस्तावों पर विचार करने के उपरांत संसद भी अंग्रेजी के निषेध के लिए इसी प्रकार का प्रस्ताव पास नहीं कर देती।[18]

जहां तक बिल के साथ संलग्न संकल्प का संबंध है, इसमें निम्न सिफ़ारिशें थीं :

(i) हिंदी की प्रगति की रफ्तार को तेज किया जाय;
(ii) संसद में हिंदी की प्रगति पर प्रतिवर्ष एक मूल्यांकन रिपोर्ट पेश होनी चाहिए;

---

*राजभाषा अधिनियम, 1963 [राजभाषा (संशोधन) अधिनियम, 1967 द्वारा 1967 में संशोधित] तथा संकल्प का विवरण इस अध्याय के अन्त में पृष्ठ 78-84 पर देखिए।

(iii) पंद्रह भारतीय भाषाओं का तेज रफ्तार एवं समन्वित विकास सुनिश्चित करना चाहिए,
(iv) राज्यों के परामर्श से केंद्र द्वारा निर्मित त्रिभाषा फार्मूला ठीक प्रकार से लागू किया जाना चाहिए,
(v) ऐसा नियम बनाया जाए जिसके अनुसार संघ की सेवाओं के लिए चुने जाने वाले उम्मीदवारों के लिए हिंदी और अंग्रेज़ी की जानकारी अनिवार्य हो। इस संबंध में ऐसे पद अपवाद रहेंगे जिनके लिए केवल हिंदी अथवा केवल अंग्रेज़ी अथवा दोनों का उच्च ज्ञान वाछनीय होगा, और
(vi) ऐसी व्यवस्था की जाए कि संघ लोक सेवा आयोग की परीक्षाएं अंग्रेजी तथा भारतीय संविधान की आठवीं अनुसूची में अंकित सभी भाषाओं के माध्यम से होनी चाहिए।

विधेयक एवं प्रस्ताव पर संसद में काफी उत्तेजनापूर्ण बहस हुई। जब विधेयक और प्रस्ताव पेश किए गए तो संसद में इतना कोलाहल हुआ कि कुछ भी सुनाई नहीं पड़ता था, और उपाध्यक्ष को यह आदेश देना पड़ा, "अब गृहमंत्री अपने भाषण की पुनरावृत्ति करेंगे।" तारकेश्वरी सिन्हा ने संसद के वातावरण का चित्र इन शब्दों में प्रस्तुत किया

"जनूं का दौर है किस-किस को जाए समझाने,
इधर भी अक्ल के दुश्मन, उधर भी दीवाने।"

प्रकाशवीर शास्त्री ने कहा कि "1963 ई. का विधेयक सरकार की अक्षमता का और यह बिल सरकार की बदनीयती का प्रमाण है। उन्होंने कहा कि इस बिल का आधार राष्ट्रीय हित न होकर मद्रास में कांग्रेस सरकार की रक्षा करना और कांग्रेस के कुछ वर्गों को संतुष्ट करना है।" गोविंद दास का कहना था कि "अंग्रेजी के संबंध में इस विधेयक में जो कुछ कहा गया है, मेरा यह अंदाज़ है कि इस विधेयक के अनुसार अगर काम चला तो इस देश में सदा सर्वदा के लिए अंग्रेजी ही चलेगी।"[19] सरकार की कथित हिंदी नीति के प्रति अपना रोष प्रकट करते हुए उन्होंने सरकार को अपनी पद्मभूषण की उपाधि लौटा दी।

हिंदी के पक्षपातियों का मत था कि यह बिल अहिंदी भाषी राज्यों को वीटो का अधिकार प्रदान करता है, क्योंकि यदि एक भी राज्य हिंदी लागू करने का निर्णय न लेगा, तो अंग्रेज़ी प्रचलित रहेगी। इस आरोप का उत्तर देते हुए गृहमंत्री वाई. बी. चव्हाण ने कहा :

> स्थिति ऐसी नहीं है। वस्तुत: इन सब बातो को शब्दश: कानूनी एव विधि-सम्मत तरीके से नही देखना चाहिए। इस विधेयक को पास करने के लिए पार्लियामेंट को कोई मजबूर नहीं कर रहा। जब ससद एक विधेयक सद्भावना के साथ स्वीकार कर रही है और वह भी इसलिए कि हम भली भांति जानते है कि हमारे कुछ भाइयो को सदेह है और हम उन्हे पुन: विचार और हिंदी को अंगीकार करने का अवसर देना चाहते है, जब यह सब कुछ हम पूर्ण ज्ञान के साथ कर रहे है तो यह निषेधाधिकार नही है। यह तो दृष्टिकोण की बात है।...यदि कुछ वर्षो के उपरांत देश मे ऐसा विचार बनता है कि राष्ट्र किसी भारतीय भाषा को राजभाषा मानने के लिए तैयार है, और हमारे भाइयो के मन मे कोई शक-ओ-शुबहा नही है, तो संसद इस विवेक के आधार पर बिना उनकी मंजूरी लिए इस विधेयक को पुन: बदल सकती है। [0]

अंग्रेजी के हिमायती वर्ग ने विचाराधीन बिल के स्थान पर संविधान मे संशोधन की मांग रखी ताकि संसद सरलता से स्थिति को न बदल सके। अंग्रेजी और हिंदी के पक्ष में लगभग वही दलीलें प्रस्तुत की गईं, जो पूर्व अवसरों पर दी गई थीं। अंग्रेजी के पक्ष लेने वालों का कहना था कि जो रियायत बिल द्वारा दी जा रही थी, प्रस्ताव द्वारा उसका निषेध किया जा रहा था। अत मे बिल और प्रस्ताव दोनों के लिए वोट पड़े, और दोनों पारित हो गए। जब बिल के लिए वोट पड़े तो जनसंघ के तथा अन्य संसद सदस्य, जिन्होंने बिल का विरोध किया था, सदन से बाहर चले गए, और जब प्रस्ताव पर मतदान शुरू हुआ तो अपना विरोध प्रकट करते हुए डी. एम. के. पार्टी के सदस्य तथा अंग्रेजी के हिमायती सभा त्यागकर बाहर चले गए। बिल एव प्रस्ताव से शायद दोनों गुटों के लाभ संतुलित रहे।

समाचारपत्रों की रिपोर्ताज

समाचारपत्रों की स्वतंत्रता भारतीय जनतंत्र की आधारशिला रही है। आजादी से पहले और इसके बाद, समाचारपत्रो ने अपने समाचारों, निवंधों तथा संपादकीय लेखों द्वारा राष्ट्र के जीवन में महत्वपूर्ण भूमिका अदा की है। इसलिए जब भाषा के मामले को लेकर देश मे निर्णायक घटनाएं हो रही थी, तो यह जान लेना उपयुक्त होगा कि इस संबंध में पत्रों ने क्या लिखा। इस हेतु दिसंबर, 1967 ई. के 'दि हिंदू', मद्रास और 'हिंदुस्तान', नई दिल्ली के लेखों का संक्षिप्त एवं सरसरी सर्वेक्षण किया गया। प्रथम समाचारपत्र दक्षिण से अंग्रेजी भाषा में प्रकाशित होता है, और 1967 ई. में इसकी औसत बिक्री

1,41,708 थी। द्वितीय पत्र उत्तर भारत से हिंदी मे प्रकाशित होता है और तब इसकी औसत बिक्री 85,000 थी।

भाषा के मामले पर इन दो अखबारो ने कितना लिखा तथा कितनी रूचि दिखाई, इसका अनुमान निम्नलिखित सारणी से चल सकता है[1]

रिपोर्ताज का प्रकार	हिंदुस्तान (हिंदी)	दि हिंदू (अंग्रेजी)
1 भाषा समस्या के लिए कुल स्थान	9406 कालम सें मी	5762 कालम सें मी
2 समाचारो की संख्या	343	229
3 संपादकीय लेखो की संख्या	14	4
4 संपादकीय पृष्ठ पर निबंधो की संख्या	23	4
5 संपादक के नाम पाठको के पत्र	15	32

इस प्रकार भाषा के विषय के लिए 'हिंदुस्तान' और 'दी हिंदू' ने क्रमश 21 और 13 पृष्ठ दिए। स्थान के ऊपरलिखित विवरण के सिंहावलोकन से पता चलता है कि प्रदर्शनो के आयोजन तथा बयान देने मे राजनीतिज्ञो ने सर्वाधिक भूमिका अदा की।[2]

'दि हिंदू' के 'रिपोर्ताज' के अनुसार, विद्यार्थियो द्वारा 49 हिंसात्मक कार्यवाहिया हुई। उनका मोटा खाका इस प्रकार से है

हिंसात्मक घटनाए

विवरण	दिसबर 1 से 17, 1967 ई तक	दिसबर 18 से 31, 1967 ई तक	कुल घटनाए
(क) उत्तर भारत मे	16	7	23
(ख) दक्षिण भारत मे	1	25	26
कुल	17	32	49

इस प्रकार उत्तर तथा दक्षिण मे युवको द्वारा लगभग बराबर संख्या मे हिंसात्मक कार्यवाहिया हुई। उत्तर मे ये कार्यवाहिया प्राय विधेयक के अंगीकार होने मे

पूर्व हुई, जबकि दक्षिण में ये विधेयक के पारित होने के उपरांत, शायद प्रतिकार के रूप में।[23] उत्तर में विद्यार्थियों ने बिल की 25 फुट ऊंची प्रतिमा तथा डाकखानों को आग की नजर कर दिया। दक्षिण में उन्होंने मद्रास सेंट्रल स्टेशन पर हिंदी नामपट्ट उतार फेंके और कोचीन जाने वाली एक गाडी को जला दिया।

जनसंघ के एक सदस्य ने बिल की एक प्रति को सभा कक्ष के अंदर जला दिया (दि हिंदू : दिसंबर 7, 1967 ई.)। उत्तरप्रदेश के दो मंत्रियों को तोड़-फोड़ की कार्यवाहियों के अपराध में गिरफ्तार कर लिया गया (दि हिंदू : दिसंबर 13, 1967 ई.)।[24]

वस्तुत: सदन के अंदर अथवा बाहर मतांधता तथा हिंसात्मक प्रवृत्ति किसी एक वर्ग तक सीमित नहीं थी।[25]

राजभाषा विधेयक, 1963 पर अपने भाषण में हिंदी के हिमायतियों के दुराग्रह की चर्चा करते हुए, फ्रैंक एंथनी ने कहा, "आज इतनी टोका-टाकी नहीं हो रही है, परंतु उस समय (1959 में जब अंग्रेजी को आठवीं अनुसूची में शामिल करने पर चर्चा हो रही थी) सोची समझी, पहले से सोची समझी, टोका-टाकी चली थी। समस्त वातावरण दुर्गंधित था, और घृणा से भरपूर था।[26]

एंथनी के बिल पर दिए गए वक्तव्य की समीक्षा करते हुए जवाहरलाल नेहरू का कहना था .

> यह अफ़सोस की बात थी। मेरा संकेत उनके (एंथनी के) विचारों की ओर नहीं है, परंतु यह भाषण इसलिए दुर्भाग्यपूर्ण था, क्योंकि, और जैसे कि उन्होंने अपनी तकरीर में स्वयं भी कहा, उनकी बात में उग्रवाद था; और मेरे विचार में उन्होंने 'कट्टरता' शब्द का भी प्रयोग किया। समस्या पर विचार करने का यह कोई तरीका नहीं है।[27]

उपसंहार

इस प्रकार हम देखते हैं कि संविधान के पारित होने के पांच वर्ष के बाद भाषा का विवाद फिर खड़ा हो गया था। पहले तो यह भाषा आयोग (1955-56 ई.), संसदीय समिति (1957-59 ई.) तक ही सीमित था, परंतु शीघ्र ही यह विवाद संसद की चारदीवारी तक पहुंच गया। तदुपरांत इस विषय को लेकर देश के विभिन्न भागों में ज्वालाएं धधक उठीं। जब भाषा के सवाल को लेकर यत्रतत्र जनसभाओं में भाषण हुए तो इन चर्चाओं में तर्क की अपेक्षा भावुकता और विवेक की अपेक्षा उग्रता अधिक थी। हर समय अंग्रेजी और हिंदी

के हिमायतियो के बीच द्वंद्व युद्ध मे शक्ति परीक्षा होती रही। काफी प्रदर्शन और जवाबी प्रदर्शन हुए, हिंसा और प्रतिहिंसा की भी कार्यवाहिया हुई जिनसे जान माल का भारी नुकसान हुआ। हिंदी और अंग्रेजी का झंडा बुलंद करने वालो ने अपने अपने प्रदर्शन 'प्रभावशाली' बनाने मे कोई कसर न छोडी और इस प्रक्रिया मे काफ़ी राष्ट्रीय सपत्ति फूक दी गई।

अन्य कार्यों के अतिरिक्त भाषा आयोग के जिम्मे यह सुझाव देना भी था कि किस प्रोग्राम के अनुसार सरकारी काय म हिंदी अंग्रेजी का स्थान ले और राज्य के कामो मे हिंदी का अधिकाधिक प्रयोग कैसे बढाया जाए। आयोग इन दोनो मे से किसी भी कार्य को पूर्ण न कर सका। आयोग के अनुसार वे पहला काम इसलिए न कर पाए क्योंकि इस सबध म उनकी जरूरतो के लिए सरकार अपनी आधारिक सरचना को ध्यान मे रखते हुए अपनी सिफारिशें उन्हे न दे सकी। जहा तक दूसरी विषयवस्तु का सबध है, आयोग के सदस्य अंग्रेजी के इस्तेमाल पर किसी प्रकार की रोक लगाने के पक्ष मे नही थे।

ससदीय समिति भी कोई समाधान तलाश न कर पाई। समिति की इस सिफारिश से कि सविधान के अनुच्छेद 343 के अनुसार हिंदी सघ की राजभाषा बन जाने के बाद भी अंग्रेजी सहायक राजभाषा के रूप मे चलती रहे, समस्या का एक आयाम और बढ गया।

अप्रैल 1959 ई मे फ्रैंक एंथनी ने अंग्रेजी को सविधान की आठवी अनुसूची मे शामिल करने के लिए एक गैरसरकारी विधेयक प्रस्तुत किया। बाद मे उन्होने यह बिल वापस ले लिया क्योंकि प्रधानमत्री ने ससद को यह आश्वासन दे दिया कि जब तक अहिंदी भाषी राज्यो की ऐसी इच्छा होगी, अंग्रेजी अतिरिक्त राजभाषा के रूप मे बनी रहेगी। स्पष्ट है कि हिंदी के पोषको के लिए यह बहुत भारी क्षति थी।

1963 ई मे पार्लियामेंट ने राजभाषा विधेयक पास किया जिसके अनुसार हिंदी के अतिरिक्त अंग्रेजी को 1965 ई के बाद सभी सरकारी कामो मे इस्तेमाल करने की इजाजत मिल गई। हिंदी के हिमायतियो ने इसका कडा विरोध किया फिर भी बिल स्वीकृत हो गया। अंग्रेजी के हिमायती भी इस बिल से सतुष्ट न हुए क्योंकि 1965 ई के बाद हिंदी सघ की मुख्य राजभाषा बन गई। इसलिए उन्होने इस स्थिति पर अपना रोष प्रकट करने के लिए हिंसात्मक प्रदर्शन किए। इसके फलस्वरूप राजभाषा विधेयक, 1963 मे सशोधन हुआ। 1967 ई मे ससद ने जवाहरलाल नेहरू के आश्वासन को कार्यान्वित करने के लिए कानून बनाया, जिसके अनुसार यह स्वीकार किया गया कि अंग्रेजी का प्रचलन तब तक जारी रहेगा जब तक सभी राज्यो के विधानमडल और ससद के दोनो सदन अंग्रेजी को हटाने के लिए कानून पास न

कर दें।

इसमे कोई संदेह नही है कि इस बिल के साथ जो प्रस्ताव पास हुआ उससे हिंदी के पक्ष को लाभ पहुंचा, परंतु अंग्रेजी के स्थान पर अंग्रेज़ी की स्थापना के लिए कोई समय सूची तैयार नहीं की गई।

इस प्रकार 1950 ई. मे हिंदी को जो उपलब्धि हुई थी, 1967 ई. तक, वह दूपित हो चुकी थी, और फीकी पड़ गई थी। यहां हीरेन मुखर्जी की उस चेतावनी का स्मरण हो आता है जो उन्होंने 'अंग्रेजी के अनिश्चित काल तक चलते रहने' के संबंध मे 1963 ई मे दी थी और जो चार वर्ष बाद ठीक उतरी। पुरुषोत्तम दास टंडन और सेठ गोविंद दास के उन भविष्यसूचक शब्दो की याद भी ताज़ा हो जाती है जिनमे उन्होने कहा था कि 1967 ई. के बिल मे हिंदुस्तान मे अंग्रेज़ी का प्रभुत्व सदा सर्वदा के लिए बना रहेगा। संविधान की इस धारा, जिसके अधीन हिंदी के पत्र के साथ उसका अंग्रेजी अनुवाद संलग्न रहेगा, के संबध मे पुरुषोत्तम दास टंडन का कहना था कि: "प्रत्यक्ष है, तब हिंदी के इस्तेमाल की कोई संभावना नही है।"[8] जो बात इन दो राजनीतिज्ञों ने कही थी, आज स्थिति लगभग वैसे ही है।

भाषा के सवाल पर भावोत्तेजनापूर्ण वक्तव्यो के आधार पर यह सोचना गलत होगा कि भारतीय जनता के किसी वर्ग में राष्ट्रीय प्रेम का अभाव है। भारतवासियों ने कई अवसरों पर, जब कभी देश पर संकट की स्थिति बनी, अपने राष्ट्रीय प्रेम और पारस्परिक एकता का सुप्रमाण दिया है। 1962 ई. मे जब चीन के आक्रमण से देश की सुरक्षा ख़तरे मे पड़ गई अथवा 1965 ई. और 1971 ई. मे जब पाकिस्तान ने हिंदुस्तान पर आक्रमण किए तो देश का कोई भी वर्ग अधिकतम बलिदान करने मे पीछे न रहा।

हिंदी के लिए यह एक दुर्भाग्य एव निराशा की बात थी कि राजनीतिज्ञों की नई पीढ़ी की हिंदी के प्रति उस प्रकार की कोई प्रतिबद्धता नहीं थी जैसे कि आज़ादी के लिए लड़ने वाले पुराने राजनीतिज्ञो की। इसके विपरीत राजनीतिज्ञो की नई पीढ़ी मे कुछ ऐसे लोग थे जो अपनी हिंदी विरोधी नीति के कारण ही चुने गए थे।

हिंदी के गतिरोध का एक अन्य कारण यह भी था कि अहिंदी भाषियों की हिंदी भाषा की जानकारी का स्तर ऊंचा करने के हेतु सरकार और हिंदी प्रचारक संस्थाओं ने यथेष्ट व्यावहारिक कदम नही उठाए।

आज की स्थिति उपर्युक्त तथा अन्य कुछ कारणों का परिणाम है। इन्हीं के फलस्वरूप हिंदी और अंग्रेजी के बीच खींचातानी अभी तक जारी है। 17 मार्च, 1978 ई. को एस. डी. सोमसुंदरम् ने लोकसभा में एक गैरसरकारी प्रस्ताव पेश किया जिसका आशय था कि नेहरू के आश्वासन पर फिर बहस की जाए,

और संविधान में यह समाहित किया जाए कि जब तक अहिंदी भाषी चाहें अंग्रेजी भारत की अतिरिक्त राजभाषा बनी रहेगी। इस प्रश्न पर फिर विवाद आरंभ करने के लिए इसके अतिरिक्त कोई उत्तेजनापूर्ण कारण नहीं था, कि सिवाय इस बात के कि कुछ लोगों के मन में यह भय था कि उस समय की जनता पार्टी की सरकार भाषा के मामले में जवाहरलाल नेहरू और उनकी कांग्रेस सरकार के आश्वासन पर अमल नहीं करेगी। 14 अप्रैल, 1979 ई. को गृहमंत्री ने संविधान के संशोधन की मांग को अस्वीकार करते हुए कहा कि जनता पार्टी की सरकार भाषानीति में जवाहरलाल नेहरू के सिद्धांत का अनुसरण करेगी, और उसका दक्षिणी राज्यों पर हिंदी थोपने का कोई इरादा नहीं है। उन्होंने विरोधी दलों के इस प्रचार की निंदा की कि जनता सरकार अहिंदी भाषी लोगों पर हिंदी लादना चाहती है। कुछ सदस्यों ने मांग की कि अंग्रेजी को संविधान की आठवीं अनुसूची में शामिल किया जाए, परंतु प्रधानमंत्री ने इसे नामंजूर कर दिया। (दि टाइम्स आफ इंडिया, नई दिल्ली, अप्रैल 24, 1978, पृष्ठ 3)

1959 ई., 1963 ई., 1967 ई. और 1978 ई. में पार्लियामेंट में भाषा संबंधी पेश किए गए बिल समस्या समाधान के मार्ग के मील पत्थर नहीं हैं, अपितु हिंदी-समर्थकों और हिंदी विरोधियों के पारस्परिक अविश्वास के सूचक हैं। इन कानूनों से संबंधित घटनाओं में एक मार्गदर्शन यह मिलता है कि इस प्रकार के तथा अन्य विधेयक बनाने में लाभ की कुछ अधिक संभावना नहीं है। समस्या काफी विकट रूप धारण कर चुकी है, और कानूनों से इसका हल निकालना मुश्किल है। समस्या अर्थशास्त्र, राजनीति और लोगों की भावनाओं के साथ जुड़ चुकी है। इस प्रश्न पर विभिन्न वर्गों के मन में पारस्परिक विश्वास के स्थान पर गांठें बंध चुकी हैं। इसलिए आज जरूरत इस बात की है कि समाजशास्त्री, भाषाशास्त्री, मनोवैज्ञानिक, राजनीतिज्ञ और अन्य वैज्ञानिक एवं विशेषज्ञ इस समस्या के समाधान के लिए अपने ज्ञान का एकीकरण करें। समस्या को हल करने में जल्दबाजी करना या इसमें अनावश्यक विलंब करना राष्ट्रीय हित में नहीं होगा। यथार्थवादी दृष्टिकोण एवं वैज्ञानिक योजना के बिना इस समस्या का समाधान मिलना कठिन है। ऐसे उपाय ढूंढने होंगे जिनसे विरोधी गुटों के बीच अविश्वास का निराकरण हो, और परस्पर सद्भाव की स्थापना की जा सके। इस लक्ष्य की प्राप्ति के लिए पारस्परिक वार्ताओं, सम्मेलनों, जनसंपर्क साधनों द्वारा जनसाधारण को शिक्षित करने में काफी लाभ हो सकता है। राज्यों के बीच लोगों के आनेजाने को प्रोत्साहन देना होगा। अंतर्राज्यीय वैज्ञानिक, सांस्कृतिक, शैक्षणिक और आर्थिक आदान प्रदान एवं सहमति से लोगों के बीच वर्तमान व्यवधानों को समाप्त करना होगा। ऐसे

प्रोग्रामों द्वारा हर राज्य के लोग दूसरे राज्यों की भाषा, इतिहास, संस्कृति और उपलब्धियों से परिचित हो सकेंगे। इस प्रकार के और भी अनेक उपाय सुझाए जा सकते हैं। इन सब का लक्ष्य यही है कि देश की एकता बनी रहे, और इसको प्रोत्साहन मिलता रहे। विभिन्न वर्गों के हितों की समान सुरक्षा बहुत ज़रूरी है। भाषा की आड़ लेकर यदि किसी वर्ग को अधिक लाभ पहुंचाने की कोशिश की गई, तो परिणाम, अनिवार्यत, घातक होंगे। भाषा के विषय पर कानूनी और राजनीतिक कलाबाज़ी का प्रदर्शन हो चुका है। अब आवश्यकता इस बात की है कि समाजशास्त्रियों, भाषाशास्त्रियों और अन्य विशेषज्ञों को अवसर दिया जाए, और वे स्थिति में जूझें तथा समस्या का सर्वथा सही हल निकालें।

संदर्भ एवं टिप्पणियां

1 भारत, राजभाषा पर संसदीय समिति, 1957, रिपोर्ट, नई दिल्ली, गृह मंत्रालय, 1959 पृष्ठ 13

2 भारत, राजभाषा आयोग की रिपोर्ट, 1955-56, नई दिल्ली, गृह मंत्रालय, 1957, पृष्ठ 412

3 संविधान के अनुच्छेद 77(1) के अनुसार, "भारत सरकार का समस्त अधिशासी कार्य राष्ट्रपति के नाम पर किया जाएगा", परंतु अनुच्छेद 74 (1) के अनुसार, अपने कार्य वहन में राष्ट्रपति के लिए एक मंत्रिपरिषद् होगी जिसके नेता होंगे प्रधानमंत्री इसलिए राष्ट्रपति का आदेश भारत सरकार की नीति का द्योतक कहा जाता है

4 जो विधेयक सरकार नहीं, अपितु एक प्राइवेट सदस्य पेश करे, उन्हें गैरसरकारी बिल कहते हैं

5 फ्रैंक एंथनी का कहना था कि देश में एंग्लो इंडियन लोगों की संख्या 150,000 है। जिनकी मातृभाषा अंग्रेज़ी है

6. देखिए परिशिष्ट V और VI, इनमें विभिन्न विधानसभाओं में अंग्रेज़ी और भारतीय भाषाओं के इस्तेमाल की रूपरेखा मिल सकती है

7. भारत, लोकसभा, बहस, नई दिल्ली, लोकसभा सेक्रेटेरिएट, 1959, ग्रंथ 31, संख्या 61-65, मई 8, 1959, पृष्ठ 15967-68

8 भारत, लोकसभा, बहस, नई दिल्ली, लोकसभा सेक्रेटेरिएट, 1959, ग्रंथ 32, संख्या 1-10 अगस्त 7, 1959, पृष्ठ 1298-99

9. वही, पृष्ठ 1331.

10 भारत, लोकसभा बहस नई दिल्ली, लोकसभा सेक्रेटेरिएट, 1963, ग्रंथ 17, संख्या 41 50 तीसरी ग्रंथमाला, अप्रैल 13 24, 1963 पृष्ठ 11633

11 वही, पृष्ठ 11731

12 वही पृष्ठ 11660

13 वही, पृष्ठ 11401

14 देखिए परिशिष्ट XI

15 भारत, लोकसभा बहस ग्रंथ 38 संख्या 1-10 फरवरी 18, 1965, नई दिल्ली, लोकसभा सेक्रेटेरिएट, 1961, पृष्ठ 240

16 अनुच्छेद 210 (1) भाग XVII मे कुछ भी लिखे रहने के बावजूद परतु अनुच्छेद 348 के अधीन राज्य विधानसभाओ म कार्यवाही उनकी अपनी अपनी राजभाषा एव राजभाषाओं अथवा हिंदी अथवा अंग्रेजी म चलाई जाएगी

(2) यदि कोई विधानसभा कानून बनाकर अलग से कोई नियम निर्धारित न कर लेगी तो स विधान क प्रारभ स पद्रह वर्ष की अवधि समाप्त होन क उपरान्त इस अनुच्छेद का लागू करते समय 'अथवा अग्रेजी में' शब्दो को विलुप्त माना जाएगा

17 भारत, लोकसभा, बहस, ग्रंथ 38, स 1 10, फरवरी 1965, पृष्ठ 265-269

18 भारत असाधारण राजपत्र, जनवरी 8, 1968 नई दिल्ली, प्रकाशन मैनेजर, 1968, अधिनियम तथा सकल्प का पूरा विवरण इस अध्याय के अंत मे भी देखिए

19 भारत, लोकसभा, बहस, नई दिल्ली, लोकसभा 1967 ग्रंथ 10, संख्या 11 20, दिसबर 8, 1967 पष्ठ 5785

20 भारत, लोकसभा, बहस, नई दिल्ली, लोकसभा 1967, ग्रंथ 11, दिसबर 12-23, 1967

21 (i) औसत बिक्री की संख्याए 1966 की हैं दैनिक समाचारपत्र 'दि हिंदू' की बिक्री दक्षिण से प्रकाशित होने वाले सभी पत्रो मे सर्वाधिक थी

(ii) उस समय लगभग 440 कॉलम सेंटीमीटर मे समाचार का एक पृष्ठ बनता था, बाद म इस रचना को कुछ बदल दिया गया

22 देखिए परिशिष्ट

23 विधेयक और प्रस्ताव लोकसभा न 16 दिसबर, 1967 को और राज्यसभा न 21 दिसबर, 1967 को पारित किए थे तदुपरात ये राष्ट्रपति की मजूरी के लिए भेजे गए थे

24 भाषा समस्या और इस सबध म भारतीय समाचारपत्रो (जनसपर्कसाधनो) की भूमिका' के विषय पर काम करने से अनेक रोचक तथ्यो का पता चल सकता है

25 इस प्रकार के प्रदर्शनो का आयोजन थोडा बहुत अभी तक चल रहा है, जिससे उत्तर और दक्षिण के बीच राष्ट्रीय भावात्मक एकता को काफी क्षति पहुची है भाषा के नाम पर 26 जनवरी, 1979 ई को तमिलनाडु राज्य के कुछ शहरो मे यत्रतत्र तोडफोड की कार्यवाहिया हुई यह दिन भारत का गणराज्य दिवस है, परतु राज्य के कुछ नगरों

में इसे हिंदी विरोधी दिवस के रूप में मनाया गया, यद्यपि मुख्यमंत्री एम जा रामचंद्रन ने भूतपूर्व मुख्यमंत्री करुणानिधि जिन्होंने मद्रास मे हिंदी विरोधी एक रैली का आयोजन किया, से अपील की कि वे कोई ऐसा कदम न उठाए जिसके कारण तमिलनाडु के लोगो को शर्म के मारे सिर झुकाना पडे, परतु इस बात का कोई असर न हुआ मद्रास मे काली कमीजें पहने और 'हिंदी मुर्दाबाद' के नारे लगाते हुए एक जुलूस निकाला गया और इसकी प्रतिक्रिया मे पटना विश्वविद्यालय के विद्यार्थी सघ तथा बिहार नव-निर्माण समिति ने 'अंग्रेज़ी हटाओ' का एक सयुक्त आंदोलन शुरू कर दिया. तमिलनाडु में कुछ स्थानो, बसों एव गाडियो पर हिंदी मे लिखे नामपट्टो को पोत दिया गया, और कुछ एक को उतार फेंक दिया गया. यह भी माग की गई कि पोस्टकार्डों, मनिआर्डर-फार्मों तथा बैंकों के चैकों पर हिंदी का प्रयोग खत्म कर दिया जाए. इसके एक सप्ताह बाद तमिलनाडु विधान सभा ने नेहरू के आश्वासन को संविधान में दर्ज करने के लिए एक प्रस्ताव पर बहस की. (देखिए · दि टाइम्ज़ ऑफ इंडिया, नई दिल्ली, जनवरी 26, 1979 ई. ; दि हिंदू, मद्रास, अंतर्राष्ट्रीय सस्करण, फ़रवरी 3, 1979 ई. और समुद्रपार के दि हिंदुस्तान टाइम्ज, नई दिल्ली, फ़रवरी 8, 1979 ई.)

26 भारत, लोकसभा, बहस, नई दिल्ली, लोकसभा सेक्रेटेरिएट, 1959, ग्रंथ 17, सख्या 41-50, अप्रैल 13-24, 1963, पृष्ठ 11476,

27. वही, पृष्ठ 11634.

28 .भारत, सविधानसभा, बहस, नई दिल्ली, संविधान सभा, 1949, ग्रंथ 9, पृष्ठ 1443

राजभाषा अधिनियम, 1963

[राजभाषा (संशोधन) अधिनियम, 1967 द्वारा 1967 में संशोधित]

उन भाषाओं का, जो संघ के राजकीय प्रयोजनों, संसद में कार्य के संव्यवहार, केंद्रीय और राज्य अधिनियमों और उच्च न्यायालयों में कतिपय प्रयोजनों के लिए प्रयोग में लाई जा सकेंगी, उपबंध करने के लिए अधिनियम।

भारत गणराज्य के चौदहवें वर्ष में संसद द्वारा निम्नलिखित रूप में यह अधिनियमित हो,

(1) **संक्षिप्त नाम और प्रारंभ** (1) यह अधिनियम राजभाषा अधिनियम, 1963 कहा जा सकेगा।

(2) धारा 3, जनवरी 1965 ई. के 26वें दिन को प्रवृत्त होगी और इस अधिनियम के शेष उपबंध उस तारीख को प्रवृत्त होंगे जिसे केंद्रीय सरकार, शासकीय राजपत्र में अधिसूचना द्वारा नियत करे और इस अधिनियम के विभिन्न उपबंधों के लिए विभिन्न तारीखें नियत की जा सकेंगी।

2 **परिभाषाएं** इस अधिनियम में, जब तक कि प्रसंग से अन्यथा अपेक्षित न हो,

(क) 'नियत दिन' से, धारा 3 के संबंध में, जनवरी, 1965 ई. का 26वां दिन अभिप्रेत है और इस अधिनियम के किसी अन्य उपबंध के संबंध में वह दिन अभिप्रेत है जिस दिन वह उपबंध प्रवृत्त होता है।

(ख) 'हिंदी' से वह हिंदी अभिप्रेत है जिसकी लिपि देवनागरी है।

3 **संघ के प्रशासकीय प्रयोजनों के लिए और संसद में प्रयोग के लिए अंग्रेजी भाषा का बना रहना** (1) संविधान के प्रारंभ से पंद्रह वर्ष की कालावधि के समाप्त हो जाने पर भी, हिंदी के अतिरिक्त अंग्रेजी भाषा नियत दिन से ही

(क) संघ के उन राजकीय प्रयोजनों के लिए जिनके लिए वह उस दिन से ठीक पहले प्रयोग में लाई जाती थी, तथा

(ख) संसद में कार्य के संव्यवहार के लिए, प्रयोग में लाई जाती रह सकेगी

परन्तु संघ और किसी ऐसे राज्य के बीच, जिसने हिंदी को अपनी राजभाषा के रूप में नहीं अपनाया है, पत्रादि के प्रयोजनों के लिए अंग्रेजी भाषा प्रयोग में लाई जाएगी

परंतु यह और कि जहां किसी ऐसे राज्य के, जिसने हिंदी को अपनी राजभाषा के रूप में अपनाया है और किसी अन्य राज्य के, जिसने हिंदी को अपनी राजभाषा के रूप मे नहीं अपनाया है, बीच पत्रादि के प्रयोजन के लिए हिंदी को प्रयोग में लाया जाता है, वहां हिंदी मे ऐसे पत्रादि के साथसाथ उसका अनुवाद अंग्रेजी भाषा मे भेजा जाएगा :

परंतु यह और भी कि इस उपधारा की किसी भी बात का यह अर्थ नहीं लगाया जाएगा कि वह किसी ऐसे राज्य को, जिसने हिंदी को अपनी राजभाषा के रूप में नहीं अपनाया है, संघ के साथ या किसी ऐसे राज्य के साथ जिसने हिंदी को अपनी राजभाषा के रूप में अपनाया है, या किसी अन्य राज्य के साथ, उसकी सहमति से पत्रादि के प्रयोजनों के लिए हिंदी को प्रयोग में लाने से निवारित करती है और ऐसे किसी मामले मे उस राज्य के साथ पत्रादि के प्रयोजनो के लिए अंग्रेजी भाषा का प्रयोग बाध्यकर न होगा।

(2) उपधारा (1) मे अंतर्विष्ट किसी बात के होते हुए भी, जहां पत्रादि के प्रयोजनों के लिए हिंदी या अंग्रेजी भाषा,

(i) केंद्रीय सरकार के एक मंत्रालय या विभाग या कार्यालय के और दूसरे मंत्रालय या विभाग या कार्यालय के बीच;

(ii) केंद्रीय सरकार के एक मंत्रालय या विभाग या कार्यालय के और केंद्रीय सरकार के स्वामित्व मे के या नियंत्रण मे के किसी निगम या कंपनी या उसके किसी कार्यालय के बीच;

(iii) केंद्रीय सरकार के स्वामित्व में के या नियंत्रण में के किसी निगम या कंपनी या उसके किसी कार्यालय के और किसी अन्य ऐसे निगम या कंपनी या कार्यालय के बीच;

प्रयोग मे लाई जाती है जहां उस तारीख तक, जब तक पूर्वोक्त संबंधित मंत्रालय, विभाग, कार्यालय या निगम या कंपनी का कर्मचारीवृंद हिंदी का कार्यसाधक ज्ञान प्राप्त नहीं कर लेता, ऐसे पत्रादि का अनुवाद, यथास्थिति, अंग्रेजी भाषा या हिंदी मे भी दिया जाएगा।

(3) उपधारा (1) मे अंतर्विष्ट किसी बात के होते हुए भी, हिंदी और अंग्रेजी भाषा दोनों ही,

(i) संकल्पों, साधारण आदेशों, नियमो, अधिसूचनाओं, प्रशासनिक या अन्य प्रतिवेदनो या प्रेस विज्ञप्तियो के लिए, जो केंद्रीय सरकार द्वारा या उसके किसी मंत्रालय, विभाग या कार्यालय द्वारा या केंद्रीय सरकार के स्वामित्व मे के या नियंत्रण मे के किसी निगम या कंपनी द्वारा या ऐसे निगम या कंपनी के किसी कार्यालय द्वारा निकाले जाते है या किए जाते है,

(ii) संसद के किसी सदन या सदनों के समक्ष रखे गए प्रशासनिक तथा प्रतिवेदनों और राजकीय कागज़ पत्रों के लिए,

(iii) केंद्रीय सरकार या उसके किसी मंत्रालय, विभाग या कार्यालय द्वारा या उसकी ओर से या केंद्रीय सरकार के स्वामित्व में के या नियंत्रण में के किसी निगम या कंपनी द्वारा या ऐसे निगम या कंपनी के किसी कार्यालय द्वारा निष्पादित संविदाओं और करारों के लिए तथा निकाली गई अनुज्ञप्तियों, अनुज्ञापत्रों, सूचनाओं और निविदा प्ररूपों के लिए

प्रयोग में लाई जाएगी।

(4) उपधारा (1) या उपधारा (2) या उपधारा (3) के उपबंधों पर प्रतिकूल प्रभाव डाले बिना यह है कि केंद्रीय सरकार धारा 8 के अधीन बनाए गए नियमों द्वारा उस भाषा या उन भाषाओं का उपबंध कर सकेगी जिसे या जिन्हें संघ के राजकीय प्रयोजनों के लिए, जिसके अंतर्गत किसी मंत्रालय, विभाग, अनुभाग या कार्यालय का कार्यकरण है, प्रयोग में लाया जाना है और ऐसे नियम बनाने में राजकीय कार्य के शीघ्रता और दक्षता के साथ निपटारे का तथा जनसाधारण के हितों का सम्यक् ध्यान रखा जाएगा और इस प्रकार बनाए गए नियम विशिष्टतया यह सुनिश्चित करेंगे कि जो व्यक्ति संघ के कार्यकलाप के संबंध में सेवा कर रहे हैं और जो या तो हिंदी में या अंग्रेजी भाषा में प्रवीण हैं वे प्रभावी रूप से अपना काम कर सकें और यह भी कि केवल इस आधार पर कि वे दोनों ही भाषाओं में प्रवीण नहीं हैं, उनका कोई अहित नहीं होता है।

(5) उपधारा (1) के खंड (क) के उपबंध और उपधारा (2), उपधारा (3) और उपधारा (4) के उपबंध तब तक प्रवृत्त बने रहेंगे जब तक उनमें वर्णित प्रयोजनों के लिए अंग्रेजी भाषा का प्रयोग समाप्त कर देने के लिए ऐसे सभी राज्यों के विधानमंडलों द्वारा, जिन्होंने हिंदी को अपनी राजभाषा के रूप में नहीं अपनाया है, संकल्प पारित नहीं कर दिए जाते और जब तक पूर्वोक्त संकल्पों पर विचार कर लेने के पश्चात् ऐसी समाप्ति के लिए संसद के हर एक सदन द्वारा संकल्प पारित नहीं कर दिया जाता।

4. **राजभाषा के संबंध में समिति** (1) जिस तारीख को धारा 3 प्रवृत्त होती है उससे दस वर्ष की समाप्ति के पश्चात् राजभाषा के संबंध में एक समिति, इस विषय का संकल्प संसद के किसी सदन में राष्ट्रपति की पूर्व मंजूरी से प्रस्तावित और दोनों द्वारा पारित किए जाने पर, गठित की जाएगी।

(2) इस समिति में तीस सदस्य होंगे जिनमें से बीस लोकसभा के सदस्य होंगे तथा दस राज्यसभा के सदस्य होंगे, जो क्रमशः लोकसभा के सदस्यों तथा

राज्यसभा के सदस्यों द्वारा आनुपातिक प्रतिनिधित्व पद्धति के अनुसार एकल संक्रमणीय मत द्वारा निर्वाचित होंगे।

(3) इस समिति का कर्त्तव्य होगा कि वह सघ के राजकीय प्रयोजनो के लिए हिंदी के प्रयोग में की गई प्रगति का पुनर्विलोकन करे और उस पर सिफ़ारिशें करते हुए राष्ट्रपति को प्रतिवेदन करे और राष्ट्रपति उस प्रतिवेदन को संसद के हर एक सदन के समक्ष रखवाएगा और सभी राज्य सरकारो को भिजवाएगा।

(4) राष्ट्रपति उपधारा (3) में विनिर्दिष्ट प्रतिवेदन पर और उस पर राज्य सरकारों ने यदि कोई मत अभिव्यक्त किए हों तो उन पर विचार करने के पश्चात् उस समस्त प्रतिवेदन के या उसके किसी भाग के अनुसार निदेश निकाल सकेगा :

परंतु इस प्रकार निकाले गए निदेश धारा 3 के उपबंधों से असंगत नहीं होंगे।

5. **केंद्रीय अधिनियमों आदि का प्राधिकृत हिंदी अनुवाद :** (1) नियत दिन को और उसके पश्चात् शासकीय राजपत्र मे राष्ट्रपति के प्राधिकार से प्रकाशित :

(क) किसी केंद्रीय अधिनियम का या राष्ट्रपति द्वारा प्रख्यापित किसी अध्यादेश का; अथवा

(ख) संविधान के अधीन या किसी केंद्रीय अधिनियम के अधील निकाले गए किसी आदेश, नियम, विनियम या उपविधि का; हिंदी मे अनुवाद उसका हिंदी में प्राधिकृत पाठ समझा जाएगा;

(2) नियत दिन से ही उन सब विधेयकों के, जो संसद के किसी भी सदन में पुनर्स्थापित किए जाने हों और उन सब संशोधनों के, जो उनके सबध मे संसद के किसी भी सदन में प्रस्तावित किए जाने हों, अंग्रेजी भाषा के प्राधिकृत पाठ के साथसाथ उनका हिंदी में अनुवाद भी होगा जो ऐसी रीति से प्राधिकृत किया जाएगा जो इस अधिनियम के अधीन बनाए गए नियमों द्वारा विहित की जाए।

6. **कतिपय दशाओं में राज्य अधिनियमों का प्राधिकृत हिंदी अनुवाद :** जहां किसी राज्य के विधानमंडल ने उस राज्य के विधानमंडल द्वारा पारित अधिनियमों मे अथवा उस राज्य के राज्यपाल द्वारा प्रख्यापित अध्यादेशो मे प्रयोग के लिए हिंदी से भिन्न कोई भाषा विहित की है वहा, संविधान के अनुच्छेद 348 के खंड (3) द्वारा अपेक्षित अंग्रेज़ी भाषा में उसके अनुवाद के अतिरिक्त, उसका हिंदी अनुवाद उस राज्य के शासकीय राजपत्र मे, उस राज्य के राज्यपाल के प्राधिकार से, नियत दिन को या उसके पश्चात् प्रकाशित किया

जा सकेगा और ऐसी दशा मे ऐसे किसी अधिनियम या अध्यादेश का हिंदी अनुवाद हिंदी भाषा मे उसका प्राधिकृत पाठ समझा जाएगा।

7 उच्च न्यायालयों के निर्णय आदि मे हिंदी या अन्य राजभाषा का वैकल्पिक प्रयोग नियत दिन से ही या तत्पश्चात् किसी भी दिन से किसी राज्य का राज्यपाल, राष्ट्रपति की पूर्वसम्मति से अंग्रेज़ी भाषा के अतिरिक्त हिंदी या उस राज्य की राजभाषा का प्रयोग उस राज्य के उच्च न्यायालय द्वारा पारित या दिए गए किसी निर्णय, डिक्री या आदेश के प्रयोजनो के लिए प्राधिकृत कर सकेगा और जहा कोई निर्णय, डिक्री या आदेश (अंग्रेज़ी भाषा से भिन्न) ऐसी किसी भाषा मे पारित किया या दिया जा सकता है वहा उसके साथसाथ उच्च न्यायालय के प्राधिकार से निकाला गया अंग्रेज़ी भाषा मे उसका अनुवाद भी होगा।

8 नियम बनाने की शक्ति (1) केंद्रीय सरकार इस अधिनियम के प्रयोजनो को कार्यान्वित करने के लिए नियम शासकीय राजपत्र मे अधिसूचना द्वारा बना सकेगी।

(2) इस धारा के अधीन बनाया गया हर नियम बनाए जाने के पश्चात यथासमय शीघ्र ससद के हर एक सदन के समक्ष, उस समय जब वह सत्र मे हो, कुल मिलाकर तीस दिन की कालावधि के लिए जो एक सत्र मे या दो क्रमवर्ती सत्रो मे समाविष्ट हो सकेगी, रखा जाएगा और यदि उस सत्र के जिसमे वह ऐसे रखा गया हो या ठीक पश्चात्वर्ती सत्र के अवसान के पूर्व दोनो सदन उस नियम मे कोई उपातर करने के लिए सहमत हो जाए या दोनो सदन सहमत हो जाए कि वह नियम नही बनाया जाना चाहिए तो तत्पश्चात् यथास्थिति वह नियम ऐसे उपातरित रूप मे ही प्रभावशाली होगा या उसका कोई भी प्रभाव न होगा किंतु इस प्रकार कि ऐसा कोई उपातर या वातिलकरण उस नियम के अधीन पहले की गई किसी बात की विधिमान्यता पर प्रतिकूल प्रभाव डाले बिना होगा।

9 कतिपय उपबधों का जम्मू और कश्मीर पर लागू न होना धारा 6 और धारा 7 के उपबध जम्मू और कश्मीर राज्य पर लागू न होंगे।

(स 5-8-65-राजभाषा, भारत सरकार, गृह मत्रालय, नई दिल्ली-1, दिनाक 18 जनवरी, 1968, 28 पौष, 1889)

सकल्प

ससद के दोनो सदनो द्वारा पारित निम्नलिखित सरकारी सकल्प आम जानकारी के लिए प्रकाशित किया जाता है

1 "जबकि सविधान के अनुच्छेद 343 के अनुसार सघ की राजभाषा हिंदी रहेगी और उसके अनुच्छेद 351 के अनुसार हिंदी भाषा की प्रसार वृद्धि

करना और उसका विकास करना ताकि वह भारत की सामाजिक सम्कृति के सब तत्त्वो की अभिव्यक्ति का माध्यम हो सके, सघ का कर्त्तव्य है; यह सभा संकल्प करती है कि हिंदी के प्रसार एव विकास की गति बढ़ाने के हेतु तथा संघ के विभिन्न राजकीय प्रयोजनों के लिए उत्तरोत्तर इसके प्रयोग के हेतु भारत सरकार द्वारा एक अधिक गहन एव व्यापक कार्यक्रम तैयार किया जाएगा और उसे कार्यान्वित किया जाएगा और किए जाने वाले उपायों एव की जाने वाली प्रगति की विस्तृत वार्षिक मूल्यांकन रिपोर्ट ससद की दोनो सभाओ के पटल पर रखी जाएगी, और सब राज्य सरकारों को भेजी जाएगी।

2. जबकि सविधान की आठवी अनुसूची में हिंदी के अतिरिक्त भारत की 14 मुख्य भाषाओ का उल्लेख किया गया है, और देश की शैक्षणिक एव सांस्कृतिक उन्नति के लिए यह आवश्यक है कि इन भाषाओं के पूर्ण विकास हेतु सामूहिक उपाय किए जाने चाहिए,

यह सभा संकल्प करती है कि हिंदी के सायसाथ इन सब भाषाओं के समन्वित विकास के हेतु भारत सरकार द्वारा राज्य सरकारों के सहयोग से एक कार्यक्रम तैयार किया जाएगा और उसे कार्यान्वित किया जाएगा ताकि वे शीघ्र समृद्ध हो और आधुनिक ज्ञान के संचार का प्रभावी माध्यम बनें।

3. जबकि एकता की भावना के सवर्धन तथा देश के विभिन्न भागों मे जनता मे संचार की सुविधा के हेतु यह आवश्यक है कि भारत सरकार द्वारा राज्य सरकारों के परामर्श से तैयार किए गए त्रि-भाषा सूत्र को सभी राज्यो मे पूर्णत कार्यान्वित करने के लिए प्रभावी उपाय किए जाने चाहिए,

यह सभा संकल्प करती है कि हिंदी भाषी क्षेत्रों में, हिंदी तथा अंग्रेज़ी के अतिरिक्त एक आधुनिक भारतीय भाषा के दक्षिण भारत की भाषाओ मे से किसी एक को तरजीह देते हुए और अहिंदी भाषी क्षेत्रों मे प्रादेशिक भाषाओ एव अंग्रेज़ी के साथसाथ हिंदी के अध्ययन के लिए उस सूत्र के अनुसार प्रबंध किया जाना चाहिए।

4. और जबकि यह सुनिश्चित करना आवश्यक है कि संघ की लोक सेवाओं के विषय मे देश के विभिन्न भागों के लोगों के न्यायोचित दावों और हितों का पूर्ण परित्राण किया जाए; यह सभा संकल्प करती है :

(क) कि उन विशेष सेवाओं अथवा पदो को छोड़कर जिनके लिए ऐसी

किसी सेवा अथवा पद के कर्त्तव्यो के सतोषजनक निष्पादन के हेतु केवल अग्रेजी अथवा केवल हिंदी अथवा दोनो जैसी कि स्थिति हो, का उच्च स्तर का ज्ञान आवश्यक समझा जाए, सघ सेवाओं अथवा पदो के लिए भर्ती करने के हेतु उम्मीदवारो के चयन के समय हिंदी अथवा अग्रेजी मे से किसी एक का ज्ञान अनिवार्यत अपेक्षित होगा, और

(ख) कि परीक्षाओ की भावी योजना, प्रक्रिया सबधी पहलुओं एव समय के विषय मे सघ लोक सेवा आयोग के विचार जानने के पश्चात अखिल भारतीय एव उच्चतर केंद्रीय सेवाओं सबधी परीक्षाओ के लिए सविधान की आठवी अनुसूची मे सम्मिलित सभी भाषाओं तथा अग्रेजी को वैकल्पिक माध्यम के रूप मे रखने की अनुमति होगी।

आर डी थापर
सयुक्त सचिव, भारत सरकार

आदेश

आदेश दिया जाता है कि इस सकल्प की प्रति सभी राज्य सरकारो, सघ राज्य क्षेत्रो तथा सरकार के मत्रालयो को भेज दी जाए।

यह भी आदेश दिया जाता है कि इस सकल्प को भारत के राजपत्र मे आम जानकारी के लिए प्रकाशित किया जाए।

अध्याय चार

राजनीतिक दल एवं भाषा नीति

संसदीय लोकतंत्र में किसी भी समस्या का अध्ययन राजनीतिक दलों को अछूता रखकर नहीं किया जा सकता। भाषा की समस्या के प्रसंग में यह बात और भी सत्य है, क्योंकि यह प्रश्न जनसमूह की भावनाओं से जुड़ा हुआ है। भारत में राष्ट्रीय, राज्यीय एवं स्थानीय स्तर पर अनेक राजनीतिक दल हैं, परंतु इस अध्याय में केवल उन्हीं कुछ पार्टियों का वर्णन किया गया है जिनके 1977 ई. के आम चुनाव से पूर्व लोकसभा में कम से कम पंद्रह सदस्य थे। जनता पार्टी दल का भी जिक्र किया गया है, जिसने 1977 के निर्वाचन के बाद केंद्र में सरकार बनाई जो 1980 ई. के शुरू में हुए निर्वाचन पूर्व तक रही। इन पार्टियों के नाम इस प्रकार हैं :

दि इंडियन नेशनल कांग्रेस अर्थात् भारतीय राष्ट्रीय कांग्रेस ; दि कम्युनिस्ट पार्टी ऑफ़ इंडिया (मार्क्सवादी) अर्थात् मार्क्सवादी साम्यवादी दल; दि कम्युनिस्ट पार्टी ऑफ़ इंडिया (सी. पी. आई.) अर्थात् भारतीय साम्यवादी पार्टी; जनसंघ; द्रविड़ मुन्नेत्र कड़गम और जनता पार्टी।[1]

कांग्रेस :

कांग्रेस पार्टी की नीतियों के निर्माण में महात्मा गांधी और फिर जवाहरलाल नेहरू ने बहुत बड़ी भूमिका अदा की। इसलिए भाषा के प्रश्न पर कांग्रेस की नीतियों को समझने के लिए उनके विचारों की जानकारी प्राप्त करना लाभप्रद होगा।

1909 ई. में गांधी जी ने लिखा था : "जितनी शक्ति हम अंग्रेजी सीखने में लगाते हैं यदि इससे आधी भी हम भारतीय भाषाओं के सीखने में लगाएं तो देश का वातावरण बदल जाएगा और काफी उन्नति हो सकेगी। अंग्रेजी के मुकाबले में भारतीय भाषाओं के प्रति गांधी जी में यह अभिरुचि अंत तक

बनी रही। अपनी मृत्यु 30 जनवरी, 1948 ई के कुछ मास पूर्व, 11 सितबर, 1947 ई के 'हरिजन' पत्र म उन्होने लिखा था

प्रातीय भाषाओ के प्रतिष्ठापन मे एक एक दिन का विलब देश के लिए सास्कृतिक हानि है यह कहना कि कुछ वर्षो तक न्यायालयो, स्कूलो और दफ्तरो की भाषा नही बदली जा सकती, मानसिक आलस्य का प्रमाण देना है। मेरा अनुरोध है कि जिस प्रकार सफलता के साथ हमने अग्रेज अपहारी का राजनीति से बाहर निकाला, उसी प्रकार उसकी भाषा का साम्कृतिक अपहारी के रूप मे अपने देश स निर्वासित कर दें।

'भाषा का प्रश्न' शीर्षक मे 21 अगस्त, 1937 ई के 'हरिजन' मे प्रकाशित निबध म जवाहरलाल नेहरू न लिखा था

सजीव भाषा म एक प्रकार का स्पदन, सजीव परिवर्तनशीलता और गतिशीलता होती है। भाषा सदा विकासोन्मुखी रहती है और अपने बोलने वालो का दर्पण होती है। इसकी अधिरचना भले ही थोडे-से चुने हुए लोगो की सस्कृति को प्रतिबिबित करे, परतु इसकी नीव आम जनता मे होती है हमारी विकसित प्रातीय भाषाए बोलियो के स्तर पर नही हैं अत ये भाषाए हमारी शिक्षाप्रणाली और सरकारी काम का आधार होनी चाहिए केवल हिंदुस्तानी ही अखिल भारतीय भाषा बन सकती है।

1925 ई से पूर्व काग्रेस पार्टी का काय मुख्यतया अग्रेजी मे होता था। 1925 ई मे काग्रस न अपने सविधान की धारा 33 को सशोधित करके उसे निम्न रूप दिया

यथासभव काग्रेस की कार्यवाही हिंदुस्तानी के माध्यम से चलाई जाएगी और अग्रेज़ी अथवा प्रातीय भाषाओ का प्रयोग तभी किया जाएगा जब वक्ता हिंदुस्तानी बोलने मे असमर्थ हो, या जब ऐसा करना जरूरी हो। साधारणतया राज्यीय काग्रेस समितियो का काम सबधित प्रातीय भाषा मे ही चलाया जाएगा। हिंदुस्तानी का इस्तमाल भी किया जा सकता है।[3]

1950 ई मे जब देश का सविधान पारित हो गया, तो काग्रेस पार्टी ने

'हिंदुस्तानी' शब्द के स्थान पर हिंदी शब्द रख दिया, और भारतीय भाषाओं को अधिकाधिक प्रोत्साहन देने की अपनी नीति को कायम रखा। 17 मई, 1953 ई. को कांग्रेस पार्टी की कार्य समिति ने यह प्रस्ताव पास किया, "राष्ट्रीय भाषा होने के नाते हिंदी को समर्थन मिलना चाहिए, परन्तु इसके साथ प्रांतीय भाषाओं को भी अपने अपने क्षेत्र में प्रेरणा दी जानी चाहिए। राज्यों में काम सामान्यतया इन्हीं के माध्यम से चलाया जाए।"[5] उसी प्रस्ताव में कार्य समिति ने उर्दू को बढ़ावा देने की सिफ़ारिश करते हुए कहा : "यह याद रखना चाहिए कि उर्दू हिंदुस्तान की भाषा है और भारत के काफ़ी लोग इसमें लिखते हैं।"

15 अप्रैल, 1954 ई. को कांग्रेस पार्टी ने यह प्रस्ताव पास किया कि बच्चे को प्राथमिक शिक्षा उसकी मातृभाषा के माध्यम से ही दी जाए, माध्यमिक स्कूलों में हिंदी अनिवार्य विषय हो, और उच्च शिक्षा यद्यपि सामान्यतया क्षेत्रीय भाषा में दी जाए, परंतु अध्यापकों को हिंदी के माध्यम से यदाकदा अंग्रेजी द्वारा पढ़ाने की छूट होनी चाहिए। ऐसा अनुमान था कि इस प्रकार अंतर्राज्यीय सांस्कृतिक आदान प्रदान को बढ़ावा मिलेगा और संक्रांति काल में शिक्षा का स्तर भी नहीं गिरेगा। उसी वर्ष कांग्रेस ने प्रस्ताव पारित किया :

> धीरे धीरे अखिल भारतीय सेवाओं की परीक्षाएं हिंदी, अंग्रेजी और मुख्य क्षेत्रीय भाषाओं में ली जाएं और परीक्षार्थी को अपनी इच्छानुसार इसमें से किसी भी भाषा को चुनने का अधिकार हो। यदि कोई उम्मीदवार परीक्षा के लिए हिंदी अथवा क्षेत्रीय भाषा चुनता है तो उसे अलग से अंग्रेजी में भी सफलता प्राप्त करनी चाहिए। यदि किसी प्रत्याशी ने हिंदी में परीक्षा पास न कर रखी हो, तो उसके लिए हिंदी की परीक्षा पास करना अनिवार्य होना चाहिए।[6]

इस प्रकार कांग्रेस पार्टी सदैव इस बात का समर्थन करती रही कि भारतीय भाषाओं को बढ़ावा दिया जाए, हिंदी का हिंदुस्तानी स्वरूप भारत की राष्ट्रभाषा बने और अंग्रेजी का प्रयोग राष्ट्रीय जीवन में कुछ क्षेत्रों तक ही सीमित रखा जाए। इसलिए राजभाषा विधेयक, 1963 और राजभाषा (संशोधन) विधेयक, 1967 का संसद द्वारा ऐसे समय जबकि केंद्र में कांग्रेस सरकार सत्तारूढ़ थी, पास होना एक विरोधी स्थिति को सामने लाता है।

भारत की कम्युनिस्ट पार्टी (मार्क्सवादी) :

साम्यवादी (मार्कसिस्ट) दल सभी भाषाओं के लिए बराबरी के दर्जे की घोषणा

करता रहा है। इस दल के अनुसार हिंदी को किसी प्रकार तरजीह नहीं मिलनी चाहिए। केंद्र में अंग्रेजी के स्थान पर हिंदी और राज्यों में अंग्रेजी के स्थान पर क्षेत्रीय भाषाओं को लाने का काम एकसाथ होना चाहिए, और इस काम के लिए राज्यों को केंद्रीय सरकार से सहायता मिलनी चाहिए। यदि 1976 ई की लोकसभा की सदस्यता के स्वरूप (देखिए परिशिष्ट XIII) से पार्टी की व्यापक सदस्यता का कुछ अनुमान लगाया जा सकता है, तो यह कहना होगा कि पार्टी हिमायत के लिए पूरी तरह से अहिंदी भाषी राज्यों पर निर्भर रही है। शायद इसी कारण दल का दृष्टिकोण हिंदी के प्रति अधिक सहानुभूतिपूर्ण न रहा हो।

पार्टी की मांगें इस प्रकार रही हैं बच्चों और युवकों को मातृभाषा के माध्यम से शिक्षा प्राप्त करने का अधिकार होना चाहिए, राज्य के प्रशासन के लिए प्रांत की भाषा का प्रयोग होना चाहिए, सभी विधेयकों, सरकारी आदेशों और प्रस्तावों का राष्ट्रीय भाषाओं में अनुवाद होना चाहिए और उर्दू एवं इसकी लिपि की रक्षा होनी चाहिए।

भारतीय कम्युनिस्ट पार्टी

साम्यवादी दल की राष्ट्रीय परिषद ने अप्रैल, 1965 ई में निश्चित शब्दों में अंग्रेजी के स्थान पर हिंदी लाने की अत्यावश्यकता पर बल देते हुए घोषणा की

> जनसाधारण का सक्रिय संग सहयोग के जरिए, भारतीय लोकतंत्र और सांस्कृतिक जीवन के विकास की गारंटी के लिए अंग्रेजी के स्थान पर भारतीय भाषाओं की स्थापना करना अपरिहार्य है' साम्यवादी दल का यह भी मत है कि अंततोगत्वा केंद्र और राज्यों के बीच और विभिन्न राज्यों के बीच पारस्परिक पत्र-व्यवहार के लिए अंग्रेजी के स्थान पर हिंदी लाना जरूरी है।
>
> इसलिए प्रश्न यह नहीं है कि हिंदी को राज्यीय संपर्क भाषा बनाया जाए अथवा नहीं, प्रश्न यह है कि इस अनिवार्य लक्ष्य की प्राप्ति कैसे की जाए।

दल का सुझाव था कि भाषा समस्या के हल की ओर ठीक प्रगति के लिए यह आवश्यक है कि सभी क्षेत्रीय भाषाओं का समान विकास के लिए अवसर दिया जाए और हिंदी को अखिल भारतीय भाषा के रूप में स्वीकार किया जाए। दल ने उर्दू के संरक्षण की भी सिफारिश की।

जनसंघ :

वर्तमान शताब्दी के सातवें दशक में जनसंघ[6] अधिक सशक्त होने लगा। 1961 ई. के चुनावों के समय जनसंघ ने घोषणा की थी कि यदि उसे सरकार बनाने का अवसर मिलेगा तो वह हिंदी को राजभाषा बनाएगा, स्कूलों में हिंदी पढ़ना जरूरी हो जाएगा और शिक्षा संस्थाओं के पाठ्यक्रम में संस्कृत अनिवार्य भाषा के रूप में नियत हो जाएगी।

1967 ई. के चुनावों के समय अपने घोषणापत्र में जनसंघ ने लोगों को बतलाया कि उसकी नीति यह है कि संस्कृत को देश की राष्ट्रीय भाषा घोषित किया जाए, और विशेष महत्त्व के सभी अवसरों पर इसका प्रयोग किया जाए, सरकारी काम के लिए केंद्र में हिंदी और राज्यों में राज्यीय भाषाओं को प्रोत्साहन दिया जाए और कर्मचारियों को दस साल तक अंग्रेजी के इस्तेमाल करने की छूट होनी चाहिए।

1971 ई. में जनसंघ की भाषा नीति में एक और परिवर्तन हुआ। इसने अपनी नीति संबंधी घोषणापत्र में बताया कि अंग्रेजी के स्थान पर भारतीय भाषाओं की स्थापना की जाए, आगामी पांच वर्षों में हिंदी को देश की संपर्क भाषा बना दिया जाए। इसने उर्दू के लिए देवनागरी लिपि की सिफारिश की क्योंकि उर्दू हिंदी की केवल एक शैली मात्र है।

द्रविड़ मुन्नेत्र कड़गम :

1967 ई. के अपने घोषणापत्र में डी. एम. के. ने कहा था कि वह हिंदी के शासन का विरोध करेगी, तमिल के विकास के लिए प्रयत्नशील रहेगी, और जोरदार आग्रह करेगी कि जब तक तमिल और शेष चौदह राष्ट्रीय भाषाएं राजभाषा स्वीकार नहीं हो जातीं, अंग्रेजी का पद यथापूर्व बना रहे। डी.एम.के. केवल तमिलनाडु तक सीमित राजनीतिक पार्टी है, इस कारण भाषा के सवाल पर उसकी इस प्रकार की घोषणाओं की वजह समझ में आ सकती है।[7] पहली अगस्त, 1981 ई. को अर्थात् सातवीं लोकसभा में विभिन्न पार्टियों की स्थिति के अवलोकन से इस कथन की और भी पुष्टि हो जाती है कि डी. एम. के. एक क्षेत्रीय पार्टी है। इस पार्टी के लोकसभा के सभी 16 सदस्यों का चुनाव तमिलनाडु से ही हुआ।

जनता पार्टी :

जनता पार्टी का राजनीतिक दल के रूप में जन्म 1977 ई. के आम चुनावों के अवसर पर हुआ। पार्टी के लोक घोषणापत्र में भाषा के प्रश्न का कोई ज़िक्र नहीं था। उसके निर्वाचन घोषणापत्र में बल नागरिक स्वतंत्रता पर दिया गया

था। शायद पार्टी ने राजनीतिक सत्ता प्राप्त करने के ममूव के लिए भाषा के विस्फोटक मामले को उस समय न छूना ही ठीक समझा हो। जनता पार्टी की विभिन्न सगठन इकाइयो, अर्थात कांग्रेस (आ), जनसघ और समाजवादी दल के भाषा के प्रश्न पर अलग अलग वायदे थे। उदाहरणार्थ, यद्यपि कांग्रेस(ओ) के विशिष्ट नेता मोरारजी देसाई, जो 1977 ई के आम चुनावो के बाद जनता पार्टी के नेता चुने गए और देश के प्रधानमंत्री बने, हमेशा हिंदी के प्रमुख समर्थक माने जाते रहे, तथापि कांग्रेस (ओ) की भाषा नीति कांग्रेस व दूसरे दल मे जिनके हाथ मे छठे आम चुनावो मे पहले देश के शासन की बागडोर थी, अलग नही थी। 1969 ई तक कांग्रेस(ओ)का कोई अलग अस्तित्व नही था।

जनसघ की नीति हिंदी के पक्ष मे मानी जाती है। बीसवी शताब्दी के सातवें दशक के आरभ मे समाजवादी दल ने 'अग्रेज़ी हटाओ' आदोलन शुरू किया था। जनता पार्टी के वरिष्ठ नेताओ ने सरकार बनाने के बाद भाषा समस्या सबधी जो बयान दिए, उनमे भी उनके इस मामले मे परस्पर विभिन्न मतो का पता चलता है। भाषा के प्रश्न पर दल की सम्मिलित नीति अभी तय भी नही हुई थी कि 1979 ई मे पार्टी दो हिस्सो मे बट गई, और शासन की बागडोर जनता पार्टी के उस वर्ग के हाथो मे आ गई जिसने अपना नाम 'लोकदल' निश्चित किया। जनता पार्टी अथवा लोकदल की कोई भाषा नीति जनता के समक्ष आने से पूर्व सातवें आम चुनावो मे दोनो पार्टिया हार गईं और 1980 ई के आरभ मे कांग्रेस (इ) पुन सत्तारूढ हो गई।

अग्रेज़ी के हिमायतियो का विचार था कि जनता पार्टी हिंदी का कट्टर समर्थन करेगी। उनका यह सदेह शायद निम्नलिखित बातो पर आधारित था। तत्कालीन जनता पार्टी के नेता मोरारजी देसाई कभी भी अग्रेज़ी के समर्थक नही थे। जब वे बबई के मुख्यमत्री थे तो उन्होंने एक आदेश जारी किया था कि केवल एग्लो इडियन विद्यार्थियो को अग्रेज़ी के माध्यम मे पढाया जाएगा। दूसरा, जनता पार्टी के बहुत से सदस्य या तो पहले जनसघ मे थे या उन राजनीतिक पार्टियो के सदस्य थे जो सदा हिंदी की समर्थक रही। इसके अतिरिक्त जनता पार्टी के टिकट पर चुने गए अधिकाश (299 मे से 221) प्रतिनिधि उत्तर भारत के हिंदी भाषा भाषी प्रातो से सबध रखते थे (देखिए परिशिष्ट XIII—विवरण II)। हिंदी प्राती तथा सघ राज्य क्षेत्र दिल्ली के लिए लोकसभा की कुल सीटो तथा इनके लिए 1977 ई मे चुने गए जनता पार्टी के सदस्यो की सख्या इस प्रकार थी

जनता पार्टी की भाषा नीति पर प्रकाश डालते हुए 14 अप्रैल, 1978 ई को लोकसभा मे गृहमत्री ने कहा कि सभी भारतीय भाषाओ को समान प्रोत्साहन दिया जाएगा। अपने बयान मे उन्होंने कहा कि जनता सरकार जवाहरलाल

1977 ई. के चुनावों में हिंदी क्षेत्रों से चुने गए जनता पार्टी के सदस्यों की संख्या

क्रमांक	राज्य अथवा संघ राज्य क्षेत्र का नाम	लोकसभा की कुल सीटें	जनता पार्टी के लोकसभा सदस्य
1.	बिहार	54	54
2.	हरियाणा	10	10
3.	हिमाचल प्रदेश	4	3
4.	मध्यप्रदेश	40	37
5.	राजस्थान	25	25
6.	उत्तरप्रदेश	85	85
7.	दिल्ली	7	7
	कुल .	225	221

नेहरू द्वारा दिए गए आश्वासन का पालन करेगी और सरकार का अहिंदी भाषा भाषी लोगों पर हिंदी थोपने का कोई इरादा नहीं है। उनका यह भी कहना था कि इसीलिए "हम हिंदी को राष्ट्रभाषा की संज्ञा न देकर राजभाषा की संज्ञा दे रहे है।"[8] 23 अप्रैल, 1978 ई. को नई दिल्ली मे पचासवें अखिल भारतीय कन्नड़ साहित्य सम्मेलन में बोलते हुए प्रधानमंत्री मोरारजी देसाई ने बताया कि राज्यों में सरकारी कार्य क्षेत्रीय भाषाओं मे चलना चाहिए। उन्होंने कहा कि अनेकता मे एकता बनाए रखने मे भारतीय भाषाएं महत्त्वपूर्ण भूमिका अदा कर सकती है। उन्होंने उन लोगों की आलोचना की जो भाषा को हौआ बना देते है। उनके अनुसार ऐसे लोग रचनात्मक कार्य मे विश्वास नही रखते। उन्होंने साहित्यिक रचयिताओ का विभिन्न भारतीय भाषाओं को समृद्ध करने के लिए आह्वान किया।[9]

उपसंहार

ऐसा दिखाई पड़ता है कि विभिन्न राजनीतिक पार्टियों की भाषा नीति कुछ हद तक उनकी सदस्यता के ढांचे के साथ जुड़ी रही है। संसदीय लोकतंत्र में ऐसा होना स्वाभाविक भी है क्योंकि वोट प्राप्त करने के लिए राजनीतिज्ञों को अपने मतदाताओं की इच्छाओं के अनुसार काम करना होता है। निम्न विवरण, जिसमें लोकसभा मे विभिन्न पार्टियों की कुल सदस्यता की बिहार, हरियाणा, हिमाचल प्रदेश, मध्यप्रदेश, राजस्थान, उत्तरप्रदेश और दिल्ली हिंदी भाषी

क्षेत्रो मे चुने गए सदस्यो की गिनती से तुलना की गई है, इस कथन को स्पष्ट कर देगा। (*प्रत्येक राज्य मे पार्टी अनुसार विवरण के लिए देखिए* परिशिष्ट XIII)

1976 ई मे राजनीतिक दलो की लोकसभा मे कुल सदस्यता तथा हिंदी क्षेत्रों से सदस्यता की तुलना

क्रमाक	राजनीतिक दल	लोकसभा मे कुल सदस्य	हिंदी भाषी क्षेत्रों से सदस्य
1	काग्रेस	349	158
2	सी पी आई (एम)	26	5
3	सी पी आई	24	10
4	जनसघ	18	18
5	डी एम के	16	—

काग्रेस और महात्मा गाधी तथा जवाहरलाल जैसे नेता एक समय हिंदी के लिए राष्ट्रीय पद देने के पक्ष मे थे परन्तु छठे दशक के मध्य के बाद काग्रेस पार्टी की स्थिति मे परिवर्तन दिखाई देता है। भाषा (सशोधन) विधेयक, 1967, जो काग्रेस सरकार ने प्रस्तुत किया था, और जिसके अनुसार अग्रेजी को अनिश्चित काल तक बने रहने की छूट मिल गई थी, काग्रेस पार्टी की भाषा नीति मे विशेष परिवर्तन का द्योतक है। 1963 ई और 1967 ई की लोकसभा मे हुई बहसो (अध्याय III) को पढने से नजर आएगा कि केवल काग्रेस पार्टी के ही नहीं अपितु साम्यवादी दल के रुख मे भी परिवर्तन आ गया। इसका कारण यह भी हो सकता है कि दोनो दलों के लगभग आधे सदस्य हिंदी भाषी क्षेत्रो से थे, और आधे अहिंदी भाषी क्षेत्रो से।

डी एम के के सभी सदस्य तमिलनाडु (अहिंदी भाषी राज्य) मे चुनकर आए थे, और जनसघ के हिंदी भाषी राज्यो से। इसलिए भाषा के प्रश्न पर इनकी स्थिति क्रमश हिंदी के विपक्ष और पक्ष मे थी, यद्यपि जनसघ की स्थिति डी एम के की स्थिति की तरह कठोर नही रही।

जनसघ की नीति म नर्मी का एक कारण यह भी हो सकता है कि 1967 ई के आम चुनावो के बाद जनसघ को अखिल भारतीय पार्टी बनने की उत्सुकता-वश और इस अभिलाषा की पूर्ति के लिए अहिंदी भाषी लोगो के वोट प्राप्त करना आवश्यक था।

सी पी आई (एम) के अधिकाश सदस्य अहिंदी भाषी राज्यो मे चुने गए थे, शायद इसीलिए यह देखने मे आता है कि हिंदी को इस दल का समर्थन प्राप्त नही था।

दिनांक 1 अगस्त, 1981 ई. को सातवीं लोकसभा में हिंदी भाषी एवं अहिंदी भाषी राज्यों में दलों की स्थिति इस प्रकार थी। (देखिए : परिशिष्ट 13, विवरण--3)

1 अगस्त, 1981 ई. को दलों की स्थिति

क्र. सं.	राजनीतिक दल	हिंदी भाषी राज्यों के सदस्य	अहिंदी भाषी राज्यों के सदस्य	कुल
1.	कांग्रेस (आई)	146	206	352
2.	सी. पी. आई.	6	6	12
3.	सी. पी. आई. (एम)	—	36	36
4.	लोकदल	32	1	33
5.	कांग्रेस (अ)	7	5	12
6.	डी. एम. के.	—	16	16
7.	जनता	4	8	12

हिंदी राज्यों से आए हुए कांग्रेस (आई) सदस्यों की संख्या कुल सदस्यों की संख्या के 50 प्रतिशत से भी कम है, क्योंकि छठी लोकसभा के चुनाव में हिंदी भाषी राज्यों में कांग्रेस (आई) की स्थिति बहुत कमजोर पड़ गई थी। सदस्यता के उपर्युक्त आंकड़े भाषा समस्या के समाधान में सहायक नहीं हो सकते जब तक कि इस संबंध में विशेष कदम न उठाए जाएं।

विभिन्न राजनीतिक दलों के कई वर्षों के चुनाव घोषणापत्रों तथा उनके द्वारा पास किए गए प्रस्तावों के अवलोकन से इन दलों की भाषा नीति में परिवर्तन सुस्पष्ट हो जाता है। इस स्थिति-परिवर्तन को आदर्श का अभाव या स्थिति की वास्तविकता के साथ समन्वय कहा जा सकता है अथवा दोनों का मिश्रण। यह स्थिति-परिवर्तन कांग्रेस, सी. पी. आई. और जनसंघ के संबंध में अधिक सुस्पष्ट है। 1953 ई. में कांग्रेस ने हिंदी को राष्ट्रीय भाषा कहा, 1958 ई. में सी. पी. आई. ने अंग्रेजी को अनिश्चित काल तक बनाए रखने का कड़ा विरोध किया।[10] 1962 ई. में जनसंघ हिंदी और संस्कृत को शिक्षा संस्थाओं में अनिवार्य रूप से पढ़ाए जाने के लिए वचनबद्ध था, परंतु ये सभी दल बाद में अपनी अपनी स्थिति से हट गए।

सभी पार्टियां क्षेत्रीय भाषाओं के उत्थान की पुष्टि करती रही हैं। डी. एम. के. और सी. पी. आई. (एम) जैसी पार्टियों ने हिंदी को किसी भी

प्रकार की तरजीह देने का विरोध किया है। अन्य पार्टियों ने हिंदी को संघ की भाषा के नाते विशेष सुविधाएं दिए जाने का समर्थन किया है।

कुछ राजनीतिक पार्टियों का यह आग्रह कि हिंदी को विशेष समर्थन न दिया जाए, थोड़ा आश्चर्यजनक है। किसी भी क्षेत्रीय भाषा के विकास की अवहेलना पर जनता का रुष्ट होना स्वाभाविक होगा, परन्तु राष्ट्रीय आवश्यकताओं की पूर्ति के लिए संघ की भाषा की उपयुक्त वृद्धि में, विशेषकर जब मानव जीवन का हर पहलू द्रुतगति से उन्नतशील होता जा रहा है, किसी को भयभीत नहीं होना चाहिए।

यद्यपि सभी राजनीतिक दल क्षेत्रीय भाषाओं के परिवर्द्धन की बात उठाते रहे हैं, परन्तु इसके लिए काम करने की बात तो अलग, किसी भी पार्टी ने इन भाषाओं को बढ़ावा देने के लिए कोई कार्यक्रम तक नहीं सुझाया। यदि कुछ राजनीतिक पार्टियां यह सोचती हैं कि इस समस्या के समाधान के लिए किसी प्रकार का रचनात्मक प्रोग्राम हाथ में लेना उनके कार्यक्षेत्र के बाहर है, तो वह बात अलग है, अन्यथा उन्हें स्मरण रखना चाहिए कि भाषा के नाम पर केवल नारे लगाने से भारतीय भाषाएं आगे नहीं बढ़ पाएंगी। अभी तक भाषा के मामले में आम धारणा यह है कि क्षेत्रीय भाषाओं की बात उतनी उनके उत्थान के लिए नहीं उठाई जाती जितनी राजनीति का खेल खेलने के लिए उठाई जाती है, या हिंदी की प्रगति की राह में अवरोध डालने के लिए।

देश में भाषा समस्या की मौजूदा स्थिति का अवलोकन करने से शायद कोई भी व्यक्ति इस परिणाम पर पहुंचेगा कि हिंदी विरोधी पार्टियां अपने मंतव्य की पूर्ति में सफल रही हैं, जबकि हिंदी के समर्थक प्रायः समझौते की नीति अपनाते रहे हैं। आज संविधान के अनुसार हिंदी हिंदुस्तान की मुख्य राजभाषा है, परन्तु निश्चित रूप से इसे मुख्य स्थान दिलाने के लिए योजनाबद्ध अथवा क्रमबद्ध कार्यक्रम का अभाव दिखाई देता है।

संदर्भ एवं टिप्पणियां

1 देखिए परिशिष्ट XIII

2 मोहन कुमारमंगलम, एस., इंडियाज लैंग्वेज क्राइसिस—एन इंट्रोडक्टरी स्टडी, मद्रास, न्यू सेंचुरी बुक हाउस, 1965, पृष्ठ 9

3 वही, पृष्ठ 11 12

4 भारत, अखिल भारतीय राष्ट्रीय कांग्रेस, कांग्रेस बुलिटिन, मई 1953

5. भारत, भारतीय राष्ट्रीय कांग्रेस, कांग्रेस बुलिटिन, अप्रैल, 1954.

6 जनसंघ 1977 में जनता पार्टी मे विलीन हो गया

7. देखिए : परिशिष्ट XIII, विवरण I.

8. दि टाइम्स ऑफ़ इंडिया (दैनिक), नई दिल्ली, अप्रैल 15, 1978, पृष्ठ 11

9. दि टाइम्स ऑफ़ इंडिया (दैनिक), नई दिल्ली, अप्रैल 24, 1978, पृष्ठ 3.

10 देखिए : अध्याय III.

अध्याय पांच

भाषा चयन के निकष

प्रत्येक देश को विधानमंडल, न्यायपालिका, कार्यपालिका, प्रशासन, वाणिज्य, उद्योग, शिक्षा, विज्ञान, तकनीकी और अन्य कार्यों को सुचारु रूप से चलाने के लिए एक विकसित भाषा की आवश्यकता रहती है। कभी कभी ऐतिहासिक, राजनीतिक तथा अन्य कारणों के आधार पर कोई देश इन कार्यों के लिए एक से अधिक भाषा भी अंगीकार कर लेता है, यद्यपि ऐसी योजना अधिक धन साध्य है।

राष्ट्र की एकता के लिए एक सार्वजनिक भाषा की आवश्यकता होती है। यदि लोग आपस में बातचीत नहीं कर पाएंगे, तो उनके बीच भावात्मक संबंध कैसे स्थापित होगा? यहां यह बता देना उपयुक्त होगा कि यदि राष्ट्रीय एकता स्थापित करने के लिए एक सार्वजनीन भाषा का होना जरूरी तो है, लेकिन केवल भाषा के माध्यम से इस उद्देश्य की प्राप्ति नहीं हो सकती। इतिहास साक्षी है कि अनेक राष्ट्रों में भाषा की एकता के बावजूद सामाजिक एवं आर्थिक असमानताओं के कारण अनेक इंकलाब आए हैं और झगड़े हुए हैं। मुसलमानों में शिया एवं सुन्नी पंथियों के बीच झगड़े सर्वविदित हैं। अमरीका में अंग्रेजी बोलने वाले काले एवं गोरे लोगों के बीच झगड़ों के बारे में कौन नहीं जानता? इन उदाहरणों से भारत में तथा अन्यत्र कुछ लोग यह अनुमान लगाते हैं कि राष्ट्रीय एकता के लिए सार्वजनीन भाषा का कोई महत्त्व नहीं है। अपने मत की पुष्टि में ये लोग भारत के 1942 ई. के स्वतंत्रता संग्राम, 1962 ई. में भारत पर चीन के आक्रमण और 1965 ई. तथा 1971 ई. में पाकिस्तान के भारत पर आक्रमणों का हवाला देते हैं, जब भाषा के प्रश्न पर अत्यधिक मतभेद होने पर भी भारत के सभी लोग एकता के सूत्र में बंधे रहे। यहां यह नहीं भूलना चाहिए कि जनसाधारण का सोचने का ढंग साधारण समय में और संकट

की स्थितियों में अलग अलग होता है। संकट की स्थिति में सभी लोग अपने अपने मतभेदों को ताक पर रखकर इकट्ठे हो जाते हैं, क्योंकि एक होने मे ही सभी की सुरक्षा की सर्वाधिक संभावनाए रहती है। परतु जब ख़तरा टल जाता है तो उनके आचरण का ढग भी बदल जाता है।

इतिहास ने एक बहुत बड़ा काम आज के नेताओं को सौंपा है और वह है देश में राष्ट्रीय एकता का निर्माण। अतीत में भारत के लोगों ने आपसी फूट के कारण बहुत हानि उठाई है, इसलिए यह आवश्यक है कि राष्ट्र मे एकता लाने के लिए भाषा तथा अन्य सभी संभव माध्यमों का सहारा लिया जाए। यह दुर्भाग्य की बात है कि अतीत में भाषा के संबल को लेकर लोगों में परस्पर फूट के बीज बोए गए हैं। इसमे दोष संबल का नहीं, परंतु उन स्वार्थी मनुष्यों का है जिन्होंने इसका दुरुपयोग किया है।

यदि यह स्वीकार कर लें कि प्रत्येक देश को अपने अनेक विधि कार्य चलाने तथा भाषात्मक एवं बौद्धिक एकता के लिए एक उपयुक्त भाषा की आवश्यकता होती है, तो फिर यह अनिवार्य हो जाता है कि संघ की भाषा के चयन के लिए कतिपय कसौटियों को निर्धारित किया जाए और इन कसौटियों पर हिंदी तथा अंग्रेजी भाषाओं (जिनको लेकर 1950 ई. से इतना विवाद चल रहा है) के दावों को परखा जाए। ये निकष बुद्धिसंगत, आर्थिक, राजनीतिक एव भावात्मक हो सकते हैं। इनका इस प्रकार का वर्गीकरण, विश्लेषण एवं विवेचन के लिए तो किया जा सकता है, परंतु इसका अर्थ यह नही कि ये उपादान एक दूसरे का खंडन कर देते हैं। इस संबंध में जो उपादान गिने जा सकते हैं, उनमें से कुछ एक पर थोड़ा विस्तार में विचार करना उपयुक्त होगा :

1. प्रशासन कुशलता 2. विज्ञान एवं तकनीक में उन्नति 3. नौकरी के अवसरों में समानता 4. लोकतंत्र का मानदंड 5. राष्ट्रीय मर्यादा 6. ग्राह्यता

प्रशासन कुशलता

देश की सरकारी भाषा ऐसी होनी चाहिए कि जिसके माध्यम से प्रशासन का कामकाज कुशलतापूर्वक चल सके। इसलिए एक ऐसी भाषा का चयन जरूरी हो जाता है जिसमे विधि निर्माण, न्यायपालिका और कार्यपालिका के कामकाज के लिए अपेक्षित पारिभाषिक शब्दावली हो। जब भारत स्वतंत्र हुआ तो सभी राजकीय काम, विशेषकर उच्चस्तरीय कार्य, अंग्रेज़ी मे होते थे। इसमें भी कोई संदेह नही कि देश का प्रशासन चलाने के लिए अंग्रेज़ी काफ़ी समृद्ध है, और हिंदी अभी उतनी विकसित नही है जितनी कि अंग्रेजी। परंतु इस बात को

नजर अदाज नही किया जा सकता कि भाषाए प्रयोग से ही समृद्ध होती हैं। यदि आज हिंदी, अंग्रेज़ी की अपेक्षा कम समृद्ध है, तो उसका एक कारण यह है कि इसके विकास को उतना अवसर नही मिला जितना अंग्रेज़ी भाषा को। एक समय था, जब अंग्रेज़ी भाषा भी उतनी विकसित नही थी जितनी उदाहरण के तौर पर फ्रांसीसी भाषा, परतु आज अंग्रेज़ी बहुत ही उन्नत भाषा है। यह कहना निराधार होगा कि प्रयोग का उचित अवसर पाने पर भी हिंदी, अंग्रेज़ी के बराबर काम नही चला पाएगी। तथ्य तो यह है कि भारत मे कुछ राज्य अपना सरकारी काम स्वतत्रता से पूर्व हिंदी मे ही चला रहे थे। सविधान मे हिंदी के राजभाषा स्वीकार होने से पहले उत्तर प्रदेश विधानसभा मे प्रस्तुत किए जाने वाले विधेयको का मूल मसौदा हिंदी मे ही प्रस्तुत किया जाता था।

किसी भाषा की पारिभाषिक शब्दावली राष्ट्रीय विकास की अगवानी नही, अनुसरण करती है। मनुष्य के लिए अणु की खोज से पूर्व इसके लिए शब्दावली ईजाद करना नामुमकिन था। हिंदी के बारे मे मूल्याकन के समय यह स्मरण रखना चाहिए कि यद्यपि 1950 ई मे पूर्व हिंदी मे आधुनिक विज्ञान की शाखाओ के लिए पारिभाषिक शब्दावली का अभाव था, परतु देश की स्वतत्रता के उपरात यह अभाव काफी हद तक दूर किया जा चुका है। देश के परतत्र होने से पूर्व प्राचीन काल में भी जबकि देश ज्ञानविज्ञान मे काफी उन्नत था, विधि, दर्शन, तर्कशास्त्र, मनोविज्ञान, गणित, खगोलविज्ञान आदि विषयो से सबधित पारिभाषिक शब्दावली का कोई अभाव नही था। अंग्रेज़ी तथा ससार की अन्य विदेशी भाषाओ ने हिंदी और दूसरी भारतीय भाषाओ से काफी शब्दावली ग्रहण की है। अंग्रेजी का 'आक्सफोर्ड' शब्दकोश इस बात का प्रमाण है कि अंग्रेज़ी भाषा मे भारतीय शब्दावली प्रचुर मात्रा मे है। इसमे नौ सौ से अधिक ऐसे शब्द हैं जिनका मूल स्रोत भारतीय है। इसके अतिरिक्त सहस्रों शब्द ऐसे हैं जो इनसे बने हैं।[1]

इसलिए यह कहकर कि हिंदी मे शब्दावली का अभाव है, हिंदी के राजभाषा के दावे को एक तरफ कर देना ठीक नही है। यदि भाषा आयोग के निम्नाकित परामर्शों पर अमल किया जाए तो निस्सदेह हिंदी की शब्दावली को, जो पहले ही पर्याप्त समृद्ध हो चुकी है, ससार की अधिकतम समृद्ध भाषाओ के स्तर पर पहुचाया जा सकता है

(क) भाषा की शुद्धता के मतवादी आग्रह का विरोध करना चाहिए। जो शब्द लोगो के आम व्यवहार मे आ चुके हैं, चाहे वे किसी भी भाषा से उद्भूत हुए हों, उन्हे भारतीय भाषाओ मे सहर्ष सम्मिलित कर लेना चाहिए।

(ख) देशीय पारिभाषिक शब्दावली में खोज की जानी चाहिए, और इस क्षेत्र में कार्य को प्रोत्साहित किया जाए। अन्य भाषाओं से शब्द लेने पर रोक नहीं होनी चाहिए।

(ग) हमारा उद्देश्य सभी भारतीय भाषाओं में अधिकाधिक एकरूपता स्थापित करना होना चाहिए। यह तभी मुमकिन होगा जब सभी भारतीय भाषाओं से उपयुक्त शब्दों को ग्रहण किया जाएगा।

सिद्धांत यह है कि कोई भी जनतंत्रवादी शासन तब तक सार्थक और कुशल नहीं कहा जा सकता जब तक सरकार और जनता के बीच भावों विचारों का परस्पर आदान प्रदान न हो। यह संपर्क या तो जनता की भाषा के माध्यम से संभव हो सकता है, या किसी ऐसी भाषा के द्वारा जो देश के अधिकांश लोगों के निकटतम हो। स्पष्ट है कि कोई भी विदेशी भाषा सरकार और जनता के बीच संपर्क की भाषा नहीं हो सकती।

विज्ञान एवं तकनीक में उन्नति

विज्ञान एवं तकनीक के आधुनिक युग में कोई भी राष्ट्र पिछड़ा नहीं रहना चाहता। इस आधार को लेकर अंग्रेज़ी का ज़ोरदार समर्थन किया जाता है। इस बात से इनकार नहीं किया जा सकता कि पुस्तकों की दुनिया में अंग्रेज़ी भाषा की पुस्तकों की विशेष गिनती है। मीडोम लिखते हैं :

> विज्ञान के विभिन्न क्षेत्रों में उपलब्ध साहित्य के सिंहावलोकन से पता चलता है कि उनमे अंग्रेजी प्रकाशनों की प्रमुखता है। इस शताब्दी के छठे दशक में चिकित्साशास्त्र के साहित्य का 40 प्रतिशत भाग अंग्रेज़ी भाषा में था और इसका अनुगामी साहित्य जो फ़्रांसीसी एवं जर्मन भाषा में है, इससे बहुत पीछे था। (एन. ए. एस.-एन. आर. सी. 1959 में ई. ब्राउमैन और एम. टी. टेने)। चिकित्साशास्त्र प्रायोगिक ज्ञान का आवश्यक क्षेत्र है और सभी देशों में इसका पर्याप्त साहित्य उपलब्ध है।
>
> शुद्ध विज्ञान के क्षेत्र का बहुधा साहित्य विकसित देशों में मिलता है और यहां अंग्रेज़ी भाषा के साहित्य की प्रधानता और अधिक है। इस प्रकार सातवें दशक के मध्य में संसार में गणित तथा रसायन विज्ञान संबंधी गवेषणात्मक लेखों में से 50 प्रतिशत अंग्रेज़ी भाषा में थे। दोनों विषयों में रूसी भाषा का दूसरा स्थान था और 20 प्रतिशत से कुछ अधिक लेख रूसी भाषा में थे। प्रत्येक फ़्रांसीसी और जर्मन भाषा के 7-8 प्रतिशत लेख थे, और इनका तृतीय स्थान था (भौतिकी संस्थान अमरीका, 1970)। परंतु

प्रत्येक विषय में अंग्रेजी का स्थान प्रथम नहीं था। उदाहरण के लिए, भूविज्ञान में रूसी साहित्य का स्थान अंग्रेजी से थोड़ा ऊपर और प्रथम था। इसके प्रकाशन कुल प्रकाशनों के लगभग 30 प्रतिशत थे, जबकि अंग्रेजी के कोई 27 प्रतिशत थे (जी वाई गेग, 1969)। विज्ञान की विभिन्न शाखाओं के विस्तृत अन्वेषण से पता चलता है कि ससार भर के वार्षिक प्रकाशनों में अंग्रेजी भाषा में छपने वाली पुस्तकें 25 और 60 प्रतिशत के बीच हैं। यद्यपि हर क्षेत्र में प्रतिशत अलग अलग है, परंतु प्राय विषयों में यह 50 के आसपास है(जेंड वी बरीनोवा एट ऑल, 1967)।[2]

देश में 1973 में वैज्ञानिक और तकनीकी पत्रिकाओं की प्रकाशन सबधी स्थिति भी लगभग ऐसी ही थी। इसका विवरण निम्नांकित है।[3]

वैज्ञानिक एव तकनीकी पत्रिकाओं का प्रकाशन

	पत्रिका का विषय	अंग्रेजी भाषा में प्रकाशन-सख्या	अन्य भाषाओं में प्रकाशन-सख्या	कुल	अंग्रेजी प्रकाशन कुल प्रकाशन का प्रतिशत
1	चिकित्सा एव स्वास्थ्य	168	197	365	46 0
2	विधि एव लोक प्रशासन	172	77	249	69 1
3	इजीनियरी और तकनीक	179	32	211	85 0
4	कृषि तथा पशु पालन	97	158	255	38 0
5	विज्ञान	107	32	139	77 0
	कुल सख्या	723	496	1319	
	प्रतिशत	59 3	40 7	100	

यदि यह स्वीकार कर भी लिया जाए कि ससार के मौलिक एव अनूदित पुस्तक भडार का 50 प्रतिशत अंग्रेजी भाषा में उपलब्ध है, फिर भी शेष 50 प्रतिशत के बारे में भी विचार करना जरूरी है। स्थूल आकडों के आधार पर कम से कम 50 प्रतिशत लोगों को अंग्रेजी के अतिरिक्त अन्य विदेशी भाषाएं भी सीखनी होंगी। यदि अनूदित पुस्तकों को बीच में शामिल न किया जाए, तो अंग्रेजी में उपलब्ध पुस्तकों की सख्या और कम हो जाएगी। महात्मा गांधी का कहना था कि "दुनिया अमूल्य सुदर रत्नों से भरपूर है और ये सब रत्न अंग्रेजी कारीगरी का परिणाम नहीं हैं।"[4]

अतः अंग्रेजी भाषा की सर्व संपन्नता का दावा विवादास्पद है। गांधी जी का कहना था कि "इससे बढ़कर कोई बड़ा भ्रम नहीं कि अमुक भाषा का विकास नहीं हो सकता अथवा इसमें गूढ वैज्ञानिक विचार प्रकट नही किए जा सकते।"[5] यदि हिंदी आज अंग्रेजी के समान समृद्ध नही है तो उसका एकमात्र कारण यही है कि सैकड़ों वर्षों तक इसके विकास की ओर ध्यान नही दिया गया और इसे वह समर्थन प्राप्त नहीं हुआ जो अंग्रेज़ी को सौभाग्य से मिलता रहा है। यही कारण है कि उद्योग, विज्ञान, तकनीक और अन्य क्षेत्रों में अनेक भारतीय विशेषज्ञ भी आज अंग्रेजी में लिखने के आदी हैं। इस स्थिति को बदलने के लिए यह आवश्यक है कि सरकार भारतीय विद्वानों को हिंदी तथा अन्य भारतीय भाषाओ मे लिखने के लिए प्रोत्साहित करे। यदि भारतीय भाषाओं मे मानक ग्रंथों की मूल रचना तथा अन्य भाषाओं से अनुवाद के लिए बडे पैमाने पर और ठीक प्रकार से योजना बनाई जाए, तो जल्द ही हिंदी तथा अन्य भारतीय भाषाओं में ज्ञानविज्ञान के विभिन्न क्षेत्रों में बहुत बड़ा पुस्तक भंडार बन जाएगा और देश के बहुत लोग इससे लाभान्वित हो सकेंगे।

नौकरी के अवसरों में समानता

राजभाषा का प्रश्न लोगों के आर्थिक जीवन के साथ जुड़ा हुआ है। यदि कोई भाषा समाज में आर्थिक असमानता का बीजारोपण करती है या किसी एक वर्ग को नौकरियों के लिए अपेक्षाकृत अधिक अवसर प्रदान करती है, तो जिन लोगों पर इसका प्रतिकूल प्रभाव पड़ेगा, वे इस भाषा का अवश्य विरोध करेंगे।

कुछ लोगों का मत है कि इस दृष्टिकोण से अंग्रेज़ी को निष्पक्ष भाषा कहना अधिक उपयुक्त होगा, क्योंकि हिंदी से हिंदी भाषा भाषियों को अवश्य अधिक लाभ होगा। अंग्रेजों के भारत आगमन के इतिहास के अवलोकन से पता चलता है कि कुछ प्रांतों के लोगों को अंग्रेज़ी सीखने का अवसर अन्य देशवासियों की अपेक्षा बहुत पहले मिला। इसलिए अंग्रेज़ी को निष्पक्ष भाषा कहना इतिहाससंगत नहीं होगा। इसके प्रतिकूल, निम्नलिखित कारणों के आधार पर अंग्रेज़ी की अपेक्षा हिंदी अधिक निष्पक्ष मानी जा सकती है :

(क) 1947 ई. तक हिंदी का विषय शिक्षा संस्थाओं मे अध्ययन के लिए अधिक लोकप्रिय नही था, क्योंकि इसे पढ़ने से न तो विशेष नौकरियां मिलती थी और न ही कोई अन्य आर्थिक लाभ होता था। इसलिए समाज का कोई भी वर्ग आज अपने हिंदी ज्ञान के कारण ज्यादा लाभ उठाने की स्थिति मे नही है। अहिंदी भाषा भाषी क्षेत्र के संबंध में यह कथन और भी ठीक है, क्योंकि जहां तक हिंदी ज्ञान का संबंध है, इन सभी राज्यों के लोगो ने एक ही बिंदु से सफ़र शुरू किया है।

(ख) हिंदी भाषा भाषी क्षेत्र के लोगों को हिंदी से थोड़ा बहुत अधिक फायदा होगा। यह इस क्षेत्र की पिछड़ी हुई सामाजिक एवं आर्थिक स्थिति से प्रतिसंतुलित हो जाएगा। शिक्षा की उन्नति में सामाजिक एवं आर्थिक तत्त्वों का बहुत बड़ा हाथ होता है। हिंदी भाषा भाषी लोग अन्य लोगों से केवल इस आधार पर बाजी नहीं मार सकते कि उनकी मातृभाषा हिंदी है, जबकि साक्षरता और अर्थव्यवस्था में वे बाकी लोगों की अपेक्षा बहुत पीछे है। हिमाचल प्रदेश और दिल्ली को छोड़कर सभी हिंदी भाषा भाषी राज्यों की साक्षरता की संख्या अखिल भारतीय आंकड़े से, जो 29 46 प्रतिशत है, कम है। 1971 ई की जनसंख्या के अनुसार इन प्रांतों में साक्षरता के आंकड़े इस प्रकार थे

राज्य अथवा संघ राज्य क्षेत्र	साक्षरता का प्रतिशत
बिहार	19 94
हरियाणा	26 89
हिमाचल प्रदेश	31 96
मध्य प्रदेश	22 14
राजस्थान	19 07
उत्तर प्रदेश	22 77
दिल्ली	56 61

इस तथ्य के अनेक प्रमाण उपलब्ध है कि नौकरियों का वितरण सामाजिक एवं आर्थिक परिस्थितियों से प्रभावित होता है। अपने अन्वेषण के आधार पर स्परैट का कहना है

> गत शताब्दी के अंत तक समस्त दक्षिण भारत में ब्राह्मण और अन्य वर्गों के बीच सरकारी नौकरियों के विषय को लेकर संघर्ष शुरू हो गया था, और ब्राह्मणों पर पुरोहिताई, विद्याप्रधान व्यवसायों और जमींदारी में एकाधिकार का आरोप लगाया गया। ब्राह्मणेतर तमिल भाषियों ने अपनी शिकायत को जाति व्यवस्था पर आक्रमण का रूप दे दिया और प्राचीन सांस्कृतिक द्वंद्व को इसका कारण बताने लगे।[6]

मिरर ऑफ दि इयर पुस्तक से उद्धृत करते हुए स्परैट कहते हैं

> 1916 ई में प्रकाशित ब्राह्मण विरोधी घोषणा पत्र में भी मद्रास में

> सरकारी नौकरियों के आंकड़े कुछ मिलते जुलते से थे। इसमे लिखा था कि 1914 ई. में मद्रास विश्वविद्यालय मे 650 ग्रेजुएट रजिस्टर्ड थे, इनमें से 452 ब्राह्मण थे और 124 ब्राह्मणेतर हिंदू थे। 1916 ई. में अखिल भारतीय कांग्रेस कमेटी के लिए मद्रास प्रेज़िडेंसी से निर्वाचित 15 प्रतिनिधियों मे से 14 ब्राह्मण थे।[7]

जो स्थिति स्परैट ने केवल दक्षिण में विद्यमान बताई, मिश्र ने उसे पूरे देश में व्यापक बताते हुए लिखा :

> भारतीय लोक सेवा आयोग ने 1887 ई. की अपनी रिपोट मे कहा कि न्याय एवं प्रशासनिक सेवाओ में 1866 हिंदुओं मे से 904, अर्थात् लगभग आधे ब्राह्मण थे और 454 अथवा एक चौथाई कायस्थ थे, जिन्हे बंबई में प्रभु कहते थे। क्षत्रियों अथवा राजपूतो की संख्या 147, वैश्यों की 113, और शूद्रों की 146 और अन्य की 102 थी। विशेषकर मद्रास और बंबई में ब्राह्मणो की प्रधानता थी, जहां क्रमश: इनकी गिनती 297 में से 202 और 328 में से 211 थी।[8]

इसलिए सामाजिक आर्थिक तत्त्वो के परिणामो को भाषा के साथ उलझाना ठीक नहीं होगा।

विज्ञान के युग मे ज्यों ज्यों शिल्प और तकनीक का जोर बढ़ता जाएगा, नौकरियों तथा अन्य आर्थिक लाभों के सिलसिले मे भाषा का जोर कम होता जाएगा, इसलिए इस संबंध में भाषा की बात पर अधिक जोर देना अनुचित होगा। आवश्यकता इस बात की है कि भाषा के प्रश्न को ठीक परिप्रेक्ष्य मे समझा जाए। इसका यह मतलब कदापि नहीं कि भाषा का आजीविका के साथ कोई भी रिश्ता नही है।

कभी कभी यह कहा जाता है कि अखिल भारतीय परीक्षाओ मे बैठने वाले उम्मीदवारो की संख्या बहुत सीमित होती है, इसलिए संघ के स्तर पर अंग्रेज़ी की जगह हिंदी की स्थापना में जो कठिनाई होगी, इससे बहुत अधिक चिंतित होने की आवश्यकता नहीं है। 1958 ई. से 1978 ई. तक के भारतीय सेवाओं में प्रवेश पाने वाले उम्मीदवारों के आंकड़े देखने पर पता चलता है कि प्रतिवर्ष लोक सेवा आयोग कोई तीन चार हज़ार के लगभग व्यक्ति भरती करता है।[9] यदि इन आंकड़ों की उन बेशुमार लोगो की संख्या के साथ तुलना की जाए जो केंद्रीय एवं राज्य सरकारें भरती करती हैं, तो यह संख्या बहुत मामूली है। तथापि, इस बात से इनकार नही किया जा सकता कि केंद्रीय सरकार का कार्य

अनेक स्वायत्त और राष्ट्रीयकृत संस्थानों द्वारा बढ़ता जा रहा है और अखिल भारतीय सेवाएं देश की नीति निर्माण में महत्त्वपूर्ण भूमिका अदा करती हैं। इसलिए यह अनिवार्य है कि यथोचित समय के लिए अहिंदी भाषा भाषियों के हितों की सुरक्षा के लिए वांछनीय उपबंध रखे जाएं, ताकि उन्हें इस कारण कोई हानि न हो कि हिंदी कुछ लोगों की मातृभाषा है। प्रतिकूल स्थिति को रोकने के लिए भाषा आयोग ने सेवाओं में कोटा प्रणाली की भी चर्चा की, परंतु ऐतिहासिक कारणों से उसका समर्थन नहीं किया। आयोग का कहना था कि

> कोटा व्यवस्था में अखिल भारतीय सेवाओं का ढांचा टूट जाएगा और इस संबंध में होने वाली प्रतियोगिता अलग अलग भागों में बंट जाएगी। इससे अखिल भारतीय और उच्च केंद्रीय सेवाओं के लिए भरती किए जाने वाले लोगों की योग्यता का स्तर गिर जाएगा। आजकल की प्रशासनिक *आवश्यकताओं का ध्यान में रखते हुए हम ऐसे सभी सुझावों का* विरोध करेंगे, जिनसे रंगरूटों की क्षमता में कमी आ जाए। प्रांतों की दृष्टि से भी, अखिल भारतीय सेवाओं का लक्ष्य गुण होना चाहिए, न कि संख्या में आनुपातिक भाग। इन्हीं तर्कों के आधार पर उच्च केंद्रीय सेवाओं के लिए क्षेत्रीय आधार पर आनुपातिक नौकरियों की अपेक्षा गुण का अधिक महत्त्व है।[10]

लोक सेवा आयोग ने भारतीय भाषाओं के माध्यम से परीक्षाएं प्रारंभ कर दी है, इसलिए जैसे जैसे अधिकाधिक परीक्षार्थी इस योजना से लाभ उठाने लगेंगे अथवा अहिंदी भाषा भाषी हिंदी में प्रवीण हो जाएंगे, यह समस्या हल होती जाएगी। भाषा की कठिनाई दूर होने तक केंद्रीय नौकरियां आज के बिंदु पर, न कम, न ज्यादा स्थिर की जा सकती है। भाषा आयोग की आशंकाओं का निवारण करने और भर्ती किए गए लोगों की योग्यता में ह्रास के रोकने का एक उपाय यह भी हो सकता है कि केंद्रीय सेवाओं में भरती केवल प्रांतीय सेवाओं द्वारा ही हो। प्रांतीय सेवाओं से केंद्र में आने वाले उम्मीदवारों के लिए हिंदी तथा एक अन्य क्षेत्रीय भाषा की जानकारी अनिवार्य घोषित की जा सकती है।

जनतंत्रीय प्रतिमान

संसदीय लोकतंत्र प्रणाली में किसी भी विवादास्पद प्रश्न को, अल्पमत का दमन किए बिना, बहुमत से ही हल किया जाता है। प्रथम अध्याय में दिए गए ग्राफ

पर दृष्टि डालने से पता चलता है कि हिंदी भापा भापी एव इस भापा का समर्थन करने वाले लोगों की संख्या कितनी अधिक है । नीचे दी गई तालिका के अवलोकन से पता चलेगा कि अनुसूची में अंकित भापाओ के वोलने वालो की कुल संख्या में विभिन्न भापा भापियों का प्रतिशत कितना है

विभिन्न भापाओं के वोलने वाले

क्र. सं.	भापा का नाम	वोलने वालों की संख्या (लाखों में)	कालम (3) के कुल भापा भापियों अर्थात् 4796.0 लाख का प्रतिशत
1.	हिंदी	1625.8	33.9
2.	वंगला	447.9	9.3
3.	तेलुगु	447.6	9.3
4.	मराठी	422.5	8.8
5.	तमिल	376.9	7.9
6.	उर्दू	286.1	6.0
7.	गुजराती	258.9	5.4
8.	मलयालम	219.4	4.6
9.	कन्नड़	217.1	4 5
10.	उड़िया	198.6	4.1
11.	पंजावी	164 5	3 4
12.	असमी	89.6	1.9
13.	कश्मीरी	24.4	0.5
14.	सिंधी	16.8	0.4
15.	संस्कृत	2217	—
		4796.0	100 प्रतिशत

गणना के आधार पर अन्य भापा भापियो के मुकावले मे हिंदी भापा भापी अपेक्षाकृत अधिक प्रांतों और संघ राज्य क्षेत्रों मे प्रथम अथवा द्वितीय स्थान पर आते है ।[11] राज्यों में तथा सघ राज्य क्षेत्रों मे हिंदी का श्रेणीकरण अंक सर्वाधिक है और राज्यों तथा संघ राज्य क्षेत्रो मे ये अक मिलाने पर भी स्थिति अपरिवर्तित रहती है । इससे सिद्ध होता है कि हिंदी वोलने वाले शेप भापा भापियों के मुकावले मे अधिक स्थानों पर विखरे हुए है ।[12] आठवी अनुसूची की पंद्रह भापाओ में से असमी, कश्मीरी, उड़िया, सिंधी और संस्कृत के वोलने वाले सभी प्राती मे नहीं मिलते । गुजराती, कन्नड़, पंजावी, तमिल, तेलुगु, उर्दू के एक से अधिक प्रांतों तथा सघ राज्य क्षेत्रों में 100 से कम वोलने वाले हैं ।

शेष प्रत्येक चार भाषाओ अर्थात बगला, हिंदी, मलयालम और मराठी बोलने वालो की सख्या केवल किसी एक राज्य अथवा सघ राज्य क्षेत्र मे 100 से कम पडती है, और यह सख्या क्रमश 4, 58, 23 और 8 है। अत, भाषा भाषियो के अको का किसी भी प्रकार से निरीक्षण करने से हिंदी का पलडा ही सबसे अधिक भारी दिखाई देता है। गाधी जी का कहना था

> किसी भाषा को राष्ट्र भाषा बनाने अथवा न बनाने का सही मानक यह होना चाहिए कि वह भाषा लोगो मे कितनी प्रचलित है, और कितने लोग उसे समझ सकते हैं। इसी विशेषता के कारण ही कोई भाषा समस्त राष्ट्र के लिए प्रयुक्त हो सकती है, अन्यथा यह भिन्न प्रातो और भिन्न भाषा भाषियो के बीच सपर्क की भाषा नही हो सकती। किसी भाषा का साहित्य चाहे कितना ही सपन्न क्यो न हो, यदि इसके माध्यम से देश के भिन्न भिन्न भागो के बीच अत सपर्क स्थापित नही हो सकता, तो वह भाषा राष्ट्र भाषा का पद नही पा सकती। आज केवल हिंदी (अथवा हिंदुस्तानी) ही एकमात्र ऐसी भाषा है जो देश के सभी हिस्सो मे बोली और समझी जाती है। इस प्रकार हिंदी निर्विवाद रूप से भारत की राष्ट्र भाषा बन जाती है।[13]

राष्ट्रीय गौरव

पहले कहा जा चुका है कि उपर्युक्त प्रतिमान एक दूसरे से असबद्ध नही हैं। यह नही कहा जा सकता कि राष्ट्रीय प्रतिष्ठा की भावना के पीछे कोई तर्क नही है। भले ही राष्ट्रीय ध्वज, राष्ट्रीय प्रतीक, राष्ट्रीय पशु, राष्ट्रीय पक्षी सब लोगो की भावनाओ के साथ जुड गए हैं, परतु इन सब के पीछे कुछ अर्थ एव इतिहास निहित है। भाषा किसी भी राष्ट्र के सास्कृतिक उत्थान का महत्त्वपूर्ण मानदण्ड है। भाषा के माध्यम से ही लोगो की सृजनशीलता अभिव्यक्त होती है। किसी वर्ग का साहित्य, सगीत, मिथक, लोक कथाए और इसकी अनेक उपलब्धिया भाषा के द्वारा ही ससार के सामने आती हैं। यही कारण है कि भाषा भावनाओ के साथ जुड जाती है। स ही वात्स्यायन के कथनानुसार भाषा और राष्ट्र की अनन्यता का चोली दामन का रिश्ता है। उन्होंने लिखा है

> कुछ अपवादो को छोडकर, कोई भी राष्ट्र विदेशी भाषा से जीवनचर्या नहीं चला सकता। और यह बात और भी असभव हो जाती है जब कोई देश आज़ादी की लडाई भी लड रहा हो और स्वाभिमान का लक्ष्य उसके

सामने हो। यदि कोई राष्ट्र अपनी भाषा से काम नहीं चलाएगा तो अपनी अनन्यता खो बैठेगा और इसके स्थान पर अन्यथा भाव आ जाएगा। अंग्रेज़ी भाषी पश्चिम इस विचार को भाषायी उग्र राष्ट्रीयता का नाम देकर भले ही बदनाम करे, परन्तु उनके विचार संदिग्धता से विमुक्त नहीं हैं। इसके प्रतिकूल, पश्चिम के संदेहयुक्त विचारों को खण्डित करने के लिए प्रचुर ऐतिहासिक अनुभव मौजूद है, और हर उस देश का अनुभव सामने है जो इस प्रकार की स्थिति में से गुज़रा है। फिलिपिन और इण्डोनेशिया के समसामयिक और निकटवर्ती उदाहरण इस कथन की पूर्ण पुष्टि करते हैं।[11]

सोवियत संघ में भारत की प्रथम राजदूत विजयलक्ष्मी पंडित को मास्को में अपना परिचय पत्र अंग्रेज़ी भाषा में प्रस्तुत करने पर, उस समय बड़ी अटपटी स्थिति का सामना करना पड़ा जब सोवियत पक्ष की ओर से उत्तर हिंदी में दिया गया। इस बात पर प्रकाश डालते हुए सुचेता कृपलानी ने संसद में कहा था :

मैं आपको एक बात बताना चाहूंगी। अभी कल ही मुझे विजयलक्ष्मी जी उस स्थिति के बारे में बतला रही थीं जो उनके दरपेश आई। जब वे रूस गई और अपना परिचय पत्र प्रस्तुत कर रही थीं, तो उन्हें बहुत अपमानित होना पड़ा। उन्हें ताना दिया गया कि हम कितने असभ्य हैं और उनसे पूछा गया कि क्या भारत की अपनी कोई भाषा नहीं है। मुझे याद है कि जब मैं जर्मनी में यात्रा कर रही थी तो मेरे सामने भी कुछ उसी प्रकार की घटना पेश आई। हमें अंग्रेज़ी में लिखने की आदत थी, इसलिए जब मैं अपनी नोटबुक में अंग्रेज़ी में कुछ लिख रही थी तो मुझे ऐसा करते देखकर वहां के एक आदमी ने मुझ से पूछा . "बहन, क्या आपकी अपनी कोई भाषा नहीं है, आप अंग्रेज़ी में क्यों लिख रही हैं?" यह सुनते ही शर्म के मारे मेरा माथा झुक गया।[15]

मिल्टन का कहना है कि हर राष्ट्र को विदेशी भाषा की अपेक्षा अपनी भाषा को ही तरजीह देनी चाहिए, चाहे यह भाषा अविकसित ही क्यों न हो, क्योंकि विदेशी भाषा का प्रयोग दासता का द्योतक होता है। उनका कहना था :

इस बात को मामूली नहीं समझना चाहिए कि कोई राष्ट्र कौन सी भाषा का इस्तेमाल करता है। यह तथ्य इतना महत्त्व नहीं रखता कि इस राष्ट्र के लोग इस भाषा को कितनी विशुद्धता एवं निपुणता के साथ बोलते हैं...

इसमे कोई हर्ज की बात नहीं कि किसी वर्ग की भाषा असंस्कृत और बीभत्स है, आंशिक रूप से दूषित है अथवा इसमें रचना संबंधी गलतियां हैं, परंतु यह अक्षम्य है कि किसी राष्ट्र के लोग आलसी और अकर्मण्य हैं, और चिरकाल तक ताबेदारी में रहने के लिए तैयार हैं। इसके प्रतिकूल यह कभी सुनने में नहीं आया कि कोई राज्य, कम से कम मध्य स्तर तक, इसलिए विकसित नहीं हो सका क्योंकि उसने अपनी भाषा का आश्रय लिया।[16]

ग्राह्यता

यदि किसी भाषा की लिपि और वाक्य रचना तथा उसका शब्द भण्डार एवं स्वर विज्ञान किसी वर्ग की अपनी भाषा के निकट होते हैं, तो कथित वर्ग इस भाषा को अधिक आसानी से स्वीकार कर लेता है। इस दृष्टिकोण से भारतीय भाषा भाषियों के लिए अंग्रेजी की अपेक्षा हिंदी का ग्रहण करना ज्यादा आसान होगा। निस्संदेह, इसका यह अर्थ नहीं कि भाषा के विशेषज्ञ हिंदी तथा अन्य भारतीय भाषाओं के बीच सर्वसामान्य तत्त्वों के विस्तार की ओर ध्यान न दें, क्योंकि हिंदी और अन्य भाषाओं के बीच जितने अधिक समान तत्त्व होंगे, अहिंदी भाषियों के लिए हिंदी को स्वीकार करना उतना सुगम हो जाएगा।

इसके अतिरिक्त, यदि किसी वर्ग का साहित्य या उसके मुख्य साहित्यिक ग्रंथों का अनुवाद किसी भाषा में उपलब्ध हो तो इस वर्ग द्वारा उस भाषा का अनुमोदन अधिक संभव हो जाएगा। इस प्रकार हिंदी मुसलमानों के लिए सुग्राह्य हो जाएगी, यदि उन्हें कुरानशरीफ तथा उनके अन्य ग्रंथ हिंदी में मिल सकें। इसी तरह, दक्षिण के लिए हिंदी को मंजूर करना आसान होगा यदि इतिहास, संगीत, कला, पुराण, विज्ञान, चिकित्सा आदि के ग्रंथ (जो आज केवल दक्षिण की भाषाओं में मिलते हैं) हिंदी में भी मिलने शुरू हो जाएं। इस दृष्टिकोण से, हिंदी में और अधिक काम वांछित है।

जैसे कि पहले बताया जा चुका है, ऐतिहासिक कारणों से कुछ प्रांतों के लोगों को भारत के अन्य भाग के लोगों की अपेक्षा अंग्रेजी सीखने का अवसर पहले मिलना शुरू हो गया था। इस कारण इन प्रांतों के निवासियों को अंग्रेजी राज के प्रारंभ में, और शायद बाद तक भी, अधिक सरकारी नौकरियां मिलती रहीं। अंग्रेजी के हटाने से इन थोड़े से लोगों के 'हितों' पर विपरीत प्रभाव पड़ सकता है, परंतु, जैसे कि पिछले पृष्ठों में सुझाया गया है, इस कठिनाई को हल करने के लिए कुछ पग उठाए जा सकते हैं।

हिंदी के विरोध का एक कारण समाजनिष्ठ राजनीतिक है। यह बात

डी.एम. के. (द्रविड़ मुन्नेत्र कड़गम) तथा ए. डी. एम. के. (अन्ना द्रविड मुन्नेत्र कड़गम) के इतिहास के अवलोकन से कुछ स्पष्ट हो जाएगी। यह इतिहास साऊथ इंडियन पीपुल्ज असोसिएशन (जिसकी स्थापना 1916 ई. में हुई थी) के जन्म के साथ प्रारंभ होता है। बाद में इस संस्था के नाम और रूप में परिवर्तन हुआ और उसकी कई शाखाएं बनीं, जैसे 1917 ई. में साऊथ इंडियन लिबरल फ़ेडरेशन अथवा जस्टिस पार्टी बनी और 1925 ई. में सेल्फ़ रेस्पेक्ट मूवमेंट वजूद में आई। उनके उद्देश्यों की चर्चा करते हुए स्परैट ने लिखा :

> जहां जस्टिस पार्टी ने ब्राह्मणों के धर्मेतर विशेषाधिकारों पर चोट की, सेल्फ़ रेस्पेक्ट मूवमेंट ने ब्राह्मणों का हिंदू धर्म के प्रचारकों के प्रतिनिधि के रूप में विरोध किया। उन्होंने इसे एक ऐसा विदेशी धर्म घोषित किया जो तमिल भूमि में घुस आया है और उनकी संस्कृति को नष्ट कर रहा है।[17]

इस प्रकार, जो आंदोलन एक समय ब्राह्मणों के विरुद्ध अथवा उनकी आर्थिक, सामाजिक और सांस्कृतिक ज्यादतियों के विरुद्ध था, बाद में उसका रूप बदल गया और उसने एक ऐसे दृष्टिकोण को जन्म दिया जिससे उत्तर का हर कदम शक की नज़र से देखा जाने लगा। कुछ समय के बाद यह कहा जाने लगा कि हिंदी तमिल भाषियों के आत्मसम्मान पर आघात करती है। और यह उनकी आर्थिक सामाजिक सांस्कृतिक स्थिति को हीन बना देगी। यह आरोप आंशिक रूप से भी सत्य नहीं हो सकता, क्योंकि भारतीय संस्कृति की महिमा उसकी विविधता बनाए रखने में है, न कि उसे मिटाने में। कोई भी सरकार विविधता की अवहेलना नहीं कर सकती। उचित उपायों से ऐसी निराधार आशंकाओं का निराकरण किया जा सकता है और हिंदी को दक्षिण तथा अन्य अहिंदी भाषा भाषियों के लिए स्वीकार्य बनाया जा सकता है। यदि यह काम समुचित रूप से हो जाए, तो फिर स्वार्थी नेता भोली जनता को गुमराह करने में सफल नहीं हो पाएंगे, जिसके दिल में इस समय यह बात बिठा दी गई है, कि हिंदी ब्राह्मण मत की अवशेष संस्कृति की एक शाखा है, और दक्षिण के गौरवपूर्ण जीवन के लिए तथा दक्षिण को उत्तर की गुलामी से बचाने के लिए इसका विरोध करना आवश्यक है।

अन्य तत्त्व

निम्नलिखित कुछ तर्कों के आधार पर भी अंग्रेजी के दावे का समर्थन किया जाता है :

यह कहा जाता है कि अंग्रेज़ी की पढ़ाई में अवरोध डालने से देश की

प्रगति रुक जाएगी। हिंदी को राजभाषा बनाने और कालेजो मे हिंदी शिक्षण दो अलग विषय हैं। ये दोनो अलग प्रश्न हैं। जिस प्रकार पहले का समर्थन तर्क विरुद्ध है उसी प्रकार दूसरे का विरोध दुराग्रह युक्त होगा।

यह भी कहा जाता है कि अंग्रेज़ी के लिए जो स्थान हम निर्धारित करेंगे, उसके साथ देश की वैज्ञानिक उन्नति का बहुत सबध है। ज्ञान और ज्ञान के पुर्जों को एक वस्तु समझना बहुत बडी भूल होगी। निस्सदेह इस बात पर उचित बल देना आवश्यक है कि शिक्षा सस्थाओ, विशेषकर कुछ एक उच्च शिक्षा सस्थाओ मे, विद्यार्थियो को अंग्रेज़ी मे यथसभव सुविज्ञ बनाना हमारा लक्ष्य होना चाहिए। परतु इसका मतलब यह नही है कि अंग्रेज़ी को भारतीय भाषाओ पर प्रमुखता प्रदान कर दी जाए। ताजमहल, अहमदाबाद का डोलती मीनार, दिल्ली के कुतुब मीनार के पास अशोक द्वारा निर्मित इस्पात मीनार और प्राचीन अद्भुत वास्तुकला के हिंदू मदिर उस समय बने थे जब अंग्रेज़ो की परछाई भी भारत मे नही पहुची थी। रूस, फ्रास और अनेक दूसरे देश अपने विकास के लिए अंग्रेज़ी भाषा के कदापि ऋणी नही है। इसके साथ ही ज्ञान का उसके प्रयोग के साथ रिश्ता भी समझना चाहिए। यदि हम विज्ञान की जानकारी अपने लाखो और करोडो लोगो तक नही पहुचा पाएगे, तो भारतीय जनसाधारण इससे पूरी तरह लाभान्वित नही हो पाएगा। आकाशवाणी द्वारा देश के किसानो के हेतु प्रसारित कृषि दर्शन कार्यक्रम इसलिए प्रशसनीय है कि इसके माध्यम से कृषि अनुसधान पर आधारित नई और लाभप्रद बातें किसानो तक उनकी भाषा मे पहुचाने की कोशिश की जाती है।

कुछ लोगो के अनुसार अन्तर्राष्ट्रीय क्षेत्र मे भारत का सम्मान भारतीय लोगों के अंग्रेज़ी पर अधिकार की वजह से ही प्राप्त हो सका है। शायद ही कोई अन्तर्राष्ट्रीय मामलो का विशेषज्ञ इस कथन का समर्थन करे। अनेक ऐसे राष्ट्र हैं जिन्होने अंग्रेज़ी की पढाई को वह स्थान नही दिया जो भारत ने दिया है, परतु फिर भी ससार मे उनका मान है। किसी भी देश की प्रतिष्ठा मुख्यतया उसके आर्थिक, राजनीतिक और सामाजिक उपकरणो से बनती या बिगडती है, न कि इस आधार पर कि वहा के लोग किसी विदेशी भाषा को कितनी निपुणता से बोलते हैं। 1962 ई मे चीन द्वारा पराजित हो जाने के बाद हिंदुस्तान के गौरव को भारी धक्का लगा था। परतु 1971 ई मे जब हमारे वीरो ने बगलादेश निवासियो की लोकतत्रीय भावना की रक्षा करते हुए पाकिस्तान को पराजय दी, तो देश की गौरव प्रतिमा की पुन स्थापना हो गई। चीन अणुबम विस्फोट करने के कारण परम शक्तिशाली देशो की पक्ति मे आ गया न कि किसी भाषा विशेष के ज्ञान के कारण। इस प्रकार अतर्राष्ट्रीय राजनीति के आयामो का भाषा ज्ञान से खास सरोकार नहीं होता।

एक धारणा यह भी है कि अंग्रेजी में दक्षता प्राप्त करने से अंतर्राष्ट्रीय संसार मे व्यक्ति की राजनयिक, विशेषज्ञ, पर्यटक, व्यापारी के रूप मे काम करने की क्षमता बढ़ जाती है। यद्यपि यह कथन आंशिक रूप से सत्य है, परंतु यह अंग्रेज़ी के महत्त्व का अनावश्यक अतिरंजन है। बहुधा, समस्त उच्चस्तरीय अर्थपूर्ण वार्त्ताओं में प्रायः वक्ता विदेशी भाषा के स्थान पर अपनी भाषा इस्तेमाल करते है। इस संबंध में ट्रेवेलान का निम्नलिखित कथन बहुत प्रासंगिक है :

> दूसरे व्यक्ति की भाषा पर आपको कितना ही अधिकार क्यों न हो, पेचीदा वार्त्ताओं में उसकी भाषा का प्रयोग आपके लिए ख़तरनाक हो सकता है क्योंकि इससे स्थिति दूसरे व्यक्ति के अधिक अनुकूल हो जाती है। अनुवाद से आपको सोचने का समय मिल जाता है। दुभाषिया को केवल भाषा की बात सोचनी होती है। यदि वार्त्ताकार आधा समय क्रियाओं के अंतर्मनन या किसी बोली के अस्पष्ट अथवा विकृत वाक्यांश को समझने में लगा दे तो स्पष्ट है कि मुख्य मामले पर उसका ध्यान पूर्ण रूप से केंद्रित नही हो पाएगा। हिटलर के दुभाषिए श्मिट्ड ने लिखा है कि सर नेविल हेंडरसन की गंभीर मामलों पर हिटलर के साथ जर्मन भाषा मे बातचीत करना एक भूल थी। विदेशी भाषा बोलने से अहंकार भले ही बढे, परंतु ऐसी स्थिति बहुत घातक हो सकती है।[18]

इस बात से भी इनकार नही किया जा सकता कि कोई भी विद्वान् पर्यटक अथवा व्यापारी विदेश यात्रा से पूरा लाभ तभी उठा सकता है जब उसे वहां की भाषा आती हो। हर स्थान पर अंग्रेजी मे काम चलाना संभव नही है। हर विद्यार्थी अथवा विद्वान् को किसी विशेष क्षेत्र मे दक्षता प्राप्त करने के लिए सर्वप्रथम उस देश की भाषा को जानना होता है जहां वह अध्ययन के लिए आता है। इस संबंध में यह बहुत प्रासंगिक है कि अमुक भाषा सीखने में सरल है अथवा कठिन। हिंदी और अंग्रेज़ी की तुलना करते समय इस बात को भी ध्यान में रखना होगा।

हिंदी में हर अक्षर का एक ही स्वर होता है। किसी भाषा की वर्णमाला इस सिद्धांत का जितना उल्लंघन करती है, लोगो के लिए यह उतनी ही दुष्कर बन जाती है। जार्ज बर्नार्ड शा के अनुसार इस दृष्टि से अंग्रेजी में काफी त्रुटियां हैं। अंग्रेज़ी की वर्णमाला मे पांच स्वर हैं और कभी कभी पांच के पांच एक ही आवाज़ के लिए प्रयुक्त होते है। इस प्रकार के उच्चारण का एक उदाहरण, जो रेंडम हाउस डिक्शनरी (1967) मे उपलब्ध है, इस कथन को स्पष्ट कर देगा।

अंग्रेजी में स्वर उलझन

क्र स	अंग्रेजी शब्द	शब्द में प्रस्तुत स्वर	उच्चारण में आवाज़
1	फारवर्ड (forward)	ए (a)	यू (u)
2	वर्ड (word)	ओ (o)	यू (u)
3	हर्ड (herd)	ई (e)	यू (u)
4	पर् (purr)	यू (u)	यू (u)
5	बर्ड (bird)	आई (i)	यू (u) [19]

इसके प्रतिकूल निम्नलिखित प्रत्येक शब्द में ओ (o) अक्षर का उच्चारण भिन्न भिन्न तरीको से होता है

नो (no), डू (do), आर् (or), डल (doll), विम्-इन (women), लव (love), आन (on), वन (one)

अंग्रेजी में 'शन' की आवाज को बीस प्रकार से लिखा जा सकता है। उदाहरणतया नोशन, पैंशन, फेशन आदि हर शब्द में 'शन' की आवाज़ को विभिन्न अक्षरों से लिखा जाता है। इसी प्रकार 'ऊ' के स्वर को कम से कम पन्द्रह विभिन्न हिज्जों द्वारा दर्शाया जा सकता है। जैसे कि इन शब्दों में

टू (too), टू (two), न्यू (new), टू (to), शू (shoe), न्यूट-अर (neuter), थ्रू (through), स्यू (sue), ड्यूट-इ (duty), पू (pooh), जूस (juice), कू (coup), इत्यादि, इत्यादि।[20] अंग्रेजी शब्द एक्सिडेंट (accident) में दो 'सी' एक साथ आते हैं, परंतु एक 'सी' 'क' की और दूसरा 'स' की आवाज़ देता है। इस प्रकार के अन्य अनेक उदाहरण दिए जा सकते हैं। अंग्रेजी भाषा की हिज्जो के भद्देपन से विमुक्त करने के लिए अपील करते हुए लंदन के चार मार्च, 1975 ई के टाइम्स मैगज़ीन में जार्ज बर्नार्ड शॉ लिखते हैं कि "इस प्रकार के संशोधन से जो बचत होगी, उसमें यदि और कोई लाभ न उठाया जा सके तो कम से कम आधी दर्जन लड़ाइयों का खर्च तो निकाला ही जा सकता है।"

शब्द भंडार की दृष्टि से भारतीय भाषाएं आर्य अथवा द्रविड परिवार में आती हैं। सभी के अंतर्गत अनेक समसामान्य एवं संस्कृत व्युत्पन्न शब्द हैं। इसके अलावा भारतीय विचारों की अभिव्यक्ति के लिए भारतीय शब्दावली ही अधिक उपयुक्त है। उदाहरण के लिए 'देहात' शब्द को लीजिए। जो भारतीय

दर्शन 'देहांत' शब्द मे निहित है वह अंग्रेजी का पर्यायवाची शब्द 'डेड' (dead) व्यक्त नहीं कर पाता। देहांत शब्द 'देह' और अंत के सश्लेषण से बना है, जिसका तात्पर्य यह है कि केवल शरीर का अंत होता है, क्योंकि भारतीय दर्शन आत्मा को अमर मानता है। स्पष्ट है 'डेड' (dead) शब्द सारी बात व्यक्त नही कर पाता।

हिंदी में जहां एक ही क्रिया से काम चल जाता है, अंग्रेजी में वहां कई क्रियाओं का इस्तेमाल करना पड़ता है। जैसे, हिंदी मे हम कहते है . मकान बनाना, खाना बनाना, बहाना बनाना, परतु अंग्रेजी इन्ही संदर्भों मे 'बनाना' क्रिया के लिए क्रमश: टू बिल्ड (to build), टू कुक (to cook) और टू मेक (to make) का प्रयोग किया जाएगा। इन तीनों स्थानों पर अंग्रेजी मे एक ही पद का प्रयोग अशुद्ध होगा।

विशेषणों की तुलना के लिए भी अंग्रेजी में हर शब्द के लिए समान प्रणाली नही है, जैसे कि हिंदी में है। उदाहरण के लिए सुदर, पतला और अच्छा शब्द लीजिए। कुछ शब्दो के शुरू मे अधिकतर और अधिकतम या शब्दों के अत में 'तर' और 'तम' लगाने से तुलनात्मक शब्द बन जाते है। परतु अंग्रेजी मे कई बार यह पद्धति नियम रहित हो जाती है। यदि हम उपर्युक्त तीनों शब्दो के अंग्रेजी पर्यायवाची शब्द लें तो इनकी तुलना की कोटि के शब्द तीन अलग प्रकार बनेंगे।

(सुंदर — beautiful)	ब्यूटिफुल	मो:र् ब्यूटिफुल	मोस्ट ब्यूटिफुल
(पतला — thin)	थिन	थिन्नर	थिन्नेस्ट
(अच्छा — good)	गुड	बे'-टर्	बे'-स्ट

हिंदी लिपि में अंग्रेजी की तरह बड़े और छोटे अक्षर नहीं होते और न ही छापे और लिखाई की अलग-अलग प्रणालिया है। निश्चित ही थोड़े बहुत वांछित संशोधनों के साथ रोमन लिपि की अपेक्षा देवनागरी लिपि बेहतर सिद्ध हो सकती है।

उपर्युक्त आधारो पर यह कहना ग़लत नही होगा कि सभी हिंदुस्तानियो के लिए अंग्रेजी की अपेक्षा हिंदी सीखना सरलतर होगा।

उपसंहार

यह दुर्भाग्य का विषय है कि राजभाषा के प्रश्न पर कभी भी वैज्ञानिक तरीके से कोई बड़ी बहस नही हुई है। हिंदी के समर्थन और विरोध एवं अंग्रेजी के समर्थन तथा विरोध के नारों और प्रदर्शनों के कोलाहल में समस्या के तर्कात्मक समाधान के लिए प्रयत्न नही हो पाया। भाषाविद् स्वर्गीय डा. सुब्बारामन् ने राजभाषा

आयोग की रिपोर्ट के साथ मसानी अपने असहमति नोट मे पूर्वोक्त कसौटियो मे से एक का कुछ वर्णन तो किया, परन्तु उन्होने इनके आधार पर विभिन्न भाषाओ के दावो को परखने की बजाय अपनी बात को अग्रेजी के फायदो की गणना करने तक ही सीमित रखा।

इस बात की उपेक्षा नही की जा सकती कि अग्रेजी की पढाई पर अत्यधिक बल देने के कारण ससार की अन्य भाषाओ की पढाई की ओर देश मे समुचित ध्यान नही दिया गया है। भारतीयो के लिए चीनी भाषा सीखना एक नहीं, अनेक कारणों से आवश्यक है। रूस के साथ हमारे सबधो के आधार पर यह अनिवार्य हो गया है कि काफी सख्या मे भारतीय विद्वान् और वैज्ञानिक रूसी भाषा का गहन अध्ययन करें। इसी प्रकार भारत के लोग समीपस्थ अथवा दूरस्थ मित्र देशो की भाषाओ की अवहेलना नही कर सकते। ससार की राजनीति सदैव अनिश्चित रहती है, इसलिए यह आवश्यक है कि तमाम देशो की भाषाओं को सीखा और उनके जरिए इन देशो के घटना प्रवाह और विभिन्न मामलो की जानकारी हासिल करने के लिए देश की प्रतिभा का नियोजित तरीके से उपयोग किया जाए।

किसी देश की भाषा का ज्ञान ही उस देश की राजनीति तथा आर्थिक एव सामाजिक स्थिति को सुचारु रूप से समझने का मार्ग प्रशस्त कर सकता है। हिंदुस्तान को सभी देशो के सदर्भ मे ये मार्ग खोलने होंगे। यह तभी सभव हो सकता है जब भारत अग्रेजी भाषा के प्रति अपना अनन्य भक्ति भाव त्याग दे और देश की शिक्षा सस्थाओं मे सभी विदेशी भाषाओ का प्रशिक्षण शुरू कर दिया जाए।

हिंदी विरोधी आदोलन का रूप प्राय राजनीतिक ही रहा है। यह कथन इस बात से भी सिद्ध हो जाता है कि जो राज्य अग्रेजी के गुणगान करते हैं, उनमे से किसी एक ने भी अग्रेजी को प्रात मे सरकारी भाषा के पद पर आसीन नहीं किया है। हा, मणिपुर, नागालैंड, गोआ, दमन, दीव जैसे राज्यो तथा सघ राज्य क्षेत्रो ने अग्रेजी को सरकारी भाषा जरूर घोषित किया है, परतु इसके कारण ऐतिहासिक हैं अथवा उनको आजादी से पूर्व की विरासत मे मिली परपरा है। जैसे जैसे इन राज्यो की अपनी भाषाए विकसित होती जाएगी, निस्सदेह वे अग्रेजी की जगह लेती जाएगी। इस बात को भी नजर अदाज नहीं किया जा सकता कि अपवादो को छोडकर प्रत्येक विद्वान् केवल अपनी भाषा मे ही मौलिक रचना करके ससार मे ज्ञानभण्डार की वृद्धि मे अपना योगदान कर सकते हैं। इसलिए अग्रेजी के प्रति अनावश्यक भक्तिभाव बनाए रखना भारतीय मानव शक्ति, समय और धन का केवल अपव्यय ही नहीं होगा, परन्तु अपनी विवेक-हीनता का भी परिचय देना होगा।

संदर्भ और टिप्पणियां

1. भारत, राजभाषा आयोग, रिपोर्ट, 1955-56, नई दिल्ली, गृह मंत्रालय, 1957, पृष्ठ 59
2 मीडोज ए. जे., कम्यूनिकेशन इन साइंस, बटर वर्थ एंड कंपनी, लंदन, पृष्ठ 166
3 भारत, रजिस्ट्रार ऑफ़ न्यूज पेपर्ज, प्रेस इन इंडिया 1974, अठारहवीं रिपोर्ट, भाग 1, दिल्ली, पृष्ठ 171-172.
4. होमर, ए. जे. (संपादक), विट् एंड विजडम ऑफ गांधी, बोस्टन, बेकन प्रेस, 1951, पृष्ठ 158
5 वही, पृष्ठ 158.
6. स्प्रैट, पी., डी. एम. के. इन पावर, बंबई, नचिकेता, 1970, पृष्ठ 12.
7. वही, पृष्ठ 14-15.
8. मिश्र, बी. बी., इंडियन मिडल क्लासिज, देयर ग्रोथ इन माडर्न टाइम्ज, लंदन, ओ यू पी, 1961, पृष्ठ 322.
9 देखिए : परिशिष्ट XIV.
10 भारत, राजभाषा आयोग, रिपोर्ट, 1955-56, नई दिल्ली, गृह मंत्रालय, 1957, पृष्ठ 418.
11. देखिए : परिशिष्ट XV.
12 देखिए : परिशिष्ट II.
13 एम के. गांधी, रेमनेसेंस ऑफ गांधी जी, बंबई, वोरा एंड कं 1951, पृष्ठ 67.
14 वात्स्यायन, एस. एच.; लैंग्विज एंड सोसायटी इन इंडिया, इंडियन इंस्टिट्यूट ऑफ एडवांस्ड स्टडीज, 1869, पृष्ठ 141, संपादक ए. पोद्दार, शिमला.
15 भारत, लोक सभा, बहस, चौथी श्रृंखला, ग्रंथ 10, तीसरा अधिवेशन, दिसंबर 7, 1967, दिल्ली, लोक सभा सेक्रेटेरिएट, 1967, पृष्ठ 5526.
16 अहमद, जे़ड. ए. ; नेशनल लैंग्विज फार इंडिया : ए सिंपोजियम, इलाहाबाद, किताबिस्तान, 1941, पृष्ठ 46-47.
17. स्प्रैट, पी.; डी. एम. के. इन पावर, बंबई, नचिकेता, 1970, पृष्ठ 31.
18. ट्रेवेलान, हफ्री ; डिप्लोमेटिक, चैनल्स, लंदन, मैकमिलन, 1973, पृष्ठ 79-80
19 टाउनसैंड, डब्लयू. सी ; दे फ़ाउंड ए कॉमन लैंग्विज, न्यूयार्क, हार्पर, 1972, पृष्ठ 26.
20. वही, पृष्ठ 110-111.

अध्याय छ

हिंदी का विकास एवं प्रोत्साहन

संविधान के अनुच्छेद 351 के अनुसार 'हिन्दी भाषा का प्रसार और विकास करना ताकि वह भारत की सामाजिक संस्कृति के सब तत्वों की अभिव्यक्ति का माध्यम हो सके संघ का कर्तव्य होगा।' परंतु हिंदी के विकास एवं प्रोत्साहन के प्रति सरकार की उदासीनता के बारे में शिकायत सुनना एक सामान्य बात है। जब सरकार ने 1963 ई और 1967 ई में संसद में राजभाषा विधेयक प्रस्तुत किए तो सभी ओर से इनके विरुद्ध जोरदार भावनाएं व्यक्त की गईं। सदस्यों ने संविधान की धारा 343, जिसके अनुसार 1965 ई से अंग्रेजी के स्थान पर हिंदी को देश की राजभाषा बनना था, को असली जामा पहनाने के काम में अकुशलता और बदनीयती का परिचय देने के लिए सरकार की कड़ी निंदा की। दूसरी ओर अहिंदी भाषा भाषियों पर हिंदी थोपने और इसमें 'जल्दबाज़ी' से काम लेने की कटु आलोचना हुई और इसके खिलाफ अनेक प्रदर्शन हुए। इसलिए वस्तुगत निर्णय के लिए संपूर्ण स्थिति का सिंहावलोकन करना समुचित होगा।

हिंदी के संबंध में जो कार्य हुआ है उसे तीन मुख्य वर्गों में विभक्त किया जा सकता है—सरकारी, अर्ध सरकारी एवं प्राइवेट संस्थाओं द्वारा किया गया कार्य। अध्यादेशों, विधि, संकल्पों और प्रशासनिक आदेशों का जारी किया जाना तथा इनका क्रियान्वयन प्रथम वर्ग के अंतर्गत आता है। शिक्षा संस्थाओं का कार्य जिसका सरकारी मशीन के काम पर प्रभाव पड़ता है, तथा विश्वविद्यालय अनुदान आयोग, संघ लोक सेवा आयोग, अदालतों तथा अन्य इस प्रकार की स्वायत्त संस्थाओं द्वारा हिंदी के लिए किए गए कार्य को द्वितीय कोटि में रखा जा सकता है। प्राइवेट और स्वयंसेवी संस्थाओं, जन संपर्क साधनों एवं अन्य गैरसरकारी संगठनों के कार्य को तीसरी श्रेणी में

सम्मिलित किया जा सकता है।[1]

अनुच्छेद 351 के अनुसार, हिंदी को प्रोत्साहन देना संघ शिक्षा मंत्रालय की जिम्मेदारी है। मंत्रालय ने इस संबंध में किए गए काम की पहली विस्तृत रिपोर्ट 1969 ई. में 'एक सिंहावलोकन : हिंदी का प्रसार एवं विकास, 1952-1967' नामक पुस्तक में छापी थी। इसके पश्चात् गृह मंत्रालय द्वारा अनेक वार्षिक रिपोर्टें छापी जा चुकी हैं। सरकार द्वारा हिंदी को बढ़ावा देने के लिए निम्न संस्थान बनाए गए हैं।

हिंदी के उत्थान हेतु संस्थान

क्रमांक	संस्थान का नाम	स्थापना का वर्ष	उद्देश्य
1.	वैज्ञानिक एवं तकनीकी पारिभाषिक शब्दावली का बोर्ड	1951	गणित, भौतिकी, रसायन, चिकित्सा, जंतु विज्ञान, कृषि, भूविज्ञान, सामाजिक विज्ञान, प्रशासन एवं सुरक्षा संबंधी विषयों के लिए तकनीकी शब्दों का निर्माण
2.	केंद्रीय हिंदी निदेशालय	1960	हिंदी प्रसार संबंधी कार्य
3.	केंद्रीय हिंदी शिक्षण मण्डल, आगरा	1960	अहिंदी भाषा भाषियों एवं विदेशी लोगों को हिंदी पढ़ाने और अन्य संबंधित विषयों पर व्यावसायिक जानकारी और सलाह देना
4.	अखिल भारतीय हिंदी संस्था संघ	1964	केंद्रीय एवं प्रांतीय सरकारों को हिंदी के विकास संबंधी योजनाओं पर परामर्श देना

1967 ई. में प्रधानमंत्री की अध्यक्षता में एक केंद्रीय हिंदी समिति की स्थापना की गई। इसके अतिरिक्त अनेक मंत्रालयों में हिंदी सलाहकार समितियां हैं। इन कमेटियों में पार्लियामेंट के सदस्य और सरकारी कर्मचारी सदस्य होते हैं। प्रत्येक कमेटी के अध्यक्ष संबद्ध मंत्रालय के मंत्री होते हैं। कुछ एक मंत्रालयों की कमेटियों के अध्यक्ष प्रधानमंत्री हैं। ये समितियां समय समय पर मंत्रालय के काम में हिंदी के प्रयोग में हुई वृद्धि का मूल्यांकन करती हैं।

अहिंदी भाषा भाषी राज्यों के स्कूलों में हिंदी अध्यापकों की नियुक्ति के लिए केंद्रीय सरकार राज्य सरकारों को शत प्रतिशत अनुदान देती रही है। इन राज्यों में हिंदी अध्यापकों के प्रशिक्षण के लिए प्रशिक्षण कालेजों की स्थापना

का खर्च भी केंद्रीय सरकार देती रही है। आंध्र प्रदेश, असम, गुजरात, कर्नाटक, केरल, महाराष्ट्र, मणिपुर, मेघालय, नागालैंड, तमिलनाडु और पश्चिमी बंगाल जैसे अहिंदी भाषी राज्यों को दी गई वार्षिक वित्तीय सहायता का ब्यौरा कुछ वर्षों के लिए इस प्रकार है

अनुदान की राशि

(लाख रुपयों में)

वर्ष	हिंदी अध्यापकों के लिए	प्रशिक्षण कालेजों के लिए
1961-62	2 17	3 68
1962-63	9 00	3 33
1963-64	15 00	4 12
1964-65	190 88	6 61
1965-66	92 49	9 26
1966-67	48 35	6 86
1967-68	82 83	6 18
1968-69	83-40	5 62
1969-70	100 00	7 95
1970-71	114 07	10 03
1971-72	156 00	12 00
1972-73	250 00	12 00
1977-78	264 96	8 30

(पूरे दशक में विभिन्न राज्यों को दी गई अनुदान राशि की तुलना के लिए देखिए परिशिष्ट XXI)

चूंकि अनुदान राज्य की आवश्यकताओं के अनुसार दिया जाता था, इसलिए कदाकदा कुछ राज्यों को यह राशि नहीं भी मिली। सालाना अनुदान में कमी बेशी इस बात की सूचक है कि हिंदी का काम निर्बाध गति से प्रगति नहीं करता रहा, और प्राय हर योजना[2] के अंत के आसपास ही काम की गति तेज होती रही है। योजना के अंतिम वर्ष का खर्च योजना के पूर्व वर्षों के खर्च से अधिक इसलिए भी है क्योंकि अंतिम वर्ष के खर्चे में उस वर्ष और योजना के पिछले वर्षों का खर्च शामिल है।

हिंदी एवं अहिंदी भाषी क्षेत्रों में 1975 ई में हिंदी प्रशिक्षण केंद्रों का वितरण इस प्रकार था

केंद्रों की संख्या

क्रम	केंद्र का विवरण	हिंदी भाषी राज्य एवं संघ राज्य क्षेत्र मे	अहिंदी भाषी राज्य एवं संघ राज्य क्षेत्र में
1.	पूर्णकालिक भाषा प्रशिक्षण केंद्र	32	47
2.	अंशकालिक भाषा प्रशिक्षण केंद्र	21	57
3.	टंकण एवं आशुलिपि प्रशिक्षण केंद्र	3	3

इस प्रकार अहिंदी भाषी राज्यो मे हिंदी प्रशिक्षण केंद्रों की संख्या अधिक है, और यह उचित भी है। परतु यह कहना मुश्किल है कि ये केंद्र कितनी दक्षता से चलाए गए हैं और स्थानीय आवश्यकताओं की कहा तक पूर्ति करते है। (इस सबंध में गवेषणा लाभप्रद हो सकती है।)

सरकारी कर्मचारियों का हिंदी ज्ञान बढाने के लिए केंद्रीय सरकार ने विभिन्न स्तरों की परीक्षाएं प्रारंभ की। उनके नाम है—प्रबोध, प्रवीण और प्राज्ञ, जिन्हें प्राइमरी, मिडिल और हाई स्कूल के हिंदी कोर्सो के बराबर मान्यता दी गई। हिंदी टंकण और आशुलिपि के लिए भी परीक्षाएं शुरू की गई। 1965 ई. और 1975 ई. के बीच जितने कर्मचारियों ने ये विभिन्न परीक्षाएं पास की उनकी तालिका अगले पृष्ठ पर दी गई है।

1975 तक प्रबोध, प्रवीण और प्राज्ञ परीक्षाएं पास करने वाले उम्मीदवारो की संख्या उन उम्मीदवारों का 57.3 प्रतिशत थी जिन्हे इन परीक्षाओं के लिए बैठना चाहिए था। टंकण और आशुलिपि के सबंध मे यह प्रतिशत क्रमशः 50.7 और 59.6 था। इस प्रकार केवल संख्या की दृष्टि से यह योजना केंद्रीय सरकार के 60 प्रतिशत से अधिक कर्मचारियो तक व्याप्त नहीं हो सकी। 1975 ई. तक 320385 कर्मचारी प्रबोध, प्रवीण एवं प्राज्ञ परीक्षाएं पास कर चुके थे।[3] इनमें मे 172419 अर्थात् 58.2 प्रतिशत ने ये परीक्षाएं 1965 ई. के बाद पास की थी, जिससे यह सिद्ध होता है कि 1965 ई तक अंग्रेज़ी के स्थान पर हिंदी के प्रयोग की तैयारी अपूर्ण एवं अपर्याप्त थी। अगली तालिका से यह भी पता चलता है कि प्रतिवर्ष परीक्षार्थियों की संख्या मे कमी होती रही है। यह अवनति 1968-69 ई. में अधिकतम (30.7 प्रतिशत) थी। शायद यह 1967 ई. के राजभाषा (संशोधन) बिल की प्रतिक्रिया का एक परिणाम था। आगामी दो सालों में यह खाई कुछ हद तक पाट दी गई। परतु फिर इसके बाद अवनति शुरू हो गई। यह भी देखने मे आता है कि शेष परीक्षाओं की अपेक्षा प्राज्ञ की परीक्षा सर्वाधिक लोकप्रिय रही। इसका कारण

विभिन्न परीक्षाओं मे उत्तीर्ण हुए
प्रत्याशियों की सख्या

क्रमाक	वर्ष	प्रबोध	प्रवीण	प्राज्ञ	टकण	आशुलिपि	कुल	पूर्व वर्ष के मुकाबले मे प्रतिशत वृद्धि
1	1965-66	4888	8731	9382	1038	201	24240	-
2	1966-67	3131	5875	7398	915	203	17522	—27 7
3	1967-68	3533	5378	6332	840	183	16266	—14 3
4	1968-69	2166	4341	6061	919	278	13765	—30 7
5	1969-70	6760	5937	6082	1121	427	20327	+47 6
6	1970-71	6954	7184	7207	1368	548	23261	+14 4
7	1971-72	5723	6287	6469	1283	408	20170	—13 2
8	1972-73	5188	5922	5490	1388	258	18246	— 9 5
9	1973-74	5383	5120	5695	1388	193	17179	— 5 8
10	1974-75	5183	4913	4306	1139	152	15693	— 8 6
कुल योग		48909	59688	63822	11399	2851	186669	
कुल सख्या का प्रतिशत		26 2	32 2	34 2	6 1	1 5	100	

शायद यही रहा होगा कि वयस्क प्राय उच्चस्तरीय परीक्षा के लिए बैठना अधिक पसद करते रहे होगे ।

शासन द्वारा अनुवाद का कार्य भी किया गया है । इस प्रयोजन के लिए सरकार ने 1971 ई मे एक केंद्रीय अनुवाद ब्यूरो की स्थापना की, जिसका उद्देश्य था

(क) हर प्रकार के गैर सांविधिक साहित्य का अनुवाद, और
(ख) विविध मत्रालयो द्वारा किए गए अनुवादो की जाच ।

ब्यूरो द्वारा अनेक नियम पुस्तकों और सहिताओं का अनुवाद किया जा चुका है। इसकी स्थापना से पूर्व अनुवाद का काम केंद्रीय हिंदी निदेशालय के जिम्मे था ।

1956 से 1970 ई तक की अवधि मे नागरी प्रचारिणी सभा ने सोलह लाख रुपए की राशि व्यय कर हिंदी विश्वकोश के बारह ग्रथ प्रकाशित किए ।

1971-72 ई. में चार त्रिभाषा कोश (प्रांतीय भाषा अंग्रेजी हिंदी) पर कार्य आरंभ किया गया, और इस प्रकार के सोलह शब्दकोश प्रकाशित करने की योजना है। 1972-73 ई. में चालीस ऐसे शीर्षकों की सूची तैयार की गई जिनके अनुवाद के लिए निजी संस्थानों और सरकारी सहयोग की योजना थी।

1952 ई. में शिक्षा मंत्रालय ने हिंदी में मौलिक और अनूदित पुस्तकों को पुरस्कार देने की एक योजना शुरू की। इस योजना के अंतर्गत ऐसी पुस्तकों पर विशेष विचार किया जाता था जिनके द्वारा अंतर्वर्गीय, अंतर्जातीय और अंतर्प्रांतीय मेल मिलाप को बढ़ावा मिले, और देश की मिश्रित संस्कृति को समझने अथवा वैज्ञानिक एवं तकनीकी विषयों की ज्ञान वृद्धि में सहायता मिले। 1967-68 ई. में एक अन्य योजना का सूत्रपात किया गया जिसके अनुसार अहिंदी भाषा भाषी इलाकों के हिंदी लेखकों और कवियों को पुरस्कार देने की व्यवस्था थी। योजना के अंतर्गत 1000 और 500 रुपए के दो पुरस्कारों की घोषणा की गई। इस पुरस्कार के लिए प्रतियोगियों की गिनती हमेशा बहुत कम रही है। मिसाल के तौर पर, 1973 ई. में 51 नामों में से दस को पुरस्कार मिले। दूसरे शब्दों में 25 प्रतिशत प्रतियोगी पुरस्कृत किए गए। इसलिए जरूरत इस बात की है कि इस योजना का प्रचार और अच्छी तरह किया जाए, पुरस्कार राशि में वृद्धि हो, और लेखकों के प्रशिक्षण की व्यवस्था की जाए।

शिक्षा मंत्रालय ने अहिंदी भाषी प्रांतों के विद्यार्थियों को सेकेण्डरी स्कूल में आगे हिंदी पढ़ने के लिए छात्रवृत्ति देने की एक योजना भी प्रारंभ की है। विद्यार्थियों की कुल संख्या को देखते हुए इस योजना से लाभान्वित होने वालों की संख्या चाहे कम है, परंतु इनकी गिनती में वृद्धि होती रही है, और 1956-57 ई. और 1973 ई. के बीच इनकी गिनती 10 से बढ़कर 1850 तक पहुंच गई।

सरकार द्वारा चलाई गई अन्य योजनाओं में कुछ के नाम इस प्रकार हैं: हिंदी और अहिंदी भाषी राज्यों के बीच अध्यापकों और विद्यार्थियों का आदान प्रदान, लेखकों की अंतर्क्षेत्रीय व्याख्यान यात्राएं, पुस्तक प्रदर्शनियां, विदेशों में हिंदी का प्रसार, हिंदी टाइपराइटर और टेलिप्रिंटर का मानकीकरण, संसद में पेश होने वाली रिपोर्टों और विधेयकों का हिंदी अनुवाद, हिंदी सूचना केंद्रों का संस्थापन इत्यादि। इन योजनाओं के लाभों और इन्हें कार्यान्वित करने में सफलताओं का स्तर एक समान नहीं है।

भारतीय सांस्कृतिक परिषद् विदेशों में हिंदी के प्रसार हेतु कार्य करती रही है। यह परिषद् विदेशों में पूर्णकालिक और अंशकालिक हिंदी प्राध्यापक भेजती है और कुछ एक देशों में उनके वेतन के लिए आर्थिक सहायता भी

देती है। हिंदी पढ़ाने के लिए परिषद् ने त्रिनिदाद, गुयाना, सूरीनाम, कैरि-बियन क्षेत्र, कालवो और रूमानिया में केंद्र खोले हैं।

अर्ध सरकारी क्षेत्र

इस क्षेत्र में विश्वविद्यालयों पर दृष्टि डालने से ज्ञात होता है कि 1968-69 ई में तीस विश्वविद्यालयों के सभी अथवा कुछ कोर्सों में शिक्षा का माध्यम हिंदी था। 1975 ई तक ऐसे विश्वविद्यालयों की संख्या 45 हो चुकी थी।

24 और 25 जनवरी, 1979 ई को नई दिल्ली में हिंदी राज्यों के शिक्षा मन्त्रियों, कुलपतियों (वाइस चांसलर) और अन्य प्रतिनिधियों का एक सम्मेलन हुआ। इस सम्मेलन में यह निर्णय हुआ कि जुलाई, 1979 ई में प्रारंभ होने वाले शैक्षिक सत्र से हिंदी भाषी राज्यों में कामर्स, आर्ट्स और साइंस के समस्त विषय हिंदी माध्यम से पढ़ाए जाएं और जुलाई, 1980 ई से इंजी-नियरी और चिकित्सा जैसे तकनीकी विषय भी हिंदी माध्यम से पढ़ाए जाएं। बैठक में भाग लेने वालों ने सभी तकनीकी कोर्सों की भारतीय भाषाओं में पुस्तकें लिखने पर भी जोर दिया। परिशिष्ट XVII के विवरण II में विज्ञान एवं मानविकी विषयों में भारतीय भाषाओं में लिखी गई पुस्तकों की भाषावार स्थिति दिखाई गई है। परिशिष्ट के विवरण I और II में भारतीय भाषाओं को शिक्षा के माध्यम के रूप में इस्तेमाल करने की हाल की स्थिति के अलावा यह भी बताया गया है कि ये भाषाएं किस स्तर पर परीक्षा का माध्यम हैं। इन विवरणों में अन्य भाषाओं की तुलना में हिंदी की स्थिति पर ध्यान देने की जरूरत है।

संघ लोक सेवा आयोग ने 1969 ई में हिंदी और संविधान की आठवीं अनुसूची की अन्य 14 भाषाओं को अखिल भारतीय उच्च केंद्रीय सेवाओं की परीक्षाओं के लिए ऐच्छिक विषय के तौर पर शुरू किया। आयोग ने यह छूट दी थी कि निबंध और सामान्य ज्ञान के प्रश्न पत्र आठवीं अनुसूची की किसी भी भाषा में लिखे जा सकते हैं। योजना यह थी कि धीरे-धीरे परीक्षा के अन्य विषयों के लिए भी इसी प्रकार की सुविधा दी जाए।[4] परंतु देखने में यह आया कि अंग्रेजी के माध्यम से इन दो प्रश्नपत्रों को लिखने वाले उम्मीद-वारों की संख्या सभी पंद्रह भारतीय भाषाओं में उत्तर लिखने वालों से कहीं अधिक है।[5] इससे स्कूलों और विश्वविद्यालयों में भारतीय भाषाओं की पढ़ाई की नींव को और अधिक मजबूत बनाने की आवश्यकता और अधिक स्पष्ट हो जाती है।

संविधान के अनुच्छेद 348 की धारा (2) के अधीन राष्ट्रपति ने उत्तरप्रदेश और मध्यप्रदेश के राज्यपालों के उस सुझाव को स्वीकृति दे दी, जिसके अनुसार

इन प्रदेशों के उच्च न्यायालयों में ऐच्छिक आधार पर कार्यवाही के कागज़ पत्रों में हिंदी भाषा के शपथ पत्र और अन्य कागज दर्ज किए जा सकते हैं। परंतु जो कागज़ फैसले के कागज़ों में शामिल किए जाए, उनका अंग्रेजी में अनुवाद अनिवार्य ठहराया गया।[6] 1970-71 ई. में राष्ट्रपति ने इलाहाबाद और राजस्थान के उच्च न्यायालयों को अनुमति दे दी कि वे वैकल्पिक आधार पर अपने फैसलों में हिंदी भाषा का प्रयोग कर सकते हैं। परन्तु यह जरूरी करार दिया गया कि उच्च न्यायालय के हिंदी में घोषित फैसलों का अंग्रेजी में अनुवाद भी साथ साथ दिया जाएगा। 1976 ई. में सर्वोच्च न्यायालय की कार्यवाही हिंदी में चलाने और हिंदी में फ़ैसला देने के विषयों पर विचार करने के लिए एक संसदीय कमेटी की नियुक्ति की गई।[7] 25 नवंबर, 1977 ई. को इलाहाबाद हाईकोर्ट ने एक केस में सारी कार्यवाही हिंदी में कर हिंदी में ही इस केस का फ़ैसला देकर राजभाषा के पक्ष में आगे की ओर एक महत्त्वपूर्ण कदम रखा।

विधि मंत्रालय दो मासिक पत्रिकाएं हिंदी में प्रकाशित करता है। एक में हाईकोर्ट और दूसरी में सर्वोच्च न्यायालय के प्रकाशन योग्य फ़ैसलों का विवरण होता है। शासन ने विधि के क्षेत्र में दो सर्वश्रेष्ठ प्रकाशनों के लिए क्रमशः 10,000 और 5,000 रुपए के पुरस्कार भी घोषित किए हैं।

निजी क्षेत्र

निजी क्षेत्र ने भी हिंदी के प्रसार के लिए महत्त्वपूर्ण योगदान किया है। वस्तुतः इस सिलसिले में निजी संस्थाओं ने बिना किसी सरकारी मदद के मार्गदर्शक का काम किया है, यद्यपि बाद में कई संस्थाओं को सरकारी सहायता उपलब्ध हो गई। प्रथम पंचवर्षीय योजना में इस सहायता के लिए सरकार ने 7.39 लाख रुपए की राशि रखी थी। तीसरी योजना तक यह राशि बढ़ाकर 34.69 लाख रुपए कर दी गई थी। समस्त प्राइवेट संस्थाओं के कार्य कलापों का समन्वय अखिल भारतीय हिंदी संस्था संघ करता है। ये संस्थाएं एक सौ से ऊपर है। स्वयंसेवी संस्थाओं में हिंदी साहित्य सम्मेलन प्रयाग, दक्षिण भारत प्रचार सभा, मणिपुर हिंदी परिषद् के नाम विशेष रूप से उल्लेखनीय हैं। प्रथम दो संस्थाओं को राष्ट्रीय महत्त्व के संस्थान घोषित किया जा चुका है, और इनकी गतिविधियां व्यापक और विविध हैं।

जनसंपर्क साधनों में प्रेस, रेडियो, फिल्म और दूरदर्शन तथा अन्य परंपरागत संचार साधनों को शामिल किया जाता है। जनसंचार साधनों का मुख्य कार्य सूचना प्रसार होता है। इस आधार पर जनसंचार साधनों के विशेषज्ञों का मत है कि जनसंचार साधनों की कोई स्वतंत्र भाषा नीति नहीं होती। परंतु लोगों को सूचना देने के लिए इन साधनों को किसी न किसी

भाषा का प्रयोग करना होता है, और इस प्रक्रिया मे वे भाषाओ के विकास को प्रभावित करते हैं और इनकी वृद्धि म भी सहयोग देते हैं। इसलिए हिंदी की लोकप्रियता जाचने के लिए जनसचार साधनो के स्वरूप का सिंहावलोकन लाभप्रद होगा।

1952 ई और 1973 ई के बीच 21 वर्षों की अवधि मे विविध भाषाओ मे प्रकाशित दैनिक, साप्ताहिक और पाक्षिक पत्रिकाओ में जो वार्षिक विकास हुआ है, उसकी झलक परिशिष्ट XVII म मिल सकती है। इससे पता चलता है कि हिंदी प्रकाशनो की सालाना वृद्धि 15 02 प्रतिशत रही, जबकि इसकी तुलना में अग्रेजी प्रकाशनो के सबध मे यह प्रतिशत 10 85 था, परतु निरपेक्ष आकडो की दृष्टि मे अग्रेजी प्रकाशन प्रथम स्थान पर थे।

पाठक गण सबधी ग्राफ भी किसी भाषा की लोकप्रियता का सूचक होता है। 1970 ई म आरगेनाइजेशन रिसर्च ग्रुप, बड़ौदा (ओ आर जी) ने 15 वर्ष से ऊपर के वयस्कों में अखबारों के पाठकीय ढग या तरीके की जानकारी के लिए एक सर्वेक्षण किया। इस सर्वेक्षण से पता चला कि अग्रेजी प्रकाशनों की अनन्य रीडरशिप दिल्ली और असम में लगभग दो प्रतिशत, महाराष्ट्र और बगाल में एक प्रतिशत के आसपास थी और शेष अधिकाश क्षेत्रो में आधा प्रतिशत स कम थी। इसके प्रतिकूल, हिंदी प्रकाशनो का पठन बहुत अधिक था। रीडरशिप में वृद्धि प्रकाशनो और शिक्षा सबधी सुविधाओ में वृद्धि के साथ जुडी रहती है।

दर्शको की सख्या की दृष्टि से और श्रव्यदृश्य साधन होने के नाते प्रभाव की दृष्टि से, फिल्म जनसचार साधनो का महत्त्वपूर्ण अग है। 1970 ई के ओ आर जी सर्वेक्षण ने प्रमाणित किया कि नगर और ग्राम, पुरुष एव महिला, प्राय हर वर्ग की आबादी में समाचारपत्रो की तुलना मे फिल्मों की पहुच कही अधिक थी। रेडियो प्रोग्रामो में कमर्शियल प्रसारण सर्वाधिक जनप्रिय हैं, परतु चित्रपट इनसे भी आगे है। परिशिष्ट XVIII से पता चलता है कि तमिल, तेलुगु, मलयालम और कन्नड भाषा की फिल्मो के निर्माण में 1947 ई और 1980 ई के बीच पर्याप्त उन्नति हुई है। इस परिशिष्ट से एक और बात भी स्पष्ट होती है कि 1965 ई में जब भाषा के विषय को लेकर आम कोलाहल उठा तो कुछ वर्षों तक हिंदी की फिल्मो के निर्माण में ह्रास हुआ, और उसके पश्चात् दक्षिण की चार भाषाओं की फिल्मो की सख्या मे प्राय वृद्धि होती गई। राज्य सरकारो द्वारा प्रोत्साहन के कारण भी क्षेत्रीय भाषा की फिल्मो में इजाफा हुआ। परतु तथ्य तो यह है कि हिंदी कथाचित्र अब भी अन्य किसी भी भाषा में बनी फिल्मों की अपेक्षा कही अधिक लोकप्रिय हैं। औसत यह है, कि जहा हिंदी फिल्म के देश में प्रदर्शन के लिए 45 प्रिंट

निकाले जाते है, वहां तमिल, तेलुगु, कन्नड़ और मलयालम फिल्मो के 20 से अधिक प्रिंट नही निकलते। इसके अतिरिक्त, हिंदी फ़िल्मे हर समय कम से कम दो सर्किट पर चल रही होती है और शेष समस्त क्षेत्रीय फिल्मे केवल एक ही सर्किट पर होती है।[8] प्रत्येक भाषा क्षेत्र में सिनेमा घर प्रायः हिंदी फ़िल्म दर्शकों से भरे रहते है। इससे हिंदी फीचर फिल्मों की सर्वप्रियता का स्पष्ट प्रमाण मिलता है। साथ ही इससे यह भी पता चलता है कि हिंदी को जन साधारण की भाषा बनाने मे फिल्मो का कितना योगदान है। भारत में साल भर में दो या तीन अंग्रेजी फ़िल्मो का निर्माण होता है। देश मे अंग्रेज़ी भाषा की फ़िल्मों का आयात अवश्य होता है, परतु इन फिल्मों की प्रतियां सीमित संख्या में होती है। पिछले कुछ वर्षो मे विदेशी कथाचित्रों का आयात इस प्रकार रहा :

विदेशी कथाचित्रों का आयात

वर्ष	आयात की गई विदेशी फिल्मो की संख्या
1970	176
1971	129
1972	114
1973	38
1974	26
1975	102
1976	97
1977	192
1978	139
1979	153
1980	159

1973, 1974 ई. मे अंग्रेजी फ़िल्मों के आयात की सरकार की नीति मे तब्दीली के कारण एकदम अवनति हुई। अंग्रेजी फ़िल्मों के आयात पर रोक लगा दी गई, क्योंकि विदेशी फ़िल्म संस्थान पारस्परिकता के आधार पर भारतीय फ़िल्मे ख़रीदने को तैयार नही थे। वैसे भी अंग्रेजी फ़िल्मो का आयात गिरावट पर था।

विकास के लिए कार्य

यद्यपि आकड़ो के अनुसार उपलब्धियां बढती गई है, और सभी प्रकार की

संस्थाओं ने हिंदी के विकास में अपना योग दिया है, परंतु संविधान के अनुच्छेद 343 की पूर्ण कार्यान्विति अभी सामने दिखाई नहीं पड़ती। यद्यपि आंकड़ों की यथार्थता में कोई संदेह नहीं है परंतु कुछ आंकड़े भ्रामक हैं। उदाहरण के लिए, हजारों परीक्षार्थियों ने प्रबोध, प्रवीण और प्राज्ञ की परीक्षाएं पास कीं, परंतु इन आंकड़ों में न तो परीक्षा के और न ही उत्तीर्ण होने वाले परीक्षार्थियों के स्तर का पता चलता है। यह भी अनुमान का विषय है कि परीक्षा में सफल कर्मचारियों ने कहां तक सरकारी काम में इस अर्जित हिंदी ज्ञान का सदुपयोग किया। जिन कर्मचारियों को सरकारी खर्चे पर हिंदी की शिक्षा दिलाई गई थी, उनके लिए हिंदी में काम करना अनिवार्य किया जा सकता था, ऐसा भी न हुआ। इस प्रकार इस सदुपयोग के अभाव में कर्मचारियों का हिंदी का ज्ञान लुप्त होता गया। इसके अलावा, यद्यपि नियमावलियों के अनेक ग्रंथों का अनुवाद किया जा चुका है, इनका इस्तेमाल अभी तक अपर्याप्त ही रहा है।

यदि हिंदी के विकास का सूचकांक इस आधार पर निकाला जाए कि इसने कहां तक अंग्रेजी का स्थान लिया है, तो कोई स्पष्ट तस्वीर उभर कर सामने नहीं आती, और न ही इस संबंध में कोई पुष्ट आंकड़े मिलते हैं।

संघ सरकार द्वारा पब्लिक से और राज्य सरकारों से हिंदी में प्राप्त पत्रों का उसी भाषा में उत्तर देने की चर्चा भी कोई उत्साहवर्धक नहीं है।[9]

निस्संदेह हिंदी के विकास के लिए केंद्रीय तथा राज्य सरकारों, स्वायत्त एवं निजी संस्थाओं ने प्रचुर योगदान दिया है। हिंदी प्रशिक्षण योजना, सेवाकालीन प्रशिक्षण प्रोग्राम, विद्यार्थियों और विद्वानों के लिए पुरस्कार एवं छात्रवृत्ति की योजना, लेखकों और अध्यापकों का अंतर्प्रांतीय आदान प्रदान इस सिलसिले में ठीक कदम रहे हैं। परंतु अभी बहुत कुछ करना बाकी है। राज्य सरकारों को क्षेत्रीय भाषाओं के उत्थान के लिए अभी विस्तृत योजनाएं बनाने की आवश्यकता है। जरूरत के अनुसार क्षेत्रीय भाषाओं की प्रगति के लिए केंद्र सरकार को राज्य सरकारों की मदद देनी चाहिए। सभी भारतीय भाषाओं का विकास केंद्र और राज्य सरकारों की सम्मिलित जिम्मेदारी है। प्रशासनिक सुविधा के लिए चाहे हर प्रांत की जिम्मेदारी अपनी क्षेत्रीय भाषा के उत्थान के लिए प्रसाधन जुटाना हो, परंतु सभी भारतीय भाषाओं का विकास एक राष्ट्रीय दायित्व है, जिसमें सभी सरकारों और समस्त जनता को हाथ बंटाना चाहिए।

हिंदी तथा क्षेत्रीय भाषाओं में शिक्षा और अनुसंधान की सुविधाओं के विस्तार की जरूरत है। जहां हिंदी क्षेत्रीय भाषाओं की लिपि में अथवा क्षेत्रीय भाषाएं देवनागरी लिपि में पढ़ाने की मांग हो वहां प्रायोगिक आधार पर इस

ओर कदम उठाएं जाने चाहिएं। शासन की गतिविधियां सभी ओर विस्तृत होती जा रही हैं। इसलिए बाकी कार्य क्षेत्रो की तरह भाषाओ के विकास मे सफलता भी इस बात पर निर्भर रहेगी कि राज्य सरकारें इस काम मे कितनी दिलचस्पी लेती है। परिशिष्ट XXI मे दर्शाया गया है कि केंद्र की एक ही योजना मे राज्य सरकारों ने कितना कितना लाभ उठाया है।

भाषा प्रशिक्षण सामग्री को बढाने और नौसिखियों को इसे उचित मूल्य पर देने की आवश्यकता है। वस्तुत: भारत जैसे देश में जहा साक्षरता और शिक्षा के अन्य कार्यक्रमों को प्रेरणा देने की ज़रूरत है, सरकार को प्रकाशन तथा श्रव्य दृश्य साधनों के निर्माण कार्य मे मुनासिब अनुदान देना चाहिए, ताकि कम से कम इन चीजो पर होने वाले ख़र्च के कारण तो शिक्षा के कार्य में विघ्न न पड सके। शिक्षा संस्थाओ और पुस्तकालयों में आसानी से भाषा सीखने के लिए प्रयोगशालाओ (लेन्ग्-ग्विज लैबारेट्रिज) की स्थापना की भी आवश्यकता है। जब तक कार्यक्रम के इन पहलुओ की ओर ध्यान नही दिया जाएगा, हिंदी, अंग्रेजी का स्थान नहीं ले सकेगी।

देश के सभी भागों मे अनुसंधान द्वारा यह सामग्री एकत्र करने की आवश्यकता है कि सभी भारतीय भाषाओं में क्या क्या साम्य है। भाषाओं में विद्यमान समापवर्तक और सभी भाषा में मिलती जुलती पारिभाषिक शब्दावली का हिंदी में समावेश करने से संघ की भाषा सभी वर्गो द्वारा सरलता से स्वीकार्य हो जाएगी। विद्वानो को यह अध्ययन करना चाहिए कि विभिन्न भाषा भाषियों को हिंदी सीखने में क्या क्या कठिनाइया होती हैं और इन मुश्किलो को हल करने के उपाय सुझाने चाहिए।[10]

अनुवाद के काम को और आगे बढ़ाने की आवश्यकता है। तदर्थ अनुवाद कार्य के चार आयाम हो सकते है: हिंदी से क्षेत्रीय भाषाओ मे, क्षेत्रीय भाषाओं से हिंदी में, सभी भारतीय भाषाओं से विदेशी भाषाओ मे और विदेशी भाषाओ से भारतीय भाषाओ मे। प्रथम दो क्षेत्रों मे कार्य से लोगों मे आपसी मेल-मिलाप को बढ़ावा मिलेगा, और उन्हे यह भी पता चलेगा कि भारतीय साहित्य कितनी संपदा से भरपूर है। देश के मानक ग्रंथों के विदेशी भाषाओं में अनुवाद कार्य को अभी तक उचित महत्ता नही दी गई है। परिणामस्वरूप, कुछ थोड़े भारतीय विद्याविदों को छोड़कर अन्य देशों के अधिकांश लोग भारतीय भाषाओ के साहित्य मे निहित निधि से प्रायः अपरिचित हैं। इस प्रकार के अज्ञान और हमारी अंग्रेज़ी पर अत्यधिक निर्भरता के कारण अन्य राष्ट्र के लोगो के दिलों में यह अज्ञान घर कर गया है कि भारतीय भाषाएं अभी तक अविकसित अवस्था में हैं। अत: इस कार्य को और तेजी से बढ़ाने की जरूरत है। जाहिर है, अपने देश के लोगों को विदेश में प्रचलित कला, विज्ञान आदि की आधुनिकतम धाराओं

न परिचित रखने के लिए कुछ मानक ग्रंथों का भारतीय भाषाओं में अनुवाद कार्य करना आवश्यक होगा।

केंद्र और राज्य सरकारों को इस सब काम की प्रगति के लिए अधिकाधिक जिम्मेदारी लेनी होगी। परंतु सेवानिष्ठ व्यक्ति और संस्थाएं भी निस्स्वार्थ तथा समर्पण भाव से बहुत योग दे सकती हैं। स्वामी दयानंद, स्वामी विवेकानंद और अनेक ऐसे महानुभावों की सफलताएं निस्संदेह यह सिद्ध करती हैं कि जो इन व्यक्तियों ने अपनी निजी कोशिशों से प्राप्त किया है, वह कई बार सरकारें अपने पास सभी साधनों के होते हुए भी नहीं कर सकी हैं। इसलिए राष्ट्रीय भाषाओं के उत्थान के हेतु निष्ठावान् व्यक्तियों और संस्थाओं को प्रोत्साहन देना बहुत उपयोगी होगा।

अंत में इस बात पर फिर जोर देना आवश्यक है कि यद्यपि भारतीय भाषाएं प्राचीन और संपन्न हैं और आज की आवश्यकताओं की पूर्ति के लिए उन्हें उपयोगी बनाने के प्रयोजन से उनके विकास के लिए काफी काम किया जा चुका है, फिर भी अभी उन्हें और विस्तीर्ण और गुण संपन्न बनाने की जरूरत है। संघ की भाषा और सभी अन्य भारतीय भाषाएं इस योग्य होनी चाहिए कि वे विदेशी भाषाओं से प्रभाव ग्रहण कर सकें, और उन्हें भी प्रभावित कर सकें। यह भी कोई कम जरूरी नहीं कि जिन कर्मचारियों ने स्कूलों या कालेजों में अथवा सेवाकालीन शिक्षा प्रोग्राम में हिंदी का ज्ञान प्राप्त किया है, वे इस ज्ञान का दफ्तरों के काम में इस्तेमाल करें। जिन विधि पुस्तकों और कोडों का अनुवाद हो चुका है उन्हें शीशागार में न रखकर प्रयोग में लाना चाहिए। केवल इन उपायों से ही शनैः शनैः हिंदी तथा अन्य राज्यीय भाषाएं सरकारी काम में अंग्रेजी का स्थान ले पाएंगी।

संदर्भ और टिप्पणियां

1 इस सिलसिले में संस्थाओं का सरकारी, अर्ध सरकारी और गैर सरकारी श्रेणियों में सुनिश्चित बंटवारा करना कठिन है, उदाहरण के तौर पर इसी अध्याय के आगामी पन्नों में परिचर्चित जनसंपर्क साधनों में से फिल्म और अखबार तो प्राइवेट क्षेत्र में हैं और रेडियो और दूरदर्शन सरकारी क्षेत्र में हैं और कभी स्वायत्त भी हो सकते हैं

न्यायालय स्वाधीन हैं, परंतु विधि मंत्रालय द्वारा हिंदी के प्रसार हेतु किया गया कार्य सरकारी कार्य क्षेत्र के अंतर्गत आएगा

2 प्रथम योजना 1951 ई में प्रारंभ हुई थी। योजनाओं की अवधियां क्रमशः इस प्रकार हैं 1951-56, 1956-61, 1961-66, 1969-74 एवं 1974-79। 1966 और 1969 में अंतराल योजना अवकाश की संज्ञा में प्रसिद्ध है

3. इस संस्था में वे कर्मचारी भी शामिल हैं जिन्होंने ये परीक्षाएं 1965-66 ई में पूर्व पास की.

4. इस प्रश्न तथा अन्य सभी प्रश्नों की जांच के लिए कोठारी कमेटी नाम से एक समिति की नियुक्ति की गई। इस समिति की सिफ़ारिशों को स्वीकारते हुए सरकार ने 1979 में सरकारी नौकरियों के लिए होने वाली परीक्षाओं के लिए संविधान की आठवीं अनुसूची में दी गई सभी भारतीय भाषाओं के इस्तेमाल की इजाज़त दे दी है। प्रश्न-पत्र हिंदी और अंग्रेज़ी में बनाए जाएंगे

5. देखिए : परिशिष्ट XVI

6. भारत, गृह मंत्रालय, वार्षिक मूल्यांकन रिपोर्ट, 1969-70, दिल्ली, गृह मंत्रालय, 1970, पृष्ठ 5.

7. भारत, राज्य सभा, कार्यवाही, मई 21, 1976, दिल्ली, राज्य सभा कार्यालय, 1976

8. एक सर्किट अथवा परिपथ फिल्मों के वितरण की इकाई होता है जिसमें कई राज्य और संघ राज्य क्षेत्र होते हैं.

9. देखिए : परिशिष्ट XIX

10. इस क्षेत्र में भारतीय भाषा केंद्रीय संस्थान, मैसूर ने कुछ लाभप्रद कार्य किया है.

अध्याय सात

भविष्य के लिए आयोजन

किसी योजना की पूरी प्रक्रिया भविष्योन्मुख होती है। भाषा संबंधी आयोजन भी इस सिलसिले में अपवाद नही है। योजना बनाते समय वर्तमान स्थिति का जायजा लेना होता है और उसी के अनुकूल भावी नीति और कार्यक्रम का फैसला करना होता है। भाषा आयोजन कार्य केवल भाषाविज्ञो से ही संबंध नही रखता। इस कार्य मे समाज भाषाविदो, राजनीतिज्ञों, अर्थशास्त्रियों और मनोवैज्ञानिको को भी शामिल करना जरूरी है। जनभाषा के ठीक आयोजन से राष्ट्रीय एकता के निर्माण कार्य मे बहुत मदद मिल सकती है, देश मे सूचना और शिक्षा के प्रसार की प्रक्रिया को तेज किया जा सकता है, और विद्वानो, वैज्ञानिको एव अन्य विशेषज्ञो के अन्तर्प्रांतीय आदान प्रदान मे भी सहायता मिल सकती है। इसके प्रतिकूल इस संबंध में गलत कदम उठाने से फूट की प्रवृत्तियो को बढावा मिल सकता है, और नकारात्मक परिणाम निकल सकते हैं।

योजना और आधारिक संरचना

प्रत्येक देश की योजनाए उसकी जरूरतो और वहा पर उपलब्ध बुनियादी संरचना के अनुसार ही हो सकती हैं। भारत पर यह नियम और भी अधिक लागू होता है, क्योंकि भाषा के संबंध मे देश के सामने अनुसरण करने का कोई और नमूना नही है।

कई बार यह कहा जाता है कि सोवियत देश और इंडोनेशिया इस सिलसिले म भारत के लिए अच्छी मिसाल प्रस्तुत करते हैं। इन देशो मे जनभाषा के इतिहास के अध्ययन मे भारतीय भाषाशास्त्रियो, राजनीतिज्ञो और अन्य नेताओ को समस्या समाधान के लिए कुछ विचार तो अवश्य मिल सकते हैं, परन्तु हिंदुस्तान की परिस्थितियो की तस्वीर अन्य देशों की परिस्थितियों मे कुछ और

ही है। भारत के संदर्भ में सोवियत संघ की मिसाल अकसर दी जाती है। यद्यपि रूस में लगभग 130 देशज भाषाएं हैं और यहां कोई 89 भाषाओं में पुस्तकें प्रकाशित होती हैं, परंतु वहां पर रूसी भाषा को संघ की भाषा घोषित करने में बहुत कठिनाई दरपेश नहीं आई। इसके कई कारण हैं। पहली बात तो यह है कि 1917 ई. के रूसी इंकलाब से पूर्व, सोवियत संघ के मौजूदा गणराज्यों का रूस गणराज्य से घनिष्ठ संबंध था और वहां पर रूसी भाषा का भी प्रयोग होता था। अत. इन राज्यों के लिए रूसी भाषा उस प्रकार से विदेशी भाषा नही थी, जैसे भारत के लिए अंग्रेजी। दूसरी बात है कि रूसी भाषा देश की अन्य भाषाओं के मुकाबले में कहीं अधिक विकसित थी। देश की कुछ भाषाओं की तो लिपि तक नहीं थी। तीसरी बात यह है कि रूसी भाषा आधुनिक आवश्यकताओं की पूर्ति के लिए कहीं अधिक उपयुक्त थी, और देश के सर्वाधिक उन्नत भाग की भाषा थी। इसलिए इस भाषा के अध्ययन से देश के अनेक पिछड़े भागों में रहने वाले लोगों को उन्नति के अवसर प्राप्त हो सकते थे। लोगों में गतिशीलता और भ्रमणशीलता ने भी भाषाओं के सामंजस्य में काफी सहायता की है। प्रगति प्रकाशन मास्को द्वारा 1976 ई. में छपी 'सोवियत यूनियन—ए जिओग्राफ़िकल सर्वे' नामक पुस्तक के पृष्ठ 163-64 पर निम्नलिखित वर्णन पढ़ने को मिलता है:

> और अंत में, देश में बड़ी बड़ी निर्माण परियोजनाओं द्वारा भी देश की जातियों को एक करने में बहुत सहयोग मिला। इसमें रूसी भाषा का बहुत योगदान है। लोगों में भ्रमण की प्रवृत्ति जैसे जैसे बढ़ती गई, देश के मुख्य मुख्य नगर बहुजातीय बनते गए और मिले जुले विवाहों में भी वृद्धि होती गई (कुछ नगरों में यह गिनती 30-40 प्रतिशत तक है)। यह देश की विभिन्न संस्कृतियों के गहन संश्लेषण और सोवियत जनसाधारण की जीवन प्रणाली की एक तस्वीर है।

सोवियत संघ के केन्द्रीय एशिया गणराज्यों में विभिन्न एक जातीय समूह के लोगों की संख्या, जिसका ब्यौरा अगले पृष्ठ पर दिया है, भी इस कथन पर पूर्ण प्रकाश डालता है।

आगे दी गई सारणी से पता चलता है कि रूसी, उकरैनियन, बिलोरशिअन अर्थात् स्लाव भाषाओं के बोलने वाले कुल मिलाकर क्षेत्रीय आबादी का 27, 4.5 और 0.5 प्रतिशत थे। ये सभी भाषाएं स्वर और व्याकरण विज्ञान की दृष्टि से परस्पर बहुत निकट हैं। एक और बात भी ध्यान देने योग्य है कि प्रत्येक गणराज्य में वहां के मुख्य एक जातीय समूह के बाद रूसियों की ही

1959 ई की जनगणना के अनुसार सोवियत केंद्रीय एशिया कजाकिस्तान में मुख्य एक जातीय समूह के लोगों की सख्या

(हजारों में)

एक जातीय समूह	उज़्बेक एसएस आर	तैदजिक एसएस आर	तुर्कमैन एसएस आर	किरगीज एसएस आर	कजाक एसएस आर	क्षेत्र में कुल	यू एस एस आर में कुल
उज़्बेकी	5038	455	125	219	136	5972	6015
कजाकी	342	13	70	20	2787	3232	3622
तैदजिकी	311	1051	—	15		1377	1397
तुर्कमैनी	55	—	924		-	979	1002
किरघीजी	93	26	—	837		956	969
कारा-कल्पकम	168	—		—	—	168	173
उइगुरी	—	—	—	14	60	74	95
दुगनी	—	—	—	—	10	10	22
कोरियन	138	—	—	—	74	211	314
तातारी	445	57	30	56	192	780	4968
रूसी	1092	263	263	624	3972	6214	114114
उक्रैनियन	88	27	21	137	761	1034	37253
बिलोरशियन	—	—	—	—	107	107	7913
	8119	1980	1516	2066	9310	22991	208827

(इसायेव एम आई सोवियत रूस में राष्ट्रीय भाषाए, समस्याए एव समाधान, प्रोग्रेस प्रकाशक, मास्को, 1977, पृष्ठ 198)

सख्या है। उजबेक, तैजिक, तुर्कमैन, किर्गीजी और कजाकी गणराज्यों मे रूसी इन एक जातीय समूहों का क्रमश 21 7, 25,28 4,74 5 और 143 प्रतिशत हैं। सोवियत सघ के एशियाई भाग में रूसी तथा अन्य स्लाव भाषाओं के बोलने वालो की बहुसख्या मे सोवियत सघ के केंद्रीय एशियाई भागों में रूसी भाषा के प्रसार मे बहुत मदद मिली है।

पाचवा कारण यह है कि रूसी भाषा का ज्ञान लोगो के 'दाल-चावल' के साथ जुड़ा हुआ नही था क्योंकि सोवियत सविधान के अनुसार प्रत्येक नागरिक

को काम का अधिकार प्राप्त है और रूसी भाषा की जानकारी न होने से किसी व्यक्ति के आर्थिक भविष्य पर बुरा असर नही पडता । यही कारण है कि रूसी भाषा के विकास कार्य का सोवियत संघ में उस प्रकार से विरोध नही हुआ जैसे भारत में हिंदी के विकास कार्य का हुआ ।[1]

जहां तक इंडोनेशिया का प्रश्न है, जब यह डच उपनिवेश था, तब भी वहा के सभी लोग मलाय़ू भाषा समझते थे (अब इसे केवल 'भाषा' कहते है)। स्कूलों मे अधिकांश विद्यार्थी इसे पढ़ते थे। यह देश की दूसरी राजभाषा थी, यद्यपि देश की मुख्य राजभाषा 'डच' की अपेक्षा इसका बहुत कम प्रयोग होता था। जन भाषा का पुनरुत्थान राष्ट्र के स्वतंत्रता आंदोलन का एक नारा था, इसलिए देश की आजादी के बाद इमे 'डच' का स्थान ग्रहण करने मे कोई मुश्किल पेश नही आई ।

बेलजियम और स्विटजरलैण्ड जैसे देशो मे तीन तीन राजभाषाए है, परंतु यहां ऐसा इसलिए है कि इन देशों मे सम्मिलित राज्य संघो के पारस्परिक बधन बहुत मजबूत नही हैं और इन सघो के राज्यो मे रहने वाले लोग अलग अलग भाषाएं बोलते है। स्विटजरलैण्ड मे चार राष्ट्र भाषाएं है : इनके नाम है . जर्मन, फ्रेंच, इतालियन और रोमाश, जिन्हे क्रमश: 74.5, 20.1,4 और 1 प्रतिशत लोग बोलते है। पहली तीन भाषाएं देश की राजभाषाए है। इसके मुकाबले में हिंदुस्तान में 15 राष्ट्रीय भाषाए है, सभी की सभी बहुत विकसित है, और हर भाषा के बोलने वाले देश में भारी संख्या मे है। सभी 15 भाषाओं को राजभाषा घोषित करना असंभव है। इसके साथ यह भी स्मरण रखना चाहिए कि तीन भाषाओं को राजभाषा बनाने से भी स्विटजरलैण्ड की समस्या हल नही हो गई। उदाहरणतया, स्विज़रलैण्ड में अभी तक सर्व स्वीकृत राष्ट्र गान नही है। इस प्रकार यह स्पप्ट है कि भारतीय परिस्थितियो का दृश्य पटल अन्य देशों के दृश्य पटल से कुछ भिन्न ही है, और भारत के सामने बाहर की कोई ऐसी मिसाल नही है जिसका देशवासी पूर्णरूपेण अनुसरण कर अपनी समस्या का समाधान ढूढ सके।

समस्या की प्राचीनता और जटिलताएं

यह दुहराना अनावश्यक है कि देश की भाषा समस्या बहुत पुरानी है। यह प्रश्न आज़ादी की लडाई के ज्वार के नीचे दबा रहा, परंतु आजादी के फ़ौरन बाद इसने पूरे जोर के साथ अपना सिर उठाया, और तभी से ज्यो ज्यों समय बीतता गया है, इस समस्या की तीव्रता और अधिक होती गई है। मजुमदार का कहना है :

> महेश नारायण ने सन 1894 ई में भाषाई प्रांतों की मांग की। संभवत यह इस प्रकार की पहली मांग थी। बंगाल उन दिनों बंगाल, बिहार और उड़ीसा का एक सम्मिलित राज्य था। बंगाल से पृथक् होने की बिहार की मांग का एक कारण यह था कि अंग्रेजी में योग्यता और कलकत्ता राजधानी होने की वजह से सभी सरकारी नौकरियों पर बंगाली छाए हुए थे। जब महेश नारायण बिहार को बंगाल से अलग करने की मांग कर रहे थे, लगभग उसी समय उड़ीसा के जाने माने नेता उड़िया भाषा भाषी लोगों के लिए अलग प्रांत की अभियाचना कर रहे थे। इस प्रकार 1905 ई में बंगाल के विभाजन के साथ भारत की राजनीति में भाषा का प्रश्न जीवित विषय बन गया। 1911 ई में इसका फिर बटवारा हुआ और बिहार और उड़ीसा बंगाल से अलग हो गए। 1937 ई में उड़ीसा बिहार से अलग हो गया। यह ध्यान देने योग्य बात है कि बीसवीं शताब्दी के तीसरे दशक में कांग्रेस और ब्रिटिश सरकार, दोनों ने भाषायी प्रांतों का समर्थन किया।[3]

इस प्रकार भारत की भाषा समस्या की जड़ें बहुत पुरानी और गहरी हैं, और अब यह समस्या एक जटिल रूप धारण कर चुकी है। इसलिए इसका समाधान ठंडे दिमाग और तर्कसंगत उपायों से ही संभव हो सकता है। भावनात्मक एवं पूर्वग्रह भरे समाधानों से स्थिति और बिगड़ जाएगी।

हिंदी का प्रत्येक विरोध उसी प्रकार देश प्रेम के विरुद्ध नहीं माना जा सकता जिस प्रकार अंग्रेजी की हर मुखालफत अप्रगतिशील एवं प्रतिक्रियावादी नहीं कही जा सकती। बहुत बार, विरोध का उद्भव अज्ञान से होता है, इसलिए यह जरूरी है कि सर्वप्रथम सचार एवं सूचना के आधार पर तथ्यों का सेतु बांधा जाए, और इस कार्य में सभी प्रकार के मिथ्यावरणों को दूर किया जाए। भाषा के मामले में कुछ एक मोर्चेबंदियों का उल्लेख नीचे दिया गया है।

यह कहा जाता है कि हिंदी पिछड़े इलाकों की भाषा है, इसलिए इसे विकसित क्षेत्रों पर नहीं लादा जाए। पांचवें अध्याय में आंकड़ों के आधार पर यह प्रमाणित किया जा चुका है कि हिंदी भाषा भाषी राज्यों की साक्षरता देश के अन्य अनेक भागों की साक्षरता से अपेक्षाकृत कम है। इस दलील के आधार पर यह तर्क तो प्रस्तुत किया जा सकता था कि हिंदी भाषा भाषी क्षेत्र के लोगों को देश की शासन सत्ता में अधिकार नहीं मिलना चाहिए, परंतु हिंदी के खिलाफ इस दलील का इस्तेमाल बहुत सबल तर्क नहीं बनता। प्रसंगवश यह बता देना उचित होगा कि बाकी भारतीय भाषाओं के मुकाबले में हिंदी इस समय पीछे नहीं है।

फ्रैंक एथनी के इस आरोप की भी समीक्षा जरूरी है कि हिंदी में ज्ञान विज्ञान की पुस्तकों का अभाव है, और इसमे विधि एवं प्रशासन आदि शब्दावली शून्य के समान है। (राजभाषा कमेटी, 1959 की रिपोर्ट में देखिए असहमति का नोट) इस क्षेत्र में अंग्रेजी के मुकाबले मे हिंदी की स्थिति निस्संदेह काफ़ी कमजोर पड़ती है, परंतु 1950 ई. के पश्चात् हिंदी के विकास का कोई भी जानकार यह गवाही दे सकता है कि अन्य भारतीय भाषाओ की अपेक्षा हिंदी पीछे नही है। किसी भी भाषा का विकास शून्य मे नही होता है। वाछनीय विकास भाषा के प्रयोग से ही होता है। पूर्वकाल मे हिंदी को अपने विकास का पूरा अवसर नहीं मिला। भाषाओ के विकास के ऐतिहासिक पटल पर दृष्टि डालने से यह नियम सभी भाषाओ पर ठीक उतरता है और इसमें अंग्रेज़ी, रूसी अथवा कोई भाषा अपवाद नही है :

> नार्मन लोगो के शासनकाल मे और उसके तुरत बाद ; जब इगलैंड की राजभाषा फ़्रांसीसी थी; इंगलैंड मे केवल किसान और नौकर चाकर ही अंग्रेज़ी बोलते थे। उन्नीसवी शताब्दी तक संस्कृत फ़्रांसीसी समाज के लोग इसे गंवारू भाषा समझते थे। इसके मुकाबले में, इस भाषा को इस समय प्राप्त आदर किसी भी भाषा के लिए ईर्ष्या का विषय है। राष्ट्र भाषा के रूप मे जर्मन भाषा का आदर नेपोलियन की लड़ाइयो के पश्चात् की बात है। जब पेरिस के दंभियो ने पाश्चात्य रंग मे रंगे रूसियों द्वारा लिखी गई फ़्रांसीसी भाषा का मज़ाक उड़ाना शुरू किया तो तोल्स्तोय, तुर्गनेव और अन्य लेखकों का ध्यान अपनी मातृभाषा के पुनरुत्थान की ओर गया। उन्होंने उन सभी कठिनाइयों का सामना किया जो आज भी किसी राष्ट्र अथवा भाषा के सामने आ सकती हैं। सभी कार्यकर्ताओं ने यह सिद्ध कर दिया कि शुरू-शुरू में गतिरोध के बाद, उन्नति बहुत तेज़ी से होती है, और ऐसा करने से सृजनात्मक एवं स्वीकारात्मक राष्ट्रीयता की उत्पत्ति ऐतिहासिक सत्य के रूप मे सामने आ जाती है।[1]

स्वतंत्रता मिलने के पूर्व भी हिंदी देश के कुछ भागो मे शासन और अदालतो की भाषा थी। स्वतंत्रता प्राप्ति के बाद भी अनेक राज्य और संघ राज्य क्षेत्र, बिना किसी असुविधा के इसे छोटी अदालतों तथा उच्च न्यायालयों मे इस्तेमाल कर रहे हैं, और विधि, न्याय और शासन के क्षेत्रों मे इससे काम चला रहे हैं।

हिंदी मे मौजूदा पारिभाषिक शब्दावली को कृत्रिम और जटिल बताया जाता है। इसमे शक नही है कि नई और अपरिचित शब्दावली से मुश्किलें पेश आती है, परंतु इस सिलसिले में यह नहीं भूलना चाहिए कि वह कठिनाई

अधिकांश उस विशिष्ट वर्ग तक सीमित है जो बहुत वर्षों से अंग्रेजी की शब्दावली का प्रयोग करता चला आ रहा है। समाज के प्राय वयस्को और बच्चो को, जिन्हें अभी साक्षर होना है, इस प्रकार की कठिनाई नही होगी, क्योकि वे हिंदी प्रारंभ से ही सीखेंगे और अगर पारिभाषिक शब्दावली के निर्माण में पाचवें अध्याय में दिए गए राजभाषा आयोग के परामर्शों का पालन किया जाए तो बहुत कुछ मुश्किल दूर हो जाएगी। फिर भी थोडी बहुत मुश्किलें तो जरूर रहेगी ही क्योकि सामान्यत शब्दावली देश में विज्ञान, उद्योग आदि के साथ विकसित होती है। उपनिवेशवाद के कारण उन्नति और आधुनिकीकरण की दौड में पीछे रह जाने से हिंदुस्तान अब प्रगति के मार्ग पर तेजी से आगे बढने की कोशिश कर रहा है ताकि वह संसार के विकसित राष्ट्रो की पक्ति में आ मिले। इसी कारण हमारे यहा देशज पारिभाषिक शब्दावली में क्रमिक विकास का अभाव रहा है। इस सब के बावजूद, नई शब्दावली का योजनाबद्ध निर्माण और इसका निरंतर प्रयोग बहुत हद तक समस्या का निवारण कर देगा। आत्मन्, आवागमन, विवेक और ज्ञान आदि आध्यात्मिक शब्दो को ही लीजिए। बहुत से पश्चिमी देशो के लोगों के लिए इन शब्दो का सार ग्रहण करना कठिन होगा, परतु एक निरक्षर भारतीय भी इन शब्दो के अर्थों को आसानी से पकड लेता है, क्योकि वह इन्हें चिरकाल से सुनता आया है तथा उसकी संस्कृति के अभिन्न अग हैं।

हिंदी भाषा को कई बार हिंदू धर्म की भाषा बताया जाता है। यदि यह बात सत्य होती तो हिंदुओ का कोई भी वर्ग हिंदी का विरोध कैसे करता चाहे वह बगाल का हो अथवा तमिलनाडु का? कई हिंदुओ की उर्दू साहित्य को अद्वितीय देन है, और बहुत से मुसलमानो की हिंदी सेवाओ को नहीं भुलाया जा सकता। इसमें कोई सदेह नही कि हिंदी में ऐहिक साहित्य की अधिक रचना और अन्य धर्मों के श्रेष्ठ ग्रंथो के और अधिक अनुवाद की आवश्यकता है, परतु किसी भाषा का धर्म के साथ रिश्ता जोडना राष्ट्र के सामाजिक जीवन में विघटनकारी प्रवृत्तियो को निमत्रण देने वाली बात होगी। भारत में उर्दू का ह्रास इस कथन का ज्वलत उदाहरण है।

जिस मुख्य आधार पर हिंदी को संघ की भाषा का स्थान प्राप्त हुआ है, फ्रैंक एथनी ने उसे भी चुनौती दी है। उनका कहना है हिंदी सख्या में बहुत लोगो की भाषा नही है। उनका मत है कि हिंदुस्तानी, उर्दू और पजाबी बोलने वालो को हिंदी बोलने वालो से अलग कर दिया जाए, तो हिंदी भाषा भाषी देश की आबादी का केवल 10 प्रतिशत बनते हैं। उनका यह भी कहना है कि यदि उस हिंदी को प्रामाणिक माना जाए जिसमें आल इंडिया रेडियो के प्रोग्राम प्रसारित होते हैं अथवा जिस भाषा में भारतीय संविधान का अनुवाद मिलता

है तो हिंदी जानने वाले देश की आवादी का केवल आधा प्रतिशत हैं। इसकी तुलना में उनके अनुसार ·

> अंग्रेजी मे शिक्षित लोगों की संख्या हिंदी में शिक्षित लोगो की अपेक्षा कम से कम सौ गुना है। यदि मिश्रित अग्रेजी वोलने वाले इस गिनती मे शामिल किए जाएं तो मेरा अनुमान है कि यह सख्या देश मे मिश्रित हिंदुस्तानी वोलने वालो की गणना से यदि अधिक नही तो कम भी नही है।[5]

यह मालूम नही कि फ़्रैंक एंथनी द्वारा दिए गए उपर्युक्त आकडों का आधार क्या है। 1971 ई. की जनसंख्या के अनुसार देश के हिंदी भापा भापी भागो का क्षेत्रफल और इनकी आवादी इस प्रकार से थी :

हिंदी भाषा भाषी प्रांतों का
क्षेत्रफल और आवादी

क्रम	हिंदी भापा भापी क्षेत्र	जनसख्या (लाख में)	क्षेत्रफल (000 वर्ग कि. मी.)	आवादी और क्षेत्रफल कुल का प्रतिशत
1.	बिहार	563.5	174	आवादी :
2.	हरियाणा	100.3	44	$\frac{2296.7 \times 100}{5479.5} = 41.92$ प्रतिशत
3.	हिमाचल प्रदेश	34.6	56	
4.	मध्य प्रदेश	416.5	443	क्षेत्रफल :
5.	राजस्थान	257.7	342	$\frac{1354 \times 100}{3280} = 41.80$ प्रतिशत
6.	उत्तर प्रदेश	883.4	294	
7.	दिल्ली	40.7	1	
	कुल .	2296.7	1354	भारत की कुल जनसंख्या =5479.5 लाख भारत का कुल क्षेत्रफल =3280000 वर्ग कि. मी

इस प्रकार 1971 ई. की जनगणना के अनुसार हिंदी भापा भापी प्रांतों की आवादी और क्षेत्रफल लगभग वरावर थे। दोनों 42 प्रतिशत के आसपास थे। जैसे कि परिशिष्ट II मे दर्शाया गया है, हिंदी भापा का श्रेणी अक (रैंक स्कोर) उच्चतम है और यह सर्वाधिक विश्वविद्यालयों में शिक्षा का माध्यम है।[6]

सुनीति कुमार चैटर्जी ने हिंदी का विरोध करते हुए कहा है कि इसे चुनने वाली सविधान सभा पालियामेंट की तरह निर्वाचित अथवा प्रतिनिधि निकाय नही थी। यदि इस तर्क को मान लिया जाए, तो समस्त राष्ट्रीय सस्थानो को भग करना होगा क्योकि सभी का जन्म सविधान के आधार पर हुआ है। इसके अलावा 1963 ई और 1967 ई मे, दो बार, मनोनीत प्रतिनिधियो ने हिंदी के पक्ष मे वोट दिया है किसी भी समय पालियामेंट ने हिंदी के राजभाषा घोषित किए जाने के औचित्य को चुनौती नही दी, यद्यपि अहिंदी भाषी लोगो को हिंदी सीखने के हेतु अधिक समय देने के लिए अग्रेजी को भी राजभाषा बनाए रखने की अभियाचना जरूर की गई।

यदाकदा यह तर्क भी प्रस्तुत किया जाता है कि अहिंदी भाषी लोगो के लिए अग्रेजी की तुलना मे हिंदी अधिक विदेशी है। इस प्रकार का कथन केवल हिंदी के विरुद्ध द्वेष का ही परिचायक नही है, अपितु यह देश विरोधी भी है। तथ्यो के आधार पर इसका खडन भी किया जा सकता है। अग्रेजी शिक्षित अल्प सख्यक लोगो को केवल अपने हितो एव स्वार्थों की दृष्टि से ही स्थिति को देखने का कोई अधिकार नही है। उन्हे यह नही भूलना चाहिए कि लोकतन्त्र का प्रथम दायित्व आम जनता के प्रति होता है। स्वर, वाक्य रचना, लिपि और शब्द भडार की दृष्टि से हिंदी और भारतीय भाषाओ के बीच बहुत समानता है। इसके प्रतिकूल अग्रेजी और भारतीय भाषाओ के बीच समानता की कोई कडी नही है। किसी भी भारतीय के लिए अग्रेजी की अपेक्षा हिंदी सीखना कही अधिक आसान है, क्योकि दोनो भाषाओ के बीच हिंदी सरलतर और ज्यादा वैज्ञानिक है। देश मे सामाजिक वातावरण भी हिंदी सीखने के लिए अधिक अनुकूल है। हिंदी एव अन्य भारतीय भाषाओ के साहित्यो मे विषय वस्तु विशेषकर सास्कृतिक विषयो की समानता के कारण अग्रेजी की तुलना मे हिंदी सीखने और इसमे उच्चस्तरीय ज्ञान प्राप्त करने मे कही अधिक सुविधा होती है। अग्रेजी हिंदुस्तान के कुछ लोगो की मातृभाषा जरूर है, फिर भी यह एक विदेशी भाषा है, इसलिए नहीं की यह सख्या मे बहुत कम लोगो की भाषा है, परतु इसलिए कि विषय वस्तु, शैली, हिज्जो आदि के लिए अग्रेजी सदैव विदेशी सूत्रो पर निर्भर रहती है। यह बात हिंदी पर लागू नही होती, क्योकि अन्य भारतीय भाषाओं की भाति हिंदी अपनी समृद्धि के लिए मूलत भारतीय सूत्रो पर आश्रित रहती है।

हिंदी के विरोध का एक कारण इसके समर्थको मे कथित कट्टरता, उग्र राष्ट्रीयता और साम्राज्यवादी प्रवृत्ति बताया जाता है। यद्यपि लोगो के व्यवहार के प्रति विरोध को उनके द्वारा बोली जाने वाली भाषा के प्रति विरोध मे बदल देना एक भूल है, फिर भी यह उपयुक्त होगा कि इस बात का नीरक्षीर निर्णय

किया जाए कि उपर्युक्त लक्षण हिंदी के समर्थकों पर कहां तक लागू होते हैं।

'चेंबर ट्वेन-टि-इथ सेनचुरी डिक्शनरी' के अनुसार कट्टरपंथी उस व्यक्ति को कहते हैं जिसमें धर्म अथवा अन्य किसी प्रकार की आस्था के प्रति अतिशय उत्साह हो। उग्र राष्ट्रीयता अपने देश मे असयत गौरव की और दूसरे राष्ट्रों के प्रति उतनी ही समान घृणा की प्रवृत्ति को कहते है। और साम्राज्यवाद सम्राट् की सी सत्ता हथियाने और इसे विस्तीर्ण करने की लालसा को कहते हैं। निस्सदेह ये सब अवाछनीय प्रवृत्तियां है, परतु 'अतिशय', 'असंयत' आदि का क्या मापदंड है? यह विचार करने का प्रश्न है कि साम्राज्यवादी कौन है? वे व्यक्ति जो भारतीय भाषा को देश की राजभाषा बनाने की मांग कर रहे है, अथवा वे जो विदेशी अथवा भारत का उपनिवेश बनाने वाले अंग्रेजो की भाषा के लिए मांग कर रहे है? इस विवाद का फ़ैसला करना कोई आसान कार्य नही है, विशेषकर जब दोनों पक्ष के लोगो ने इस समस्या को लेकर अनेक अवांछित घोषणाएं की हैं। जब रामनाथ गोयनका ने संविधान सभा की कार्य-वाही के हिंदुस्तानी में चलाने के गोविंददास के प्रस्ताव का विरोध किया, तो गोविंददास ने इस प्रकार की प्रतिक्रिया प्रकट की :

> मद्रास से आने वाले बंधुओं को मैं यह बताना चाहूंगा कि यदि महात्मा गाधी के 25 वर्षों के परिश्रम के बाद भी वे हिंदुस्तानी नही समझ पाए तो यह उन्हीं का दोष है। यह हमारे धैर्य की सीमा से बाहर है कि संविधान सभा में जो देश की एक प्रभुसत्ता संपन्न संस्था है और भारत के संविधान के निर्माण के लिए बैठी है, अंग्रेजी को सर्वोच्च स्थान दिया जाए।[7]

दूसरे पक्ष से एंथनी ने इस पर व्यंग्य करते हुए कहा :

> नई हिंदी, जैसे कि मैं इसे कहता हूं, भाषा का नहीं, एक प्रहसन का रूप धारण कर रही है। रेलवे के बोर्डों (पटलों), सरकारी दफ़्तरों के नामों, लोकसभा के नोटिसों की भाषा पढ़ने पर ऐसा लगता है कि जैसे यह मृत शब्दों की रद्दी की टोकरी से उठाकर उन्हें पुनर्जीवित करने का कोई प्रयास हो अथवा नई हिंदी शब्दावली के अस्वाभाविक सामंजस्य का एक प्रस्तुती-करण हो।[8]

इस प्रकार दोनों पक्षो में से किसी भी ग्रुप को कट्टरता के अभियोग से बरी करना मुश्किल है। न्यायसंगत एवं स्वीकारात्मक फ़ैसले पर पहुंचने के लिए दोनों पक्षों को उदारता से काम लेना होगा। फ़ारसी में एक कहावत है 'आवाज़-

ए-खल्क, नक्कारा-ए-खुदा', अर्थात् जनमत ही ब्रह्म वाक्य होता है। यह स्वीकार कर लिया जाए कि भाषायी कट्टरपथ की शुरुआत हिंदी के समर्थकों से हुई और विपक्षियों के प्रदर्शन इस कट्टरपथ की प्रतिक्रिया में थे, तो भी इसका औचित्य स्वीकार नहीं किया जा सकता। आखिर हिंदी किसी वर्ग विशेष की बपौती नहीं है। यह तो देश की एक भाषा है जिसमें साधारण जनसमूह के साथ संपर्क स्थापित करने में आसानी होगी। अन्य भाषाओं की भांति यह भी राष्ट्र की संपत्ति है, जिसे और समृद्ध बनाना, और गौरव प्रदान करना सभी देशवासियों का कर्त्तव्य है। कुछ व्यक्तियों की गलतियों के कारण वाद विवाद की इतिश्री के लिए यदि ऐसा मान भी लिया जाए तो भी राष्ट्रीय लक्ष्य और निर्णय इस प्रकार नहीं बदलते।

राष्ट्रीय आदर्शों पर आधारित व्यावहारिक समाधान

प्रौढ राष्ट्र अपनी समस्याओं का हल राष्ट्रीय मूल्यों एवं विशाल दृष्टिकोण के आधार पर ढूंढते हैं। भारत के लिए ये मूल्य हैं लोकतंत्र, समाजवाद और धर्म निरपेक्षता। इनके अतिरिक्त ऐतिहासिक परंपराओं ने इस देश के नेताओं पर कुछ विशेष जिम्मेदारियां भी डाली हैं भाषा की जटिल समस्या का समाधान इन्हीं मूल्यों और वस्तुवादी मापदण्डों के आधार पर ही तलाश करना होगा।

पिछले पृष्ठों पर भाषा के लिए कुछ मानदण्डों की विस्तृत चर्चा दर्ज की गई है। संपूर्ण विवाद के उपरांत हम इस परिणाम पर पहुंचे थे कि किसी अन्य भाषा की अपेक्षा हिंदी ही इन मानकों की सर्वाधिक पूर्ति करती है। यह भी बताया जा चुका है कि राष्ट्र के सीमित साधनों को देखते हुए बहुत समय तक दो राजभाषाओं को बनाए रखना भी उचित नहीं है।

कभी कभी कनाडा, बेलजियम और स्विटज़रलैंड के उदाहरण देकर भारत में अनिश्चित काल तक हिंदी और अंग्रेजी को राजभाषा बनाए रखने की दुहाई दी जाती है। जैसे कि पहले बताया जा चुका है, सर्वप्रथम इन देशों का राजनीतिक इतिहास भारत के इतिहास से अलग है। दूसरे, जहां इन देशों ने राजभाषाओं का चुनाव केवल अपनी देशी भाषाओं के बीच में से किया है। अंग्रेजी हिंदुस्तान के लिए एक विदेशी भाषा है, और भारत के बहुत कम लोग इसे बोल पाते हैं। वस्तुतः संसार में कोई भी बड़ा राष्ट्र अपना कामकाज चलाने के लिए विदेशी भाषा पर निर्भर नहीं होता।

भारत का भविष्य निस्संदेह उज्ज्वल है, इसीलिए वर्तमान पीढ़ी को ऐसी गलत परंपराओं की नींव नहीं रखनी चाहिए जिससे आने वाली संतानों को लज्जित होना पड़े। इनमें से कुछ ऐसी परिस्थितियों का जिक्र पिछले पृष्ठों में

किया जा चुका है। दूसरे किसी के मन में यह धारणा नहीं बैठनी चाहिए कि भारत की समृद्ध भाषाओं में से कोई भी संघ की भाषा बनने के योग्य नहीं है।

राजभाषा के पद पर अंग्रेजी के स्थान पर हिंदी की स्थापना के लिए हिंदी की योग्यता और इसकी स्वीकारात्मकता बढ़ाने के लिए कई कदम उठाने होंगे। कुछ एक मुख्य दिशाएं, जिनकी ओर पग बढ़ाने की आवश्यकता है, इस प्रकार हैं:

संघ की भाषा को चाहे 'हिंदी' की संज्ञा दें अथवा हिंदुस्तानी की, परंतु शैली में यह भाषा 'हिंदुस्तानी हिंदी' अर्थात् आसान हिंदी होनी चाहिए, न कि बोझिल हिंदी। यह भाषा, अपने मूल स्वभाव को कायम रखते हुए, देश की सभी (अथवा अनेक) भाषाओं एवं बोलियों का संमिश्रण होनी चाहिए। कृत्रिम उपायों से विभिन्न भाषाओं के शब्दों को संघ की भाषा में भरने की जरूरत नहीं है, परंतु यदि भाषाविद् इस समस्या को सुलझाने के लिए भाषा आयोग के परामर्शों पर अमल करेंगे तो समस्या अजेय नहीं है। यह दुर्भाग्य का विषय है कि इस संबंध में लगकर काम नहीं किया गया है, और न ही देश के विभिन्न भागों में अमुक भाषा की स्वीकारात्मकता जांचने के लिए कोई परीक्षण किए गए हैं। विभिन्न भाषाओं में से ग्रहण कर राजभाषा में अनेक पर्यायवाची एवं अलग अर्थच्छटा के शब्द समाहित किए जा सकते हैं। इससे विभिन्न भाषा भाषी संघ की भाषा में भागीदार होने का अनुभव करेंगे, और उनके लिए इसे सीखना भी सरल हो जाएगा। देश की भाषा के इस विधि से विकास के लिए संविधान के अनुच्छेद 351 में पहले ही से उल्लेख है। इसके अतिरिक्त, इस प्रकार के कदम संविधान सभा और पार्लियामेंट में सदस्यों द्वारा अभिव्यक्त विचारों के अनुकूल भी होंगे। संस्कृत, पाली, अपभ्रंश के उदाहरणों को सामने रखते हुए हमें यह याद रखना होगा कि जब कोई भाषा अपनी लचक खो बैठती है, या जनता से दूर हट जाती है, तो इसका अवसान हो जाता है, और कोई नई भाषा इसका स्थान ले लेती है।

शिक्षा संबंधी सुविधाओं का भी द्रुत गति से प्रसार होना चाहिए। एक प्रशिक्षित व्यक्ति में संकीर्णता प्रायः कम होती है। किसी भी निहित स्वार्थ वाले व्यक्ति के लिए शिक्षित व्यक्ति की अपेक्षा अशिक्षित व्यक्ति को गुमराह करना आसान होता है, क्योंकि शिक्षित व्यक्ति स्वतंत्र निर्णय लेने में अपेक्षाकृत अधिक समर्थ होता है। इसके अलावा, जिस व्यक्ति ने एक भाषा सीख रखी हो उसके लिए दूसरी भाषा सीखना आसान होता है। निरक्षर व्यक्ति में यह बात नहीं होती, क्योंकि निरक्षर व्यक्ति का ज्ञान की ओर आकर्षण प्रायः कम होता है।

शिक्षा व्यवस्था में मानव परिवार को कुटुंब समझते हुए देशभक्ति की अधिक भावना भरने की योजना होनी चाहिए। शिक्षा द्वारा रूढ़िगत संकीर्णता की भावनाओं को बहिष्कृत करना अनिवार्य है। यह अनुदारता धर्म में जाति

भेद, राष्ट्रीय मामलों में प्रांतीयता एवं साम्प्रदायिकता और शासन में विभिन्न सेवाओं के बीच गुटबंदी का रूप लेकर सामने आती है। ऐसी प्रवृत्तियों की रोक-थाम के लिए कदम उठाने चाहिए। ऐसा करने से केवल भाषा की समस्या ही हल नहीं होगी, परन्तु उन सभी समस्याओं का भी हल निकलेगा जो इस प्रकार की मानसिक रुग्णताओं से जन्मती हैं। सोवियत संघ ने 1917 ई की क्रांति के शीघ्र बाद शिक्षा की एवं उपर्युक्त विशेष जरूरतों को अच्छी तरह समझा। यद्यपि सोवियत संघ में आज 126 जातियां हैं, तथापि 1971 ई में हुई चौबीसवीं कम्युनिस्ट पार्टी कांग्रेस के अनुसार 'आज सोवियत यूनियन में एक नया ऐतिहासिक समाज है, और इसका नाम है सोवियत जनता।' सभी देश इन आदर्शों पर बल देते हैं, लेकिन इसकी उपलब्धि के उनके मार्ग अलग अलग हैं। इसमें भूल करने वाला देश अपनी राष्ट्रीय एकता को खतरे में डाल देता है।

ऐसे उपाय भी जरूरी है जिनसे सुनिश्चित रूप से भाषा की आड़ में किसी वर्ग का सांस्कृतिक अथवा आर्थिक शोषण संभव न हो। देश में सभी संस्कृतियों को विकास की स्वतन्त्रता है। भारत को सचमुच अपनी सांस्कृतिक विविधता पर गौरव है। देश में विभिन्न धार्मिक एवं राष्ट्रीय पर्वों का मनाया जाना इसका प्रमाण है। गणतंत्र दिवस पर समस्त राज्यों की सांस्कृतिक झलकियों का प्रस्तुतीकरण इस कथन का एक और प्रमाण है। इस प्रकार की कार्यविधियों को और आगे बढ़ाने की जरूरत है। सांस्कृतिक दलों के अंतरजातीय एवं अंतरक्षेत्रीय आदान प्रदान से सभी वर्गों में देश की संस्कृतियों के प्रति पारस्परिक सद्भावना बढ़ेगी। इससे आपसी स्नेह में वृद्धि होगी और राष्ट्रीय एवं भावात्मक एकता को भी प्रोत्साहन मिलेगा।

देश के समस्त भागों के लोगों तथा नेताओं को सुरक्षा, राजनीतिक, आर्थिक सामाजिक, सांस्कृतिक, भाषा संबंधी या अन्य राष्ट्रीय कार्यक्रमों की मुख्य धारा में लाने की हर संभव कोशिश की जानी चाहिए। अनेक मिसालें यह सिद्ध करती हैं कि राष्ट्रीय कार्यक्रमों की मुख्य धारा से बाहर होने पर अनेक लोगों के विचारों में तबदीली आ जाती है। उदाहरणार्थ, कांग्रेस से बाहर होने पर मुहम्मद अली जिन्नाह ने पाकिस्तान की मांग रखी, जिसका नतीजा था हिंदुस्तान का दो टुकड़ों में बटवारा। चक्रवर्ती राजगोपालाचारी जब कांग्रेस में थे, या मद्रास में कांग्रेस सरकार के मुख्यमंत्री थे, तो हिंदी के समर्थक थे, और सैल्फ रेस्पेक्ट मूवमेंट के विरोध के बावजूद उन्होंने हिंदी को तमिलनाडु के हाईस्कूलों में एक अनिवार्य विषय रखवाया था। देश के गवर्नर जनरल पद से हटने के कुछ समय बाद वह स्वतंत्र पार्टी में शामिल हो गए, और अंग्रेजी भाषा के जोरदार समर्थक बन गए।

सरकारी नौकरियों के लिए आशंकाओं का निवारण

अहिंदी भाषी लोगों के दिलों में यह शंका है कि जब अंग्रेजी संघ की राजभाषा नहीं रहेगी तो हिंदी भाषी लोगों की तुलना में उन्हें सरकारी एवं स्वायत्त संस्थाओं की नौकरियों में नुकसान रहेगा। यह धारणा ठीक भी हो सकती है, और ग़लत भी। नौकरियों मे सफलता प्राप्ति केवल व्यक्ति की भाषा मे दक्षता के साथ संबंधित न होकर उसकी सामाजिक एव आर्थिक स्थिति, भिन्न कलाओं एवं कार्यों में प्रवीणता और शिक्षा के स्तर आदि के साथ जुडी रहती है। हां, इस बात मे दो राय नही है कि अंग्रेजी के बहिष्करण से विशिष्ट वर्ग और इसमें खास तौर पर अहिंदी भाषी संप्रदाय की उन सुविधाओं का अंत हो जाएगा जो ऐतिहासिक परिस्थितियों के फलस्वरूप उन्हें उपलब्ध हो गई थी और जिनके कारण वे अंग्रेजी सीखने में शेष लोगों से पहले जुट गए।

यह सुनिश्चित करने के लिए कि हिंदी भाषा अहिंदी भाषियों के आर्थिक शोषण का न तो उपकरण बने और न ही इसे ऐसा समझा जाए, ऐसा मार्ग खोजना जरूरी है कि जब तक अहिंदी भाषी हिंदी भाषा मे दक्ष नहीं होते, नौकरियों का पलड़ा हिंदी भाषी लोगों की तरफ भारी न हो जाए। इसका एक उपाय यह है कि भाषा के आधार पर (संप्रदाय के आधार पर नहीं), सरकारी नौकरियों में कोटा निश्चित कर दिया जाए। भाषा आयोग ने सरकारी सेवाओं में 'कोटा प्रणाली' शुरू करने का सख्त विरोध किया था।[9] निस्संदेह, नागरिक संस्थाओं एवं विधान सभाओं मे साम्प्रदायिकता के आधार पर स्थानों का कोटा रखने के कारण देश काफ़ी दुष्परिणाम भुगत चुका है। इसी के कारण सांप्रदायिक एवं वर्गीय झगड़े हुए, जिससे देश की एकता भग हो गई और देश के मानचित्र की रेखाएं फिर से खीचनी पड़ीं। इसमें कोई शक नही है कि भाषायी आधार पर नौकरियों का अभिरक्षण भी यदि अधिक समय तक रखा गया तो उसके भी नकारात्मक परिणाम होंगे और इससे संघ के लिए एक सर्व सामान्य भाषा के निर्माण मे विलंब हो जाएगा। इसलिए हो सकता है कि सुझाव सबको मान्य न हो।

दूसरा उपाय इस प्रकार हो सकता है: कुछ समय के लिए केन्द्रीय सेवाओ में भर्ती प्रांतीय सेवाओ के मार्ग से सीमित रखी जा सकती है। इससे सेवाओं के गुणस्तर मे अवनति नही होगी, क्योंकि प्रांतों में भी भर्ती के समय आजकल के प्रशासन की जरूरतों को ध्यान में रखा जाता है। प्रांतों से केंद्रीय सेवा मे आने वालो के लिए निश्चित अवधि में हिंदी का ज्ञान प्राप्त करना अनिवार्य बनाया जा सकता है।

एक अन्य उपाय यह है कि संघ की सेवाओ में विभिन्न भाषायी वर्गों के लिए समुचित समय तक नौकरियों की मौजूदा स्थिति बनाई रखी जाए। शायद दस

वर्ष तक यह स्थिति बनाए रखना उचित होगा। इस दौरान ऐसे कदम उठाए जा सकते हैं कि इस अवधि की समाप्ति पर पूरी तरह से हिंदी द्वारा काम चलना संभव हो जाए। जो विद्यार्थी इस समय सातवीं कक्षा में हैं, एक दशक में वे ग्रेजुएट बन चुके होंगे, और वही नौकरियों की मार्केट और प्रतियोगिता के मैदान में होंगे। स्कूलों और कालेजों में पढ़ने के कारण इनके हिंदी ज्ञान का स्तर समुचित होगा। इस अवधि के पश्चात् नौकरियों में अधिक समय तक यथास्थिति बनाए रखने की जरूरत नहीं रहेगी।

हिंदी विकास की प्रारंभिक स्थिति से कहीं आगे बढ़ चुकी है, इसलिए दस साल या इससे न्यूनाधिक जो भी अवधि इस काम के लिए एक बार निश्चित की जाए उसका दृढ़ता से पालन हो। अहिंदी भाषी लोगों का इस अवधि के निर्णय करने में काफी हाथ होना चाहिए। परंतु इसमें अनिश्चितता नहीं बनी रहनी चाहिए।[10] संक्रांति की अवधि की समाप्ति पर यथास्थिति हटाई जा सकती है, और संघ लोक सेवा आयोग परीक्षाएं आरंभ कर सकता है। यदि प्रांतीय सेवाओं द्वारा केंद्रीय सेवाओं में भर्ती का तरीका अधिक लाभप्रद और कम खर्चीला सिद्ध होता है तो इसे अपनाया भी जा सकता है, और यह शर्त रखी जा सकती है कि केंद्रीय नौकरियों में भर्ती होने वाले निश्चित काल में, नौकरी की जरूरतों के अनुसार, हिंदी में अनिवार्य तौर पर उचित स्तर की परीक्षा पास करेंगे। इस सिलसिले में विस्तृत रूपरेखा विशेषज्ञ निर्धारित कर सकते हैं।

लिपि का मसला

भाषा के साथ इसकी लिपि का मसला भी अभिन्न रूप से जुड़ा है। पिछले अध्यायों में रोमन और नागरी लिपियों के गुण-दोषों पर कुछ प्रकाश डाला जा चुका है। नागरी लिपि को संसार की अन्य लिपियों की पृष्ठभूमि में देखना उचित होगा। संसार में लिपि के पांच मुख्य परिवार हैं रोमन, ग्रेशो रोमन, चीनी, (मूर्तलिपि), अरबी अथवा फारसी और ब्राह्मी अथवा नागरी लिपि। ये लिपियां अगले पृष्ठ पर दी तालिका के अनुसार संसार के देशों में प्रचलित हैं।

नागरी लिपि के परिवार की सभी भाषाओं, अर्थात् तिब्बती, नेपाली, असमी, बंगाली, बर्मी, डोगरी, हिंदी, गुजराती, मराठी, कन्नड, मलयालम, तमिल, सिंघली, तेलुगु, उड़िया, संस्कृत, पाली और थाईलैंड, लाओस, कंबोडिया, कोरिया और मंगोलिया की विभिन्न लिखित भाषाओं में वर्णों का एक ही क्रम होता है और सभी में मात्राओं का प्रयोग होता है।[11]

ब्राह्मी लिपि का इतिहास (जिससे नागरी लिपि का जन्म हुआ है) तीन चार हजार वर्ष पुराना है। अशोक काल में ब्राह्मी का प्रयोग मिलता है। समय

संसार की लिपियां

क्रम लिपि का नाम	जिन देशों में ये लिपियां प्रचलित है
1. रोमन	दोनों अमरीका, आस्ट्रेलिया और पश्चिमी यूरोप
2. ग्रेशोरोमन	पूर्वी यूरोप और सोवियत संघ का एशियाई भाग
3. चीनी (मूर्त्तलिपि)	पूर्वी एशिया
4. अरबी या फ़ारसी	पश्चिमी एशिया
5. ब्राह्मी अथवा नागरी	भारत और दक्षिण पूर्वी एशिया

के साथ ब्राह्मी में कुछ परिवर्तन आए। ईसा पूर्व दूसरी शताब्दी में 'शुग लिपि', ईसा पूर्व पहली शताब्दी मे 'कुशान लिपि' और ईसा उपरांत पांचवी शताब्दी में 'गुप्त लिपि' का उद्‌भव ब्राह्मी लिपि से हुआ। ज्यो ज्यों गुप्त राज्य का देश (और इसमें दक्षिण भी शामिल था) में विस्तार हुआ, सस्कृत के साथ, जिसे गुप्त राज्य का समर्थन प्राप्त था, ब्राह्मी लिपि का प्रभाव भी व्यापक हो गया। इस समय तक ब्राह्मी की निम्नलिखित शाखाएं बन चुकी थीं :
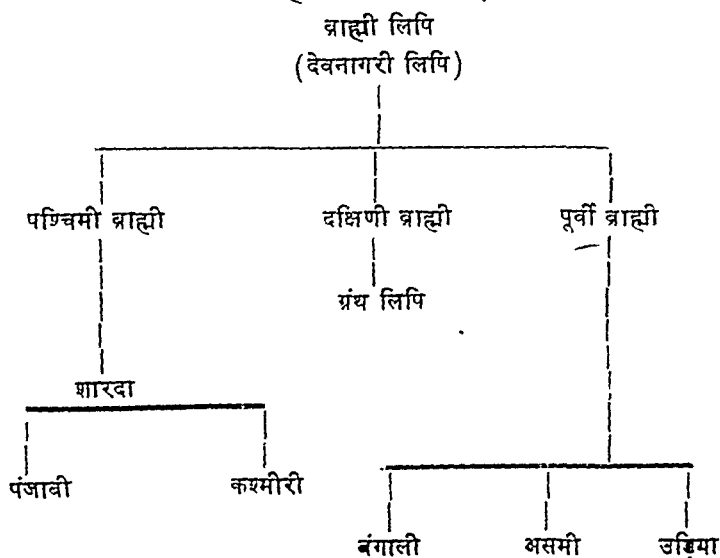
कुछ लोग देवनागरी को केवल हिंदी भाषा की लिपि समझकर इसका विरोध करते हैं। उन्हें इस गलतफहमी को दूर करने की आवश्यकता है। देवनागरी लिपि का जन्म विभिन्न भारतीय भाषाओं के संश्लेषण से हुआ था। देवनगर (काशी) में भारतीय भाषाओं के विद्वानों ने मिलकर इस लिपि का निर्माण किया था। ब्राह्मी लिपि से जन्म लेकर, देवनागरी लिपि का संस्कृत, पाली और अर्धमागधी में भी इस्तेमाल हुआ है। 700 ई. में, पल्लव राजाओं ने तमिल और ग्रंथ लिपि के अतिरिक्त इसका प्रयोग किया। पल्लवों से पहले चोलों ने देवनागरी लिपि को अपने सिक्कों पर इस्तेमाल किया। 800 ई. में चालुक्यों ने कन्नड़ के अलावा इसका भी प्रयोग किया। मद्रास के संग्रहालय में एक पुराने स्तंभ पर देवनागरी लिपि लिखी मिलती है।[12]

देवनागरी बहुत वैज्ञानिक और सीखने में एक सरल लिपि ही केवल नहीं है, अपितु वह भारत की पैतृक संपत्ति भी है। देवनागरी और सिंधी भाषा की लिपि में कोई अंतर नहीं है, यद्यपि सिंधी लिखने में उर्दू अथवा फारसी की लिपि का भी इस्तेमाल होता रहा है। बंगाली, गुजराती, मराठी की लिपियां संस्कृत एवं हिंदी की लिपियों से मिलती जुलती हैं। उड़िया भाषा की लिपि उत्तर और दक्षिण का सामंजस्य है। 1961 ई. में मुख्य मंत्रियों ने एक कांफ्रेंस में देवनागरी लिपि को अखिल भारतीय लिपि के रूप में स्वीकार करने की सिफारिश करते हुए कहा था

> समस्त भारतीय भाषाओं के लिए एक सांझी लिपि केवल अभीष्ट ही नहीं है अपितु भारतीय भाषाओं के बीच एक सशक्त सेतु के निर्माण के लिए अनिवार्य भी है। इससे राष्ट्रीय एकता लाने में बहुत सहायता मिल सकती है। आज की परिस्थितियों में यह संपर्क लिपि सिर्फ देवनागरी हो सकती है। यद्यपि निकट भविष्य में एक अखिल भारतीय लिपि का इस्तेमाल शायद मुश्किल से हो, परंतु यह उद्देश्य सामने रहना चाहिए, और इसकी प्राप्ति के लिए कोशिश करनी चाहिए।[13]

जब हम अखिल भारतीय लिपि की बात करते हैं, तो इसका यह प्रयोजन नहीं है कि शेष भारतीय लिपियों को देश से निर्वासित कर दिया जाएगा। इसका तात्पर्य है : एक ऐसी लिपि, जिसमें सभी भारतीय भाषाओं में प्रकाशित उच्च साहित्य उपलब्ध हो। संसार की दूसरी भाषाएं (जिनकी लिपि नहीं है अथवा जिनकी लिपि जटिल है) देवनागरी लिपि, जो सरल तथा वैज्ञानिक है, को अंगीकार कर सकती हैं, परंतु इसकी उम्मीद तो तब की जा सकती है जब देवनागरी पहले अखिल भारतीय लिपि के रूप में स्वीकृत हो जाए, टाइप मशीन

और अन्य आधुनिक यंत्रों के उपयोगी बन जाए, और इसमें पर्याप्त मात्रा में वैज्ञानिक एवं अन्य समृद्ध साहित्य प्रकाशित होने लगे।

द्विभाषा सूत्र

भाषा का प्रश्न शिक्षा संस्थाओं के पाठ्यक्रमों के साथ भी जुड़ा हुआ होता है। इसलिए इस संबंध में भी कुछ संकेत करना उचित होगा। सरकार त्रिभाषा फ़ार्मूले को लागू करने के लिए वचनबद्ध है। इस फार्मूले के अनुसार हर विद्यार्थी को अनिवार्य रूप से तीन भाषाएं पढ़नी होंगी : हिंदी, हिंदी के अतिरिक्त एक क्षेत्रीय भाषा और अंग्रेज़ी। राजनीतिक समझौते की दृष्टि से यह फ़ार्मूला ठीक दिखाई पड़ता है। मातृभाषा अथवा क्षेत्रीय भाषा पढ़ना इसलिए जरूरी है क्योंकि बचपन में छात्र इसी भाषा में किसी बात को सर्वाधिक समझ और अभिव्यक्त कर सकता है। हिंदी, संघ की भाषा के नाते अनिवार्य है। अंग्रेज़ी को हम इसलिए नहीं छोड़ सकते क्योंकि इसमें संसार के ज्ञान का भण्डार है। कुछ हिंदुस्तानी इसकी वकालत करते हुए कहते हैं कि अंग्रेजों से प्राप्त ऐतिहासिक विरासत के कारण से अन्य किसी विदेशी भाषा की अपेक्षा भारत में अंग्रेजी के प्रशिक्षण के लिए अधिक सुविधाएं मौजूद हैं। लेकिन इस बात से इंकार नहीं किया जा सकता कि त्रिभाषा फ़ार्मूले के कारण विद्यार्थियों के दिमाग़ों पर अधिक बोझ पड़ता है। पाठ्यक्रम में भाषा पर अत्यधिक बल देने से ज्ञानविज्ञान के अन्य विषयों, जैसे गणित, भौतिकी आदि जो बड़ी तेजी से विकसित हो रहे हैं, की ओर विद्यार्थी पूरा ध्यान नहीं दे पाएंगे। इसके अलावा, हर एक छात्र को भाषाएं पढ़ने का इतना शौक नहीं होता कि उस पर तीन भाषाएं लाज़िमी लाद दी जाएं। यह भी देखने में आया है कि सरकार ने इस फ़ार्मूले के अनुसार हिंदी को जितना अनिवार्य बनाने की कोशिश की है, इसकी उतनी ही मुख़ालफ़त हुई है। अंतिम बात यह है कि त्रिभाषा फ़ार्मूला शिक्षाशास्त्र के नियमों पर निर्धारित न होकर, अंततोगत्वा, समस्या का एक राजनीतिक समाधान था, जो कामयाब नहीं हो पाया।

इस फ़ार्मूले का विकल्प इस प्रकार हो सकता है : लगभग ग्यारह साल की आयु तक अर्थात् प्राइमरी क्लासों तक, बच्चे को शिक्षा मातृभाषा में दी जाए। अन्य विषयों के अतिरिक्त, प्राइमरी कक्षाओं तक केवल मातृभाषा का प्रशिक्षण ही हो। इसके बाद, मिडिल स्कूल में, एक अन्य भारतीय भाषा को पढ़ाना शुरू किया जाए। दो भाषाओं के पढ़ने से बच्चे पर बोझ नहीं पड़ेगा और दृष्टिकोण के विस्तार के लिए भी दूसरी भाषा का पढ़ना अभीष्ट होगा। यद्यपि शिक्षा का माध्यम यहां भी मातृभाषा अथवा क्षेत्रीय भाषा होगी, दूसरी भाषा अनिवार्य विषय की हैसियत से पढ़ाई जानी चाहिए। दसवीं कक्षा

तक यही सिलसिला चल सकता है। उसके बाद तीसरी भाषा के पढ़ाने की ऐच्छिक आधार पर व्यवस्था की जा सकती है। यह तीसरी भाषा अंग्रेजी अथवा कोई अन्य विदेशी भाषा हो सकती है। यह कोई प्राचीन अथवा आधुनिक भारतीय भाषा भी हो सकती है। यह तीसरी भाषा पढ़ाने की व्यवस्था आठवीं कक्षा के बाद मे भी की जा सकती है। परंतु उस दशा मे विद्यार्थी को पूर्व पठित दो भाषाओ मे एक भाषा छोडनी होगी ताकि उस पर भाषाओ का बोझ अधिक न पडे।

दसवी कक्षा के बाद विद्यार्थी अपनी इच्छानुसार कोई तीसरी भाषा भी पढ सकता है, परतु यह भाषा किसी अन्य विषय के बदले मे ही पढी जाएगी। इस प्रकार दो अथवा तीन भाषाए पढने वाले विद्यार्थियो के लिए पढाई के विषयो की सख्या बराबर रहेगी। इस प्रकार इस नियम के अनुसार, तीन की बजाए विद्यार्थी के लिए दो भाषाए पढना ही अनिवार्य होगा। इसलिए इसे द्विभाषा फार्मूला कहा जा सकता है। त्रिभाषा फार्मूले मे हिंदी और अंग्रेजी का पढना अनिवार्य है, जब कि इस फार्मूले के अनुसार मातृभाषा के अतिरिक्त कोई भी भारतीय भाषा पढी जा सकती है और हिंदी अथवा अंग्रेजी का पढना जरूरी नही होगा। इस स्कीम मे वह प्रतिक्रिया भी नहीं होगी जो अनिवार्यता के फलस्वरूप सामने आ सकती है।

हिंदुस्तान मे राज्यो के बीच लोगो का आवागमन कम है। इसे ध्यान मे रखते हुए भी द्विभाषा सूत्र देश के लिए अधिक उपयुक्त होगा। जिन लोगो को प्राय एक स्थान पर ही रहना है, उनके लिए तीसरी भाषा अनिवार्य बनाना ठीक नही होगा। महाराष्ट्र मे एक सर्वेक्षण से पता चला कि 1961-63 ई मे ग्रेजुएट होने वाले छात्रों मे से 90 4 प्रतिशत उसी राज्य मे ही बस गए और 62 3 प्रतिशत काम के लिए निकटवर्ती गुजरात एव मैसूर राज्यो मे जाकर बसे। गुजरात मे एक और सर्वेक्षण मे पता चला कि 1961 ई मे ग्रेजुएट होने वाले विद्यार्थियो मे से 85 2 प्रतिशत और 1963 ई के ग्रुप मे से 87 1 प्रतिशत का आवास राज्य मे ही रहा।[14] जनसख्या के आकडो से भी पता चलता है कि अधिकाश भाषा भाषियो मे अपने ही राज्य मे केंद्रित रहने की प्रवृत्ति है, जैसे असमी भाषी आसाम राज्य मे, तमिल भाषी तमिलनाडु मे इत्यादि।[15] जो बात ग्रेजुएटो के विषय मे सत्य है, वह मैट्रिकुलेट और इण्टरमीडिएट के सबध मे तो और अधिक सत्य होगी। इसलिए, यदि एक व्यक्ति को अपने ही राज्य मे रहना है, तो उसे किसी विशेष भारतीय भाषा अथवा विदेशी भाषा को अनिवार्य रूप मे पढाना निरर्थक है। यदि हिंदी पढने से किसी व्यक्ति के लिए आर्थिक लाभ की सभावनाए बढ जाए, अथवा उस भाषा मे उसे समृद्ध साहित्य की उपलब्धि हो सके तो वह हिंदी पढने के लिए स्वमेव उत्सुक होगा। ज्यो-ज्यो औद्योगीकरण

और नगरीकरण के चरण आगे बढ़ेंगे, संपर्क भाषा का विकास बढ़ेगा। यदि किसी विद्यार्थी को हिंदी की अपेक्षा अपने निकटवर्ती राज्य की भाषा की अधिक जरूरत है तो यह अधिक तर्कसंगत और मुनासिब है कि हिंदी की तुलना मे पहले वह उस राज्य की भाषा का अध्ययन करे।

दक्षिण के लोगों की अकसर यह शिकायत रही है कि उत्तर के लोग उनसे हिंदी पढ़ने की आकांक्षा तो करते हैं, परंतु द्रविड़ भाषाओं के सीखने मे वे निष्क्रिय रहते हैं। यह स्थिति भी अनिवार्यता लागू किए बिना सुधारी जा सकती है। दूसरी भाषा की पढ़ाई दो स्तरों की हो सकती है · सामान्य एव उच्च स्तर की। यदि कोई छात्र अपने संलग्न प्रांत की भाषा को दूसरी भाषा के रूप मे लेता है तो उसका द्वितीय भाषा का कोर्स उच्चस्तरीय होना चाहिए और अन्य स्थिति में सामान्य अथवा उच्चस्तरीय कोर्स पढ़ने की बात छात्र की इच्छा पर छोड़ दी जानी चाहिए।

इस सूत्र पर अमल करने से यह शंका हो सकती है कि इस प्रकार अंग्रेजी जानने वालों की संख्या कम हो जाएगी। यदि सूक्ष्म दृष्टि से देखा जाए, तो ऐसा हो जाने पर भी देश का कोई अहित नहीं होगा। इस समय के आंकड़ों से पता चलता है कि भारत के स्कूलों में पहली कक्षा में प्रवेश पाने वाले प्रत्येक 100 छात्रों मे से 40 पांचवी कक्षा तक पहुंचते हैं, इनमें से 20 आठवी कक्षा तक और अंत मे 15 या 16 दसवीं या ग्यारहवीं कक्षाओं तक। हाईस्कूलों और सीनियर सेकेण्डरी स्कूल परीक्षाओ मे बैठने वाले विद्यार्थियों में से लगभग 50 प्रतिशत फ़ेल होते हैं। इस प्रकार प्रथम कक्षा में दाखिल होने वाले विद्यार्थियों मे से केवल 3 या 4 प्रतिशत कालेज अथवा विश्वविद्यालयों तक पहुंचते हैं। यदि उच्च विज्ञान, तकनीक और राजनयिक कार्यों के लिए अंग्रेजी इन्हीं तीन या चार प्रतिशत लोगों में से ही कुछ लोगों को इस्तेमाल करनी है, तो सभी छात्रों पर विदेशी भाषा का अतिरिक्त बोझ लादने से क्या लाभ ? इस प्रकार, द्विभाषा सूत्र से भी भली भांति काम चल सकता है। इसके अलावा छात्र अपनी जरूरत और रुचि के अनुसार एक या अधिक भाषाएं पढ सकता है। भ्रमणशील आबादी के लिए केंद्रीय और कुछ राज्यीय स्कूल और विश्वविद्यालय क्षेत्रीय भाषाओं के अतिरिक्त हिंदी पढ़ाने की व्यवस्था कर सकते है जिस प्रकार कि रूस में है, और जिसकी चर्चा पूर्व पृष्ठों मे हो चुकी है।

इस व्यवस्था के अनुमार व्यवसाय में प्रवेश करने से पूर्व हर व्यक्ति दो भारतीय भाषाओं का ज्ञान प्राप्त कर चुका होगा। यदि किसी अहिंदी भाषी क्षेत्र का कोई व्यक्ति केन्द्र में नौकरी लेना चाहता है अथवा किसी हिंदी भाषी प्रदेश में अपना जीवन-यापन करना चाहता है तो छठी क्लास से आठवी अथवा दसवीं कक्षा तक उसे हिंदी का पर्याप्त ज्ञान हो जाना चाहिए। शैक्षिक, राज-

नौनिक तथा अन्य प्रयोजनो के लिए अग्रेजी तथा दूसरी विदेशी भाषाओ के शिक्षण का आवश्यकतानुसार प्रबध किया जा सकता है। भारत के पास सपत्ति के रूप मे विशाल जनसमुदाय मौजूद है, और यदि ठीक योजना से काम लिया जाए तो देश मे ससार की सभी भाषाओ क विशेषज्ञ तैयार हो सकते हैं।

एक आपत्ति यह उठायी जा सकती है कि विदेशी भाषा की पढाई देर से प्रारभ करने पर इस क्षेत्र मे विद्यार्थियो के ज्ञान मे कमी आ सकती है। यह निणय कि किस आयु मे छात्रो को विभिन्न भाषाओ का अध्ययन शुरू करना चाहिए, शिक्षा शास्त्रियो, मनोवैज्ञानिको और शरीर विज्ञान शास्त्रियो पर छोडना होगा, परतु यह महत्त्वपूर्ण तथ्य विस्मृत नही करना चाहिए कि देशी भाषा के कुछ दक्षता प्राप्त करने के बाद विदेशी भाषा की ज्ञान प्राप्ति मे सुविधा हो जाती है। यदि अपनी भाषा मे समुचित ज्ञान के बिना विदेशी भाषा पढने की कोशिश की जाए तो स्थिति ऐसी नही होती। जो भारतीय विद्यार्थी विज्ञान एव तकनीकी क्षेत्रो मे खोज के लिए विदेश मे गए हैं, वे क, ख, ग से प्रारभ करके दोएक सालो म ही विदेशी भाषा सीख कर उसी भाषा के माध्यम से काफी लाभप्रद काम करने म सफल होते रहे हैं। इसलिए जिसे भी विदेशी भाषा अपने पेशे के लिए पढनी हो वह हाई स्कूल के बाद भी इसका अध्ययन शुरू करके ग्रेजुएट होने तक इसमे काफी प्रवीण हो सकता है।

यदि शिक्षा सस्थाओ मे लिगुआफोन और दूसरी दृश्य श्रव्य सुविधाओ का प्रबध हो सके, तो भाषा सीखने का काम और भी आसान हो सकता है। त्रिभाषा सूत्र के स्थान पर द्विभाषा फार्मूला लागू करने से धन की भी काफी बचत हो सकती है और यह बचत इस प्रकार के दृश्य श्रव्य साधनो के खरीदने मे लगाई जा सकती है। सरकार त्रिभाषा फार्मूला कार्यान्वित करने के लिए वचनबद्ध है। इस आश्वासन का निवारण इस प्रकार हो सकता है कि शिक्षा सस्थाओ म तीन भाषाओ के लिए प्रबध तो रहे परतु विद्यार्थी पर मौजूदा पाठ्यक्रम का भार देखते हुए उसे अनिवायत दो से अधिक भाषाए न पढनी पडें।

नि स्वार्थपरायणता एव साहस की आवश्यकता

कुछ लोगो का कहना है कि देश के नेताओ मे सकल्प का अभाव, उनका निहित स्वार्थ और इस समस्या को राजनीतिक रूप दिया जाना ही भाषा समस्या के मुख्य कारण हैं। देश के विभिन्न भागों मे सभी प्रकार के विशेषज्ञो के परामश से सभी बातो को सामने रखकर किसी योजना को एक बार निर्धारित कर लेना चाहिए, और फिर ईमानदारी और दृढता के साथ इसे कार्यान्वित करना चाहिए। भाषाशास्त्री, भाषा वैज्ञानिक अथवा समाजशास्त्र और मनोविज्ञान के विशेषज्ञ

अपने नाम को सार्थक तभी कर सकते हैं जब वे इस समस्या का स्वीकारात्मक समाधान निकालने में अपनी योग्यता का प्रमाण दे सकें। इसके साथ यह बात भी उतनी सही है कि यदि कोई सरकार दस वर्ष की अवधि तक इस प्रकार के राष्ट्रीय महत्त्व के प्रश्न को हल नहीं कर सकती, तो इसे सत्तारूढ रहने का कोई अधिकार नही है। भाषा संबंधी योजनाओं मे समय समय पर आवश्यकतानुसार शायद संशोधन करने पड़े, परंतु इसमें कोई हर्ज नही है। निस्संदेह काम बहुत बड़ा है, और हो सकता है कि अभी तक इसके बहुविध आयाम सामने न आ पाए हों, परंतु किसी समस्या के समाधान को अनिश्चित काल तक स्थगित नहीं किया जा सकता। टैगोर का कहना है :

> संसार में हर राष्ट्र को अपनी समस्याएं स्वयं हल करनी होती है, अन्यथा अपमान और पराजय का सामना करना पड़ता है। सभी उच्च संस्कृतियों के प्रासाद कठिनाइयों की नीव पर निर्मित होते हैं। जिन लोगों के पास नदियां है उनसे ईर्ष्या भले ही की जा सकती है, परंतु जिसके पास नदियां नहीं है, उन्हें कुएं खोदकर धरती की गहराइयों में से पानी निकालना ही होगा। ऐसा सोचना गलत है कि पानी उपलब्ध न होने पर इसके स्थान पर मिट्टी से काम चला लिया जाएगा क्योंकि यह अधिक सुलभ है। हमें साहस के साथ देश मे भाषाओं की विविधता के कष्टकर तथ्य को स्वीकार करना चाहिए, परंतु इसके साथ यह भी समझना है कि बाह्य मिट्टी की तरह आयात की हुई भाषा कांच के घर के लिए भले ही उपयुक्त हो, परंतु किसी ठोस एवं जीवनदायी सभ्यता का आधार नही हो सकती।[16]

इस प्रकार, ऐसे शासन को, जो भाषा समस्या का समाधान तलाश नही कर सकता, उसे अपनी हार माननी होगी। इस संदर्भ में सरदार पटेल के ये शब्द स्मरणीय हैं :

> राजकाज विदेशी भाषा मे चलता हो, हमारे विचारों और शिक्षा का माध्यम विदेशी भाषा हो, ऐसी स्थति स्वराज्य में नहीं हो सकती।[17]

उनका यह कथन सत्य था कि ऐसी स्थिति देश की प्रभुसत्ता के सर्वथा प्रतिकूल है। संसार के सभी विकसित राष्ट्र इस तथ्य को पूरी तरह समझते है। केवल हम ही राजनीति के प्रदर्शनों के शोर में इस सत्य कथन को नही सुन पाए हैं, और निहित स्वार्थों के कारण हमारी दृष्टि धुंधली पड़ गई है। यदि हम भावी पीढ़ियों का हित चाहते है तो यह अनिवार्य है कि हम विकृत प्रवृत्तियों को तिलांजलि देकर स्वस्थ मार्ग पर चलें। समस्याओं का हल निष्क्रियता अथवा बहानेबाज़ी से नही, अपितु सतत परिश्रम और राष्ट्रीय आदर्शो पर अडिग रहने से

निकलना है। बार बार कठिनाइयों की सूची गिनाते रहना अकर्मण्यता का लक्षण है। कर्मठ व्यक्ति कठिनाइयों से एक एक कर जूझता है और उन पर विजय प्राप्त करता है।

समापन

संक्षेप में हम कह सकते हैं कि सभ की भाषा समस्या बहुत पुरानी है। हमारी क्षेत्रीय भाषाओं की समृद्धि, संस्कृतियों की विविधता, समस्या के साथ गलत तरीके से खिलवाड़ करने के कारण अधिक उलझ गई है। परंतु समस्या असाध्य नहीं है। स्विट्ज़रलैंड, बेल्जियम, इण्डोनेशिया, सोवियत यूनियन जैसे बहुभाषी देशों के उदाहरण, उनकी आधारिक संरचना हमसे अलग होने के बावजूद प्रमाणित करते हैं कि समस्या का हल संभव है। इसका हल खोजने के लिए उदार दृष्टिकोण को अपनाना होगा और राष्ट्रीय मूल्यों और आदर्शों को सामने रखना होगा। वास्तविक समकालीन स्थितियों, आगामी पीढ़ियों के हितों और अहिंदी भाषी लोगों की मुश्किलों को भी अच्छी तरह परखना होगा। अहिंदी भाषी लोगों को यह विश्वास दिलाने की आवश्यकता है कि हिंदी को राजभाषा बनाने का आशय यह नहीं है कि उन्हें किसी प्रकार की आर्थिक एवं सांस्कृतिक असुविधा की लपेट में लाया जाए।

अहिंदी भाषा भाषी लोगों को भी चाहिए कि अपनी ओर से वे भी इस समस्या के समाधान में पूरा सहयोग दें। संसार प्रायः सर्वत्र अल्पसंख्यक लोगों के मन में बहुमत द्वारा शोषण का भय बना रहता है, इसका निवारण करना भी जरूरी है। इस भावात्मक प्रश्न के साथ पुरानी दुखद घटनाओं को, जिसने सभी वर्गों को बदनाम किया है, भुलाने और माफ़ करने की जरूरत है। देश के सभी भागों में पारस्परिक सहयोग, सद्भावना और निरंतर परिश्रम का एक नया अध्याय लिखने की जरूरत है। वर्तमान राजनीतिक नेताओं, शिक्षाशास्त्रियों, भाषाशास्त्रियों और भाषावैज्ञानिकों के लिए यह बड़े अपयश की बात होगी यदि वे पराजित होकर समस्या को बिना सुलझाए, उसे भावी पीढ़ियों के कंधों पर डाल दें।

पिछले 150 सालों से खड़ी बोली केवल धर्म, कला आदि जैसी अभिव्यंजक संस्कृति के लिए इस्तेमाल होती रही है। परंतु गत कुछ दशकों में इसका काफी आधुनीकरण हुआ है और अब यह समकालीन सामाजिक आर्थिक राजनयिक संस्कृति की अभिव्यक्ति के लिए उपयुक्त बन चुकी है। किसी भी भाषा का संवर्धन एवं परिष्करण उसके प्रयोग से होता है। केवल निरंतर प्रयोग द्वारा ही लोग किसी भाषा की पारिभाषिक शब्दावली के इस्तेमाल के आदी बनते हैं। इसलिए जितनी जल्दी हम अंग्रेज़ी के स्थान पर हिंदी लाने का प्रयास प्रारंभ करेंगे उतनी

ही जल्दी हम मंजिल पर पहुंचने की उम्मीद कर सकते है।

जो बात हिंदी के बारे मे संघ की भाषा के नाते सत्य है, वही क्षेत्रीय भाषाओ के संबंध मे प्रातो की राजभाषा के नाते सत्य है। हिंदुस्तान के विस्तृत जनसमूह को देश की राजनीतिक एवं प्रशासनिक प्रक्रिया मे भागीदार बनाने के लिए यह जरूरी है कि विभिन्न राज्य उन भाषाओ का प्रयोग करे, जिन्हे लोग बोलते और समझते हैं। राज्य सरकारों को अपने प्रशासनिक तथा विधि और न्याय सबधी कामो में आठवी अनुसूची की भाषाओ मे काम करने के लिए योजनाए तैयार करनी चाहिए। आठवी अनुसूची की सभी भाषाए प्राचीन, समृद्ध एव सशक्त है और राष्ट्र के विभिन्न व्यापारो मे इस्तेमाल की जा सकती हैं। केंद्र मे अग्रेजी के स्थान पर हिंदी और राज्यो मे क्षेत्रीय भाषाए लाने का क्रम एक साथ प्रारभ होना चाहिए। दूसरा काम भी पहले काम की तरह महत्त्वपूर्ण है, इसलिए इसे पहले भी शुरू किया जा सकता है।

हिंदी और क्षेत्रीय भाषाओ का विरोध प्रायः वही लोग करते है, जिन्हे देश के बाकी लोगों की अपेक्षा अग्रेजी सीखने का अवसर पहले मिल गया, और इसी कारण सरकारी नौकरियो में उन्हे तथा उनकी सतानों को फायदा हो गया। इस प्रकार के लोग शायद ही अंग्रेजी के स्थान पर हिंदी या अन्य भाषाओं की स्थापना के तर्क की पुष्टि करे। अगर ये तर्क सभी लोगो तक पहुचाने के लिए कोशिश की जाए तो इसमें कोई सदेह नही है कि जनता हिंदी और क्षेत्रीय भाषाओं के विकास मे पूरा सहयोग देगी तथा सभी राज्यो मे क्षेत्रीय भाषाएं अग्रेजी के स्थान पर आसीन हो जाएगी। यह कहना ठीक नही है कि भाषा का विवाद उत्तर और दक्षिण के बीच का द्वद्व है। वस्तुतः यह विशिष्ट वर्ग और आम जनता के बीच के हितों का झगड़ा है, जिसके साथ समय-समय पर अन्य आयाम भी जुड़ गये है। जब तक अंग्रेजी का देश मे बोलबाला बना रहेगा, दक्षिण और उत्तर के अग्रेजी प्रेमियों का विशिष्ट वर्ग जन सामान्य पर शासन करता रहेगा।

सर्वेक्षणो से पता चलता है कि जिन जिन अतीत घटनाओ से कट्टरता, राष्ट्रीय उग्रता, साम्राज्यवाद और बहकी बहकी भावुकता की गंध आती है, उन सबकी जिम्मेदारी देश के सभी क्षेत्रों के लोगो पर लागू होती है। यह दुर्भाग्य का विषय है कि निहित स्वार्थो और राजनीतिक सत्ता को हथियाने मे व्यस्त नेता राष्ट्र की इस समस्या के सही समाधान का रास्ता नही दिखा सके। समय आ चुका है कि भारत के भाषाशास्त्री और अन्य लोग वास्तविक स्थिति को समझे। इस बात को गहराई से जानने की जरूरत है कि क्षेत्रीय भाषाओ के स्थान पर विदेशी भाषा मे काम करने से भारतवासियों की कितनी क्षति हुई है और विदेशी भाषा मे पारस्परिक आदान प्रदान की कठिनाई से विकास की गति कितनी मंद

रही है। यह संतोषजनक स्थिति नहीं कि अधिक समय तक देश का कामकाज अंग्रेजी द्वारा चलता रहे और शेष क्षेत्रीय भाषाएं अनुवाद मात्र के लिए इस्तेमाल होती रहें। अनुवाद की भाषा हमेशा कृत्रिम रह जाती है। इसलिए प्रत्येक दृष्टिकोण से देश के लिए यही हितकर होगा कि विधानमण्डलों, अदालतों, दफ्तरों जनसंपर्क साधनों और देश की सभी संस्थाओं का कार्य हिंदी तथा अन्य क्षेत्रीय भाषाओं के माध्यम से ही चलाया जाए।

संदर्भ और टिप्पणियां

1 (क) आज 18.4 करोड़ सोवियत लोगों, अर्थात् देश की तीन चौथाई जनता को रूसी भाषा पर अच्छा अधिकार प्राप्त है (सोवियत दूतावास, सूचना विभाग, नई दिल्ली द्वारा प्रकाशित 'सोवियत लैण्ड समाचार' के दिसंबर, 1978 अंक के पृष्ठ 39 पर देखिए, यूरि शेवेलिन का लेख 'क्या कोई सोवियत जाति है?')

(ख) रूसी गणराज्य को छोड़ सोवियत संघ के गणराज्यों में दो प्रकार के स्कूल हैं एक तो वे स्कूल हैं जहाँ शिक्षा का माध्यम रूसी है, और दूसरे वे जहाँ शिक्षा संबंधित गणराज्य की भाषा के माध्यम से दी जाती है दूसरे प्रकार के स्कूलों में गणराज्य की भाषा की पढ़ाई प्रथम श्रेणी के आरंभ में शुरू कर दी जाती है, और रूसी भाषा की पढ़ाई छः मास बाद जिन स्कूलों में रूसी भाषा के माध्यम से पढ़ाई होती है वहाँ रूसी का अध्ययन पहली क्लास से शुरू कर दिया जाता है और गणराज्य की भाषाएं पाँचवीं कक्षा से शुरू की जाती हैं इस गणराज्य में विद्यार्थियों के लिए अन्य गणराज्यों की भाषाओं का अध्ययन अनिवार्य नहीं है, इस प्रकार स्पष्ट है कि संघ की भाषा को विशेष सुविधाएं प्राप्त हैं

2 इण्डोनेशिया और मलेशिया की वर्तमान भाषाओं की नींव भाषा मलायू है और इसकी शाखाओं को क्रमशः भाषा इण्डोनेशिया और भाषा मलेशिया कहते हैं

3 मजूमदार, ए. के., प्राबलम्स इन हिंदी : ए स्टडी, बंबई, भारतीय विद्या भवन, 1965, पृष्ठ 8-10

4 गिल, एच. एस., लैंग्विज एण्ड सोसाइटी इन इंडिया, शिमला, इंडियन इंस्टीट्यूट ऑफ़ एडवांस्ड स्टडीज़, पृष्ठ 398

5 इंडिया, राजभाषा संसद कमेटी : राजभाषा कमेटी की रिपोर्ट में फ्रैंक एंथनी की असहमति का नोट, नई दिल्ली, गृह मंत्रालय, 1959 पृष्ठ 87-88

6 देखिए परिशिष्ट XX

7 शिवा राव, बी., फ्रेमिंग इण्डियाज़ कांस्टिट्यूशन : ए स्टडी, नई दिल्ली, इंडियन इंस्टीट्यूट ऑफ़ पब्लिक एडमिनिस्ट्रेशन, 1968, पृष्ठ 783-783

8 इंडिया, राजभाषा संसद कमेटी : राजभाषा कमेटी की रिपोर्ट में फ्रैंक एंथनी की असहमति का नोट, नई दिल्ली, गृह मंत्रालय, 1959, पृष्ठ 93

9. भारत, राजभाषा आयोग की रिपोर्ट, 1955-56, नई दिल्ली, गृह मंत्रालय, 1957, पृष्ठ 418.

10 राजभाषा (संशोधन) बिल, 1976, अध्याय तीन: आवश्यक विधि-नियमों का निर्माण भी जरूरी होगा.

11. देवेन्द्र कुमार, देवनागरी लिपि . ए सेमिनार, नई दिल्ली, गांधी स्मारक निधि, पृष्ठ 119-120.

12 शेर सिंह; देवनागरी लिपि : ए सेमिनार, नई दिल्ली, गांधी स्मारक निधि, पृष्ठ 45 46.

13. वही, पृष्ठ 104.

14. (i) महाराष्ट्र सरकार, वित्त विभाग, मैन पावर पक्ष, पैटर्न ऑफ यूटिलाइजेशन ऑफ एड्यूकेटिड परसन्स, अहमदाबाद, लेखक, 1966, पृष्ठ 28-29.
(ii) गुजरात, अर्थशास्त्र और सांख्यिकी का सरकारी ब्यौरा, स्टडइ ऑफ यूटलाइजेशन ऑफ एड्यूकेटिड परसन्स, अहमदाबाद, लेखक, 1977, पृष्ठ 52.

15 भारत, जनसंख्या कमीशन के रजिस्ट्रार जनरल द्वारा प्रकाशित : जनसंख्या आंकड़ों की पाकेट बुक, जनसंख्या शताब्दी, 1972, दिल्ली, लेखक, 1972

16 भारत, लोक सभा, बहस की माला, ग्रंथ II, नं. 12, दिसबर 13, 1967, नई दिल्ली, लोक सभा सचिवालय, 1967, पृष्ठ 6657.

17 भारत, लोक सभा, बहस, दिसंबर-सितंबर 3, 1959, दई दिल्ली, लोकसभा सचिवालय, 1959, पृष्ठ 6190.

परिशिष्ट

इस पुस्तक में दिए गए परिशिष्ट तीन प्रकार के है : संकलित, रूपांतरित एवं अंगीकारी।

प्रथम वर्ग के परिशिष्टों में सामग्री का विभिन्न सूत्रों से संचयन तथा संकलन लेखक द्वारा किया गया है।

दूसरे वर्ग के परिशिष्टों में कुछ सामग्री संकलित रूप मे उपलब्ध थी, परन्तु इस पुस्तक में प्रयोग के लिए कुछ एक परिकलन करना पड़ा।

तीसरी प्रकार के परिशिष्ट वे है जिन्हें किसी स्रोत से लेकर इस पुस्तक मे ज्यों का त्यों उद्धृत कर दिया गया है।

समस्त सामग्री। परिशिष्टों के स्रोतों को यथास्थान अंकित किया गया है।

परिशिष्ट I

विवरण I

तुलनात्मक अध्ययन

विश्व के विभिन्न देशो की जनसख्या बनाम भारतीय भाषाएँ बोलने वाले

क्रम	भाषा	बोलने वालो की सख्या	महाद्वीप एव देश			
			अफ्रीका	एशिया एव आस्ट्रेलिया	यूरोप	अमरीका
(1)	(2)	(3)	(4)	(5)	(6)	(7)
1	असमिया	89 6	घाना (अग्रेजी) 88 6	न्यूजीलैंड (अग्रेजी) 28.6	यूनान (आधुनिक यूनानी) 87 7	क्यूबा (स्पेनिश) 86 0
2	उड़िया	198 6	चाड (छाद) (फ्रांसीसी) 37 2	आस्ट्रेलिया (अग्रेजी) 127 6	चेकोस्लोवाकिया (चेक तथा स्लाव) 144 1	डोमीनिकन रिपब्लिक (स्पेनिश) 41 8
			केमरुन सयुक्त गणराज्य (फ्रांसीसी तथा अग्रेजी) 60 6**		डेनमार्क (डेनिश) 49 6	
			ऊपरी वोल्टा (फ्रांसीसी) 53 9			बोलीविया (स्पेनिश) 50 6
						जमैका (अग्रेजी) 19 0
			जांबिया (अग्रेजी) 43 0			निकारागुआ (स्पेनिश) 19 1

*इस परिशिष्ट मे सभी सख्याएं लाखो मे हैं,

**1972 की गणना के अनुसार,

(1)	(2)	(3)	(4)	(5)	(6)	(7)
			195.7	127.6	193.7	पनामा (स्पेनिश) 14.8 ट्रिनिडाड और टोबागो (अंग्रेजी) 10.3 उरुग्वे (स्पेनिश) 29.2 184.8
3	उर्दू 286 1	तजानिया (अंग्रेजी)	136.3	वर्मा (वर्मी) 282.2 282.2	नीदरलैंड्स (डच) 131 9 131.9	हाइटी (फ्रासीसी) 42 4 अर्जेंटाइना (स्पेनिश) 235.7 278 1
		मोरक्को (अरबी)	153 8 290 1			
4.	कन्नड़ 217 1	कीनिया (स्वाहीली और अंग्रेजी) 116.7 दक्षिणी रोडेशिया (अंग्रेजी) 55.0 माली (फ्रांसीसी) 51.4 223.1		अफगानिस्तान (पुश्तो और फारसी) 174.8 हांगकांग (अंग्रेजी) 39.5 214.3	जर्मन जनवादी जनतन्त्र (जर्मन) 170 7 फिनलैंड (फिन्निश) 46 2 216.8	ग्वाटेमाला (स्पेनिश) 52 4 52 4

(1)	(2)	(3)	(4)		(5)		(6)		(7)	
5	कश्मीरी	24 4	लीबिया (अरबी)	20 1	जोर्डन (अरबी)	23 8	आयरलैंड (आयरिश और अंग्रेजी)	29 8	पराग्वे (स्पेनिश और ग्वारानी)	24 7
6	गुजराती	258 9	इथियोपिया (अमहारिक)	252 5	नेपाल (नेपाली)	115 5	स्काटलैंड (अंग्रेजी)	52 2	पेरू (स्पेनिश)	140 1
					मलेशिया (मलय)	106 7	यूगोस्लाविया (सर्बो क्रोएशियन)	205 2	वेनेजुएला (स्पेनिश)	107 2
					लाओस (लाओ)	30 3				
				252 5		252 5		257 4		247 3
7	तमिल	376 9	अल्जीरिया (अरबी)	147 7	तुर्की (तुर्की)	361 1	पोलैंड (पोलिश)	328 0	अर्जेंटाइन (स्पेनिश)	235 7
			दक्षिणी अफ्रीका (अंग्रेजी)	230 0			स्काटलैंड (अंग्रेजी)	52 2	पेरू (स्पेनिश)	140 1
				377 7		361 1		380 2		375 8
8	तेलुगु	447 5	मिस्र (अरबी)	340 8	शाम (सीरिया) (अरबी)	64 6	बेल्जियम (फ्रांसीसी, डच, जर्मन)	96 7	कनाडा (अंग्रेजी और फ्रांसीसी)	215 7
			युगांडा (अंग्रेजी)	101 3	थाईलैंड (थाई)	373 8	स्पेन (स्पेनिश)	341 3		
				442 1		438 4		438 0		215 7

(1)	(2)	(3)	(4)	(5)	(6)	(7)
9.	पजाबी	164.	सूडान (अरबी) 1605.9	श्रीलंका (सिंहली, मंदारिन और तमिल) 127.1	आस्ट्रेलिया (जर्मन) 74 6 बल्गारिया (बल्गेरियन) 85.4	चिली (स्पेनिश) 98.8 इक्वेडोर (स्पेनिश) 63 0
			160.9	127.1	160.0	161.8
10.	बंगला	447.9	मिस्र (अरबी) 340.8 युगांडा (अंग्रेजी) 101 3	ईरान (फारसी) 297.8 श्रीलका (सिंहली) 127.1 सिंगापुर (अंग्रेजी, मलय, चीनी, मदारिन, तमिल) 21.1	स्पेन (स्पेनिश) 341.3 हंगरी (मगयार) 103 7	कनाडा (अंग्रेजी और फ्रासीसी) 215.7 कोलंबिया (स्पेनिश) 217.0
			442.1	446.0	445 0	432 7
11.	मराठी	422.5	मिस्र (अरबी) 340 8 मोजेंबीक 83.6	फिलिपाइन (अंग्रेजी), स्पेनिश, टागालोग 379 2 इजराइल 30.1	स्वीडन (स्वीडिश) 81.0 स्विटजरलैंड (जर्मन, फ्रासीसी, इटैलियन) 62.3	पेरू (स्पेनिश) 140 1
			421 4	409 3	143 3	140 1
12.	मलयालम	219.4	अंगोला (पुर्तगाली) 75 1 आइवरी-कोस्ट (फ्रासीसी) 44.2	इराक (अरबी) 97.5 नेपाल 115.5	रूमानिया (रूमानियन) 204.7	एल-सालवाडोर (स्पेनिश) 35.5

(1)	(2)	(3)	(4)	(5)	(6)	(7)
			कुरू बी 33 5 (कुरू बी, फासीसी) मलावी (अंग्रेजी) 45 5 रुमांडा (फासीसी) 37 9 (किनयारवांडा) 218 2	(नेपाली) 213 0	204 7	35 5
13	संस्कृत (2212)	02	—	—	—	—
14	सिन्धी	16 8	सैंट्रल अफ्रीकन रिपब्लिक 16 4 16 4	मंगोलिया 12 8 (मंगोलियन, खालिखा) 12 8	अल्बानिया 21 9 (अल्बानियन) 21 9	कोस्टारीका 17 9 (स्पेनिश) 17 9
15	हिन्दी	1625 8	नाइजीरिया 565 1 (अंग्रेजी) मिस्र (अरबी) 340 8 इथियोपिया 252 5 (अमहारिक) जायर (फासीसी) 223 0 सूडान (अरबी) 160 9 1542 3	जापान 1056 0 (जापानी) 056 0	इंग्लैंड 555 1 (अंग्रेजी) इटली (इटैलियन) 537 7 फ्रांस 512.5 (फ्रांसीसी) 1605 3	मेक्सिको 506 5 (स्पेनिश) ब्राजील (पुर्तगाली) 960 8 पेरू 140 1 (स्पेनिश) 1607.4

परिशिष्ट I

विवरण I

संदर्भ एवं टिप्पणियाँ

1. भारतीय भाषा-भाषियों की संख्या का आधार रजिस्ट्रार जनरल ऑफ़ इण्डिया द्वारा प्रकाशित 1971 की जन-गणना के अस्थायी आँकड़े है,

   विभिन्न महाद्वीपों के देशों की आबादी के आँकड़े मध्यवर्षीय अनुमान हैं, जो संयुक्त राष्ट्र संघ द्वारा प्रकाशित डेमोग्राफ़िक बुक (जनांकिकी शब्द-कोश, 1973) से लिए गए हैं, जिस देश की 1971 की जनसंख्या के सही आँकड़े प्रकाशित हो चुके थे, उस स्थिति में सही आँकड़ों का प्रयोग किया गया है,

2. जिन देशों की जन-संख्या दस लाख से कम थी, उनके नाम तुलना के लिए नहीं लिए गए हैं,

3. देशों के साथ कोष्ठक में दी गयी भाषाएँ, उन देशों की राजभाषाएँ है।

परिशिष्ट I

विवरण II

भारतीय भाषाओं के बोलने वालों की सख्या

रजिस्ट्रार जनरल ऑफ इंडिया द्वारा प्रकाशित स्थायी आँकड़े

क्र स	भाषा का नाम	भाषा भाषियों की सख्या (लाख में)	भाषा मे बोलियो की सख्या
1	असमिया	89 6	—
2	उड़िया	198 6	2
3	उर्दू	286 2	—
4	कन्नड	217 1	1
5	कश्मीरी	25 0	2
6	गुजराती	258 7	1
7	तमिल	376 9	2
8	तेलुगु	447 6	1
9	पजाबी	141 1	2
10	बगला	447 9	4
11	मराठी	417 7	1
12	मलयालम	219 1	1
13	सस्कृत (2212)	02	—
14	सिंधी	16 8	—
15	हिंदी	208 51	46

नोट स्थायी एव अस्थायी आँकडो मे सर्वाधिक अतर हिन्दी से सम्बन्धित आँकडो मे है। ऐसा शायद इस कारण हुआ क्यो कि अस्थायी आकडे सक-लित करते समय बिहारी, राजस्थानी आदि भाषाओ के बोलने वालो की गिनती को सविधान की आठवी अनुसूची मे दी गई भाषाओ के बोलन वालो की गिनती मे शामिल नही किया गया था, परन्तु स्थायी आँकडो

के संकलन के समय इन भाषाओं के बोलने वालों को हिंदी भाषा-भाषियों के साथ मिला दिया गया है।

अंगीकारो : सैंसिज ऑफ इंडिया, 1971. सीरीज I, पार्ट II (स)—(ii) रजिस्ट्रार जनरल ऑफ़ सैंसिज, कमिश्नर ऑफ़ इंडिया, मुद्रक मैनेजर, भारत सरकार का छापाखाना, फरीदाबाद, 1977

परिशिष्ट-II

विवरण-I

विभिन्न भारतीय भाषाओं का पंक्तिबद्ध प्राप्तांक

क्रमांक	भाषा (अकारादि क्रम से)	राज्यों में प्राप्तांक	संघ राज्यक्षेत्रों में प्राप्तांक	कुल मत	प्राप्त मतों के आधार के अनुसार क्रम		
1	असमिया	101 (13)	27 (13)	128 (13)	1	हिंदी	376
2	उड़िया	154 (10)	38 (12)	192 (10)	2	उर्दू	338
3	उर्दू	249 (2)	89 (4)	338 (2)	3	बंगला	307
4	कन्नड़	130 (11)	57 (10)	187 (11)	4	पंजाबी	292
5	कश्मीरी	74 (14)	14 (14)	88 (14)	5	तमिल	280
6	गुजराती	157 (9)	81 (6)	238 (9)	6	मलयालम	272
7	तमिल	190 (6)	90 (2)	280 (6)	7	तेलुगु	266
8	तेलुगु	198 (5)	68 (9)	266 (7)	8	मराठी	264
9	पंजाबी	221 (3)	71 (8)	292 (4)	9	गुजराती	238
10	बंगला	217 (4)	90 (2)	307 (3)	10	उड़िया	292
11	मराठी	190 (6)	74 (7)	264 (8)	11	कन्नड़	187
12	मलयालम	189 (8)	83 (5)	272 (6)	12	सिंधी	169
13	संस्कृत	19 (15)	10 (15)	29 (15)	13	असमिया	128
14	सिंधी	130 (11)	42 (11)	172 (12)	14	कश्मीरी	88
15	हिंदी	272 (1)	104 (1)	376 (1)	15	संस्कृत	29

संदर्भ और टिप्पणियां

1. यह संकलन 1971 की जनगणना के आंकड़े के आधार पर है

2. भारतीय संविधान की आठवीं अनुसूची में दर्ज भाषाओं को सर्वप्रथम भाषा-भाषियों की गणना के आधार पर प्रत्येक राज्य और संघ राज्य-क्षेत्र में क्रमवद्ध किया गया,

   प्रथम स्थान के लिए 15 अंक, द्वितीय के लिए 14 और इसी प्रकार घटते क्रम से चौदहवें स्थान के लिए दो, पंद्रहवें के लिए एक अंक दिए गए, यदि किसी भाषा का किसी राज्य अथवा संघ राज्य-क्षेत्र में कोई भी वोलनेवाला नहीं था, तो वहां पर उस भाषा का अंक 0 था, इस प्रकार प्राप्तांक को जोड़ा गया,

   कोष्ठक की संख्याएँ भाषाओं की राज्यों तथा संघ राज्य क्षेत्रों में पारस्परिक पद को अंकित करती है,

   भाषाओं के अंक प्राप्त करने की विधि इस परिशिष्ट के विवरण II में हिंदी का प्राप्तांक निकालकर दर्शायी गई है ।

परिशिष्ट II

विवरण II

हिंदी द्वारा प्राप्तांक

	I	II	III	IV	V	VI	VII	VIII	IX	X से	XV तक
1 बोलने वाले लोगो की सख्या के आधार पर स्थान	I	II	III	IV	V	VI	VII	VIII	IX	X	XV
2 राज्यो की सख्या जिनमे हिंदी का 1से 15 तक का स्थान था ।	7	4	4	1	1	—	4	—	—	—	—
3 सघ राज्यक्षेत्रो की सख्या जिनमे हिंदी भाषा भाषियो का 1 15 तक का स्थान था ।	2	—	4	—	2		—	—	—	—	—
4 राज्यो और सघ राज्य क्षेत्रो मे स्थानो का जोड़ ।	9	4	8	1	3	0	4	—	—	—	—
5 प्राप्तांक	9×15 =135	4×14 =56	8×13 =104	1×12 =12	3×11 =33	0×10 =0	4×9 =36	— —	— —	— —	— — =376

परिशिष्ट III

संविधान सभा में विभिन्न दलों के सदस्यों की संख्या

क्रम	प्रान्त	हिन्दू (हरिजनों के बिना)	हरिजन	मुस्लिम	ऐंग्लोइंडियन	भारतीय ईसाई	पारसी	पिछड़ी जातियाँ	कुल
1.	मद्रास	35	7	4	1	2	—	—	49
2.	बंबई	15	2	2	—	1	1	—	21
3.	उत्तरप्रदेश	41	4	8	—	1	1	—	55
4	विहार	24	4	5	—	—	—	3	36
5.	मध्य प्रदेश	10	3	1	1	1	1	—	17
6.	उड़ीसा	7	1	—	—	—	-	1	9
7.	कुर्ग	1	—	—	—	—	—	—	1
8.	अजमेर-मारवाड़	1	—	—	—	—	—	—	1
9.	दिल्ली	—	—	1	—	—	—	—	1
10.	पंजाब	6	2	16	—	—	—	—	24
11.	उत्तर-पश्चिमी-सीमा प्रांत	—	—	3	—	—	—	—	3
12.	सिंध	1	—	3	—	—	—	—	4
13.	बिलोचिस्तान	—	—	1	—	—	—	—	1
14.	बंगाल	18	7	33	1	1	—	—	60
15.	असम	4	1	3	—	—	—	1	10
									रिक्त (सिख) 4
	कुल	163	31	80	3	6	3	6	292 कुल (ब्रिटिश इंडिया में) 296

परिशिष्ट IV

भाग 17*

राजभाषा

अध्याय 1 सघ की भाषा

सघ की राजभाषा

343 (1) सघ की राजभाषा हिन्दी और लिपि देवनागरी होगी

सघ के राजकीय प्रयोजनो के लिए प्रयोग होने वाले अको का रूप भारतीय अको का अन्तर्राष्ट्रीय रूप होगा।

(2) खण्ड (1) मे किसी बात के होते हुए भी, इस सविधान के प्रारम्भ से पन्द्रह वर्ष की कालावधि के लिए सघ के उन सब राजकीय प्रयोजनो के लिए अग्रेजी भाषा प्रयोग की जाती रहेगी जिनके लिए ऐसे प्रारम्भ के ठीक पहिले वह प्रयोग की जाती थी

परन्तु राष्ट्रपति उक्त कालावधि मे, आदेश द्वारा, सघ के राजकीय प्रयोजनों मे मे किसी के लिए अग्रेजी भाषा के साथ-साथ हिन्दी भाषा का तथा भारतीय अको के अन्तर्राष्ट्रीय रूप के साथ-साथ देवनागरी रूप का प्रयोग प्राधिकृत कर सकेगा।

(3) इस अनुच्छेद मे किसी बात के होते हुए भी, ससद विधि द्वारा, उक्त पन्द्रह साल की कालावधि के पश्चात्—

(क) अग्रेजी भाषा का, अथवा

(ख) अको के देवनागरी रूप का,

ऐसे प्रयोजनो के लिए प्रयोग उपबधित कर सकेगी जैसे कि ऐसी विधि मे उल्लिखित हो।

*जम्मू-कश्मीर राज्य को लागू होने के सबध मे परिशिष्ट 2 देखिए।

राजभाषा के लिए आयोग और संसद् की समिति

344. (1) राष्ट्रपति, इस संविधान के प्रारम्भ से पांच वर्ष की समाप्ति पर तथा तत्पश्चात् ऐसे प्रारम्भ से दस वर्ष की समाप्ति पर, आदेश द्वारा एक आयोग गठित करेगा जो एक अध्यक्ष और अष्टम अनुसूची में उल्लिखित भिन्न भाषाओं का प्रतिनिधित्व करने वाले ऐसे अन्य सदस्यों से मिलकर बनेगा जैसे कि राष्ट्रपति नियुक्ति करे, तथा आयोग द्वारा अनुसरण की जाने वाली प्रक्रिया भी आदेश परिभाषित करेगा।

(2) राष्ट्रपति को

(क) संघ के राजकीय प्रयोजनो के लिए हिन्दी भाषा के उत्तरोत्तर अधिक प्रयोग के,

(ख) संघ के राजकीय प्रयोजनों में से सब या किसी एक के लिए अंग्रेज़ी भाषा के प्रयोग पर निर्बंधनों के,

(ग) अनुच्छेद 348 में वर्णित प्रयोजनों में से सब या किसी के लिए प्रयोग की जाने वाली भाषा के,

(घ) संघ के किसी एक या अधिक उल्लिखित प्रयोजनों के लिए प्रयोग किए जाने वाले अंकों के रूप के,

(ङ) संघ की राजभाषा तथा संघ और किसी राज्य के बीच अथवा एक राज्य और दूसरे राज्य के बीच संचार की भाषा तथा उनके प्रयोग के बारे में राष्ट्रपति द्वारा आयोग से पृच्छा किए हुए किसी अन्य विषय के,

बारे में सिफारिश करना आयोग का कर्तव्य होगा।

(3) खण्ड (2) के अधीन अपनी सिफारिशें करने मे आयोग भारत की औद्योगिक, सांस्कृतिक और वैज्ञानिक उन्नति का तथा लोक सेवाओं के बारे में अहिन्दी भाषा-भाषी क्षेत्रों के लोगों के न्यायपूर्ण दावों और हितों का सम्यक् ध्यान रखेगा।

(4) तीस सदस्यों की एक समिति गठित की जाएगी जिनमें से बीस लोकसभा के सदस्य होंगे तथा दस राज्यसभा के सदस्य होंगे ज कि क्रमशः लोकसभा के सदस्यो तथा राज्यसभा के सदस्यों द्वारा अनुपाती प्रतिनिधित्व पद्धति के सार एकल संक्रमणीय मत द्वारा निर्वाचित होंगे।

(5) खण्ड (1) के अधीन गठित आयोग की सिफारिशों की परीक्षा

करना तथा उन पर अपनी राय का प्रतिवेदन राष्ट्रपति को करना समिति का कर्तव्य होगा।

(6) अनुच्छेद 343 में किसी बात के होते हुए भी, राष्ट्रपति खण्ड (5) में निर्दिष्ट प्रतिवेदन पर विचार करने के पश्चात् उस सारे प्रतिवेदन के या उसके किसी भाग के अनुसार निदेश निकाल सकेगा।

अध्याय 2 प्रादेशिक भाषाएं

राज्य की राजभाषा या राजभाषाएँ

345 अनुच्छेद 346 और 347 के उपबंधों के अधीन रहते हुए, राज्य का विधान-मण्डल, विधि द्वारा, उस राज्य के राजकीय प्रयोजनों में से सब या किसी के लिए प्रयोग के अर्थ उस राज्य में प्रयुक्त होने वाली भाषाओं में से किसी एक या अनेक को या हिन्दी को अंगीकार कर सकेगा

परंतु जब तक राज्य का विधान-मण्डल, विधि द्वारा इससे अन्यथा उपबन्ध न करे तब तक राज्य के भीतर उन राजकीय प्रयोजनों के लिए अंग्रेजी भाषा प्रयोग की जाती रहेगी जिनके लिए इस संविधान के प्रारम्भ से ठीक पहले वह प्रयोग की जाती थी।

एक राज्य और दूसरे के बीच में अथवा राज्य और संघ के बीच में संचार के लिए राजभाषा

346 संघ में राजकीय प्रयोजनों के लिए प्रयुक्त होने के लिए तत्समय प्राधिकृत भाषा, एक राज्य और दूसरे राज्य के बीच में तथा किसी राज्य और संघ के बीच में संचार के लिए राजभाषा होगी

परंतु यदि दो या अधिक राज्य करार करते हैं कि ऐसे राज्यों के बीच में संचार के लिए राजभाषा हिन्दी भाषा होगी तो ऐसे संचार के लिए वह भाषा प्रयोग की जा सकेगी।

किसी राज्य के जन-समुदाय के किसी विभाग द्वारा बोली जाने-वाली भाषा के संबंध में विशेष उपबंध

347 तद्विषयक माँग की जाने पर यदि राष्ट्रपति का समाधान हो जाए कि किसी राज्य के जनसमुदाय का पर्याप्त अनुपात चाहता है कि उसके द्वारा बोली जाने वाली किसी भाषा को राज्य द्वारा मान्यता दी जाए तो वह निदेश दे सकेगा कि ऐसी भाषा को उस राज्य में सर्वत्र अथवा उसके किसी भाग में ऐसे प्रयोजन के लिए जैसा कि वह उल्लिखित करे राजकीय मान्यता दी जाए।

अध्याय 3 : उच्चतम न्यायालय, उच्च न्यायालयों आदि की भाषा

उच्चतम न्यायालय और उच्च न्यायालयों में तथा अधिनियमों, विधेयकों आदि में प्रयोग की जानेवाली भाषा

348. (1) इस भाग के पूर्ववर्ती उपबन्धों मे किसी बात के होते हुए भी, जब तक संसद् विधि द्वारा अन्यथा उपबन्ध न करे तब तक—

(क) उच्चतम न्यायालय मे तथा प्रत्येक उच्च न्यायालय में सब कार्यवाहियां,

(ख) जो

(i)[2] विधेयक, अथवा उन पर प्रस्तावित किए जाने वाले जो संशोधन, संसद् के प्रत्येक सदन में पुरःस्थापित किए जाएँ उन सबके प्राधिकृत पाठ,

(ii)[3] अधिनियम संसद् द्वारा या राज्य के विधान-मण्डल द्वारा पारित किए जाएँ, तथा जो अध्यादेश राष्ट्रपति या राज्यपाल या राजप्रमुख द्वारा प्रख्यापित किए जाएँ, उन सब के प्राधिकृत पाठ, तथा

(iii) आदेश, नियम, विनियम, और उपविधि इस संविधान के अधीन, अथवा संसद् या राज्यो के विधान-मण्डल द्वारा निर्मित किसी विधि के अधीन, निकाले जाएँ उन सब के प्राधिकृत पाठ, अंग्रेजी भाषा मे होंगे।

(2)[4] खण्ड (1) के उपखण्ड (क) मे किसी बात के होते हुए भी, किसी राज्य का राज्यपाल या राजप्रमुख राष्ट्रपति की पूर्व सम्मति से हिन्दी भाषा का या उस राज्य मे राजकीय प्रयोजन के लिए प्रयोग होने वाली किसी अन्य भाषा का प्रयोग उस राज्य में मुख्य स्थान रखने वाले उच्च

---

2. इस उपखण्ड का आशय यथानिम्नलिखित है :
   (i) विधेयक संसद् के प्रत्येक सदन में पुर.स्थापित किए जाएँ अथवा उनके जो संशोधन ऐसे सदन मे प्रस्तावित किए जाएं, उन सब के प्राधिकृत पाठ,
3. संविधान (सप्तम संशोधन) अधिनियम 1956 की धारा 29 और अनुसूची द्वारा संशोधन के पश्चात् इस उपखण्ड का वर्तमान स्वरूप इस प्रकार है :
   (ii) अधिनियम संसद् द्वारा या राज्य के ,विधान-मण्डल द्वारा पारित किए जाए, तथा जो अध्यादेश राष्ट्रपति या राज्यपाल द्वारा प्रख्यापित किए जाएं, उन सब के प्राधिकृत पाठ तथा।
4. संविधान (सप्तम संशोधन) अधिनियम, 1956 की धारा 29 और

न्यायालय मे की कार्यवाहियो के लिए प्राधिकृत कर सकेगा

परतु इस खण्ड की कोई बात वैसे उच्च न्यायालय द्वारा दिए गए निर्णय, आज्ञप्ति अथवा आदेश को लागू न होगी।

(3) खण्ड (1) के उपखण्ड (ख) मे किसी बात के होते हुए भी, जहाँ किसी राज्य के विधान-मण्डल ने, उस विधान-मण्डल मे पुर स्थापित विधेयको या उसके द्वारा पारित अधिनियमो मे अथवा उस राज्य के राज्यपाल या राजप्रमुख द्वारा प्रख्यापित अध्यादेशो मे अथवा उस उपखण्ड की कडिका (iii) मे निर्दिष्ट किसी आदेश, नियम, विनियम या उपविधि मे प्रयोग के लिए अंग्रेजी भाषा से अन्य किसी भाषा के प्रयोग को विहित किया है वहाँ उस राज्य के राजकीय सूचना-पत्र मे उस राज्य के राज्यपाल या राजप्रमुख के प्राधिकार से प्रकाशित अंग्रेजी भाषा मे उस का अनुवाद उस खण्ड के अभिप्रायो के लिए उस का अंग्रेजी भाषा मे प्राधिकृत पाठ समझा जाएगा।

अनुसूची द्वारा सशोधन के पश्चात खण्ड (2) और (3) का वर्तमान स्वरूप इस प्रकार है

"(2) खण्ड (1) के उपखण्ड (क) मे किसी बात के होते हुए भी, किसी राज्य का राज्यपाल राष्ट्रपति की पूर्व सम्मति से हिन्दी भाषा का या उस राज्य मे राजकीय प्रयोजन के लिए प्रयुक्त होने वाली, अन्य भाषा का प्रयोग उस राज्य मे मुख्य स्थान रखने वाले उच्च न्यायालय मे की कार्यवाहियो के लिए प्राधिकृत कर सकेगा

परतु इस खण्ड की कोई बात वैसे उच्च न्यायालय द्वारा दिए गए निर्णय, आज्ञप्ति अथवा आदेश को लागू न होगी।

(3) खण्ड (1) के उपखण्ड (ख) मे किसी बात के होते हुए भी, जहा किसी राज्य के विधान-मण्डल ने, उस विधान-मण्डल मे पुर स्थापित विधेयको या उसके द्वारा पारित अधिनियमो मे अथवा उस राज्य के राज्यपाल द्वारा प्रख्यापित अध्यादेशो मे अथवा उस उपखण्ड की कडिका (iii) में निर्दिष्ट किसी आदेश, नियम, विनियम या उपविधि मे प्रयोग के लिए अंग्रेजी भाषा से अन्य किसी भाषा के प्रयोग को विहित किया है वहा उस राज्य के राजकीय सूचना पत्र मे उस राज्य के राज्यपाल के प्राधिकार से प्रकाशित अंग्रेजी भाषा मे उसका अनुवाद उस खण्ड के अभिप्रायो के लिए उस का अंग्रेजी भाषा मे प्राधिकृत पाठ समझा जाएगा।"

भाषा संबंधी कुछ विधियों को अधिनियमित करने के लिए विशेष प्रक्रिया

349. इस संविधान के प्रारम्भ से पन्द्रह वर्षों की कालावधि तक अनुच्छेद 348 के खण्ड (1) में वर्णित प्रयोजनो में से किसी के लिए प्रयोग की जाने वाली भाषा के लिए उपबन्ध करने वाला कोई विधेयक या संशोधन संसद् के किसी सदन मे राष्ट्रपति की पूर्व मंजूरी के बिना पुरःस्थापित या प्रस्तावित नहीं किया जाएगा तथा ऐसे किसी विधेयक के पुरःस्थापित अथवा ऐसे किसी संशोधन के प्रस्तावित किए जाने की मंजूरी अनुच्छेद 344 के खण्ड (1) के अधीन गठित आयोग की सिफ़ारिशों पर तथा उस अनुच्छेद के खण्ड (4) के अधीन गठित समिति के प्रतिवेदन पर विचार करने के पश्चात् ही राष्ट्रपति देगा।

अध्याय 4 विशेष निदेश

व्यथा के निवारण के लिए अभिवेदन में प्रयोक्तव्य भाषा

350. किसी व्यथा के निवारण के लिए संघ या राज्य के किसी पदाधिकारी या प्राधिकारी को, यथास्थिति, संघ में या राज्य में प्रयोग होने वाली किसी भाषा में अभिवेदन देने का, प्रत्येक व्यक्ति को हक होगा।[5]

---

5. संविधान (सप्तम संशोधन) अधिनियम, 1956 की धारा 21 द्वारा अनुच्छेद 350 के पश्चात् निम्नलिखित अनुच्छेद जोड़ दिए गए है :

प्राथमिक-स्तर पर मातृभाषा में शिक्षा देने के लिए सुविधाएँ

"350 क. प्रत्येक राज्य के अन्दर प्रत्येक स्थानीय प्राधिकारी का यह प्रयास होगा कि भाषाजात अल्पसंख्यक वर्गो के बालकों को शिक्षा के प्राथमिक स्तर में मातृभाषा मे शिक्षा देने के लिए पर्याप्त सुविधाओं की व्यवस्था की जाए और राष्ट्रपति किसी राज्य को ऐसे निदेश दे सकेगा जैसे कि वह ऐसी सुविधाओं का उपबन्ध सुनिश्चित कराने के लिए आवश्यक या उचित समझता है।

हिन्दी भाषा के विकास के लिए निदेश

351 हिन्दी भाषा की प्रसार-वृद्धि करना, उसका विकास करना, ताकि वह भारत की सामासिक संस्कृति के सब तत्वों की अभिव्यक्ति का माध्यम हो सके, तथा उस की आत्मीयता में हस्तक्षेप किए बिना हिंदुस्तानी और अष्टम अनुसूची में उल्लिखित अन्य भारतीय भाषाओं के रूप, शैली और पदावलि को आत्मसात् करते हुए तथा जहां आवश्यक या वाछनीय हो वहां उसके शब्द-भण्डार के लिए मुख्यत संस्कृत से तथा गौणत अन्य भाषाओं से शब्द ग्रहण करते हुए उस की समृद्धि सुनिश्चित करना संघ का कर्तव्य होगा।

भाषाई अल्पसंख्यकों के लिए विशेष पदाधिकारी

350 ख (1) भाषाई अल्पसंख्यकों के लिए एक विशेष पदाधिकारी होगा, जो राष्ट्रपति द्वारा नियुक्त किया जाएगा।

(2) भाषाई अल्पसंख्यकों के लिए जिन संरक्षणों की इस संविधान के अधीन व्यवस्था की जाए उनसे सम्बद्ध सब विषयों का अनुसन्धान करना और ऐसी अन्तरावधियों पर उन विषयों के सम्बन्ध में, जैसे कि राष्ट्रपति निर्दिष्ट करे, राष्ट्रपति को प्रतिवेदन देना विशेष पदाधिकारी का कर्तव्य होगा। राष्ट्रपति ऐसे सब प्रतिवेदनों को संसद के प्रत्येक सदन के समक्ष रखवाएगा और सम्बन्धित राज्यों की सरकारों को भिजवाएगा।

परिशिष्ट V

विधान सभाओं में 1954 में प्रयुक्त भाषाओं का विवरण

क्रम सं.	विधान सभा का नाम	संविधान के अनुच्छेद 345 के अनुसार राज्य सरकार द्वारा राजभाषा चुनने की स्थिति	1954 में राज्य सभाओ में विभिन्न भाषाओ में दिए गए भाषण : कुल भाषणो का प्रतिशत			
(1)	(2)	(3)	(4)			
			अंग्रेजी 4(क)	हिन्दी 4(ख)	अन्य भाषाए 4(स)	
1.	लोक सभा	संविधान के अनुच्छेद 348 के मुताबिक, साधारणतया संसद् की कार्यवाही हिन्दी अथवा अंग्रेजी में की जायेगी। यदि कोई सदस्य हिन्दी अथवा अंग्रेजी मे अपने विचार व्यक्त करने मे असमर्थ हो, तो अध्यक्ष की अनुमति से वह सदस्य अपनी मातृभाषा में बोल सकता है।	83 2	16 2	उर्दू बंगला तेलुगु तमिल	0 4 0 1 0.1 0 1
2.	राज्य सभा	वही	85.0	13 1	उर्दू मलयालम	1 84 0.06
	आंध्रप्रदेश विधान सभा	अनुच्छेद 345 के अधीन विधान सभा के लिए राजकीय भाषा चुनने का कोई उपबन्ध नही है।	10.0	—	तेलुगु	90 00

(1)	(2)	(3)	4(क)	4(ख)	4 (ग)	
	असम विधान सभा	अनुच्छेद 345 के अधीन विधान सभा के लिए राजकीय भाषा चुनने का कोई उपबन्ध नहीं है।	89 67	0 18	असमिया	9 97
					बंगला	0 18
3	बिहार					
	(क) विधान सभा	'बिहार विधि निर्माण के लिए भाषा अधिनियम, 1955' के अधीन विधान सभा मे बहस, विधेयक प्रस्तुत करने और अधिनियम पारित करने के लिए देवनागरी लिपि मे हिन्दी का प्रयोग किया जायेगा।	5 0	95 0	—	
	(ख) विधान परिषद्	वही	27 67	72 33	—	
4	बम्बई					
	(क) विधान सभा	अनुच्छद 345 के अधीन विधान सभा के लिए राजकीय भाषा चुनने का कोई उपबन्ध नही है।	50 4	3 2	मराठी	40 9
					गुजराती	4 5
					कन्नड	1 0
	(ख) विधान परिषद्	वही	89 6	1 7	मराठी	7 3
					गुजराती	1 4
5	मध्य प्रदेश विधान सभा	मध्यप्रदेश राजभाषा अधिनियम 1950 के अनुसार देवनागरी लिपि मे हिन्दी और बाल-बोध लिपि मे मराठी विधान सभा की राजकीय भाषाएँ चुनी गयी हैं, परन्तु विधान सभा मे पेश किए जाने वाले समस्त विधेयको	1 5	83 0	मराठी	15 5

(1)	(2)	(3)	4 (क)	4 (ख)	4 (स)	
		और पारित होने वाले अधिनियमो का शासकीय मूल पाठ अंग्रेजी मे होगा। इसके अतिरिक्त प्रवर समितियों, वित्त समितियो, प्रत्यायोजित विधि निर्माण समितियो की रपटे भी अंग्रेजी मे होगी।				
6.	मद्रास (क) विधान सभा	अनुच्छेद 345 के अधीन विधान सभा के लिए राजकीय भाषा चुनने का कोई उपबन्ध नही है।	52.4	—	तमिल मलयालम	42 2 5.4
	(ख) विधान परिषद्	वही	82.2	—	तमिल मलयालम	17.6 0 2
7.	उड़ीसा विधान सभा	'उडीसा राजभाषा अधिनियम 1944' के अनुसार विधान सभा में बहस तथा विधेयक प्रस्तुत करने और अधिनियम पारित करने के लिए उडिया भाषा का प्रयोग होगा।	5 0	—	उडिया	95 0
8.	पजाव (क) विधान सभा	अनुच्छेद 344 के अधीन विधान सभा के लिए राजकीय भाषा चुनने का कोई उपबन्ध नही है।	0 27	56 7	पजाबी	43 3
	(ख) विधान परिषद्	वही	34.6	35.6	पजावी	29.8
9.	उत्तर प्रदेश (क) विधान सभा	'उत्तर प्रदेश भाषा (विधेयक एव अधिनियम) अधि-	—	100.0	—	

(1)	(2)	(3)	4(क)	4(ख)	4(ग)	
		नियम 1950' के अनुसार विधान सभा मे बहस तथा विधेयक प्रस्तुत करने और अधिनियम पारित करने के लिए देवनागरी लिपि मे हिन्दी का प्रयोग होगा ।				
	(ख) विधान परिषद्	वही	3 0	97 0	—	
10	पश्चिम बगाल					
	(क) विधान सभा	अनुच्छेद 345 के अधीन विधान सभा के लिए राजकीय भाषा चुनने का कोई उपबन्ध नही है ।	50 4	0 5	बगला	49 1
	(ख) विधान परिषद्	वही	69 3	—	बगला	30 0
11	हैदराबाद विधान सभा	अनुच्छेद 345 के अधीन विधान सभा के लिए राजकीय भाषा चुनने का कोई उपबन्ध नही है ।	5 0	21 0	उर्दू	63 0
					तेलुगु	8 0
					मराठी	2 0
					कन्नड	1 0
12,	जम्मू कश्मीर सविधान सभा	पुराने सविधान के अनुसार राजकीय सविधान, सभा राजभाषा के तौर पर उर्दू का प्रयोग कर रही है ।	6 0	0 5	उर्दू	94 0
					फारसी	0 4
					लद्दाखी	0 4
13	मध्य भारत विधान सभा	मध्य भारत भाषा अधिनियम 1950' के अनुसार विधान सभा मे बहस तथा विधेयक प्रस्तुत करने और अधि	—	100 0	—	

(1)	(2)	(3)	4(क)	4(ख)	4(स)	
		नियम पारित करने के लिए देवनागरी लिपि में हिंदी का प्रयोग होगा।				
14.	मैसूर (क) विधान सभा	अनुच्छेद 345 के अधीन विधान सभा के लिए राजकीय भाषा चुनने का कोई उपबन्ध नही है।	45 0	—	कन्नड	55.0
	(ख) विधान परिषद्	वही	35.0	—	कन्नड़	65.0
15.	पेप्सू विधान सभा	अनुच्छेद 345 के अधीन विधान सभा के लिए राजकीय भाषा चुनने का कोई उपबन्ध नही है।	2.7	33 5	पजावी	63 8
16.	राजस्थान विधान सभा	'राजस्थान राजभाषा अधिनियम 1952' के अनुसार विधान सभा मे बहस विधेयक पेश करने और अधिनियम पारित करने के लिए देवनागरी लिपि में हिंदी का प्रयोग होगा।	1 3	98.2	राजस्थानी	0 5
17.	सौराष्ट्र विधान सभा	'सौराष्ट्र राजभाषा अधिनियम, 1950' के अनुसार विधान सभा में बहस, विधेयक प्रस्तुत करने और अधिनियम पारित करने की भाषा गुजराती होगी।	—	—	गुजराती	100.0
18.	ट्रावनकोर कोचीन विधान सभा	संविधान अनुच्छेद 345 के अनुसार विधान सभा के लिए राजकीय भाषा चुनने का कोई उपबन्ध नही है।	19.0	—	मलयालम तमिल	78.0 3 0

अंगीकारी : देखिए राजभाषा आयोग, 1956 की रिपोर्ट, पृष्ठ 451 से 455 तक.

परिशिष्ट VI

मार्च-अप्रैल 1976 में लोकसभा मे प्रयुक्त भाषाओं का विवरण

लोक सभा बैठक की तिथि	कुल भाषण	भाषणों के भाषा-वार विभाजन		
		अंग्रेजी	हिंदी	अन्य क्षेत्रीय भाषाएं
8-3-76	21	14	7	—
9-3-76	28	23	5	—
10-3 76	15	15	—	—
11-3-76	17	16	—	1 (बगला)
12-3-76	15	13	2	—
15 3-76	15	7	7	1 (बगला)
17-3-76	38	14	22	2 (बगला—1) (तमिल—1)
18-3-76	18	15	1	2 (तमिल)
19 3-76	26	21	5	—
22-3-76	43	25	18	
23-3-76	30	10	20	—
24-3-76	27	24	1	2 (तमिल)
25-3-76	23	21	1	1 (बगला)
26-3-76	27	15	12	
29-3-76	24	18	6	—
30-3-76	41	27	14	—
31-3-76	32	22	10	—
1-4-76	35	25	10	—
2-4-76	36	20	15	1 (बगला)
5-4-76	27	20	6	1 (तमिल)
6-4-76	24	14	9	1 (तमिल)
7-4-76	26	19	6	1 (बगला)
8-4-76	21	15	6	—
14-4-76	25	15	10	—
15 4-76	26	15	11	—
	660	443	204	13

अंग्रेजी में दिए गए भाषण : कुल भाषणों का प्रतिशत	67.12
हिंदी भाषण : कुल भाषणों का प्रतिशत	30.91
अन्य क्षेत्रीय भाषाओं में दिए गए भाषण : कुल भाषणों का प्रतिशत	1.97

संकलित : इस परिशिष्ट के आँकड़े पाँचवीं लोक सभा के सोलहवें अधिवेशन (वित्त-अधिवेशन) जो 8-3-76 को प्रारम्भ हुआ था, से लिए गए हैं। यह सकलन केवल 15-4-76 तक का है, क्योंकि इसके आधार पर भी (परिशिष्ट V में दी गई) और 1976 की स्थिति की तुलना हो सकती है।

परिशिष्ट VII

गृह मंत्रालय की 27 अप्रैल, 1960 ई० की अधिसूचना संख्या 2/8/60-रा० भा० की प्रतिलिपि

अधिसूचना

राष्ट्रपति का निम्नलिखित आदेश आम जानकारी के लिए प्रकाशित किया जाता है

आदेश . नई दिल्ली, दि० 27 अप्रैल, 1960 ई०

लोक सभा के 20 सदस्यों और राज्य सभा के सदस्यों की एक समिति प्रथम-राजभाषा आयोग की सिफारिशों पर विचार करने के लिए और उनके विषय मे अपनी राय राष्ट्रपति के समक्ष पेश करने के लिए संविधान के अनुच्छेद 344 के खण्ड (4) के उपबन्धो के अनुसार नियुक्त की गई थी। समिति ने अपनी रिपोर्ट राष्ट्रपति के समक्ष 8 फरवरी, 1959 को पेश कर दी। नीचे रिपोर्ट की कुछ मुख्य बातें दी जा रही हैं जिनसे समिति के सामान्य दृष्टिकोण का परिचय मिल सकता है—

संसदीय समिति की सिफारिश

(क) राजभाषा के बारे मे संविधान मे बड़ी समन्वित योजना दी हुई है। इसमें योजना के दायरे से बाहर जाए बिना स्थिति के अनुसार परिवर्तन करने की गुंजाइश है।

(ख) विभिन्न प्रादेशिक भाषाएं राज्यों मे शिक्षा और सरकारी कामकाज के माध्यम के रूप मे तेजी से अंग्रेजी का स्थान ले रही हैं। यह स्वाभाविक ही है कि प्रादेशिक भाषाएँ अपना उचित स्थान प्राप्त करें। अत व्यावहारिक दृष्टि से यह बात आवश्यक हो गई है कि संघ के प्रयोजनों के लिए कोई एक भारतीय भाषा काम मे लाई जाए। किन्तु यह आवश्यक नहीं है कि यह परिवर्तन किसी नियत तारीख को ही हो। यह परिवर्तन धीरे-धीरे इस प्रकार किया जाना चाहिए कि कोई गड़बड़ी न हो और कम से कम असुविधा हो।

(ग) 1965 तक अंग्रेज़ी मुख्य राजभाषा और हिंदी सहायक राजभाषा रहनी चाहिए। 1965 में हिंदी संघ की मुख्य राजभाषा हो जाएगी किन्तु उसके उपरान्त अंग्रेज़ी सहायक राजभाषा के रूप मे चलती रहनी चाहिए।

(घ) संघ के प्रयोजनों मे से किसी के लिए अंग्रेजी के प्रयोग पर कोई रोक इस समय नहीं लगाई जानी चाहिए और अनुच्छेद 343 के खण्ड (3) के अनुसार इस बात की व्यवस्था की जानी चाहिए कि 1965 के उपरान्त भी अंग्रेज़ी का प्रयोग इन प्रयोजनों के लिए, जिन्हे संसद् विधि द्वारा उल्लिखित करे, तब तक होता रहे जब तक कि वैसा करना आवश्यक रहे।

(ङ) अनुच्छेद 351 का यह उपबन्ध कि हिन्दी का विकास ऐसे किया जाए कि वह भारत की सामासिक संस्कृति के सब तत्त्वों की अभिव्यक्ति का माध्यम बन सके, अत्यन्त महत्त्वपूर्ण है और इस बात के लिए पूरा प्रोत्साहन दिया जाना चाहिए कि सरल और सुबोध शब्द काम में लाए जाएं।

रिपोर्ट की प्रतियां संसद् के दोनों सदनों के पटल पर 1959 के अप्रैल मास में रखी दी गई थीं और रिपोर्ट पर विचार-विमर्श लोक सभा में 2 सितंबर से 4 सितंबर, 1959 तक और राज्य सभा मे 8 और 9 सितंबर, 1959 को हुआ था। लोक सभा में इस पर विचार-विमर्श के समय प्रधानमन्त्री ने 4 सितंबर, 1959 को एक भाषण दिया था। राजभाषा के प्रश्न पर सरकार का जो दृष्टिकोण है उसे उन्होंने अपने इस भाषण में मोटे तौर पर व्यक्त कर दिया था।

2. अनुच्छेद 344 के खण्ड (6) द्वारा दी गई शक्तियों का प्रयोग करते हुए राष्ट्रपति ने समिति की रिपोर्ट पर विचार किया है और राजभाषा आयोग की सिफ़ारिशों पर समिति द्वारा अभिव्यक्त राय को ध्यान मे रखकर, इसके बाद निम्नलिखित निदेश जारी किए है।

3. शब्दावली-आयोग की जिन मुख्य सिफारिशो को समिति ने मान लिया, वे ये है—(i) शब्दावली तैयार करने में मुख्य लक्ष्य उसकी स्पष्टता, यथार्थता और सरलता होना चाहिए, (ii) अंतर्राष्ट्रीय शब्दावली अपनाई जाए, या जहाँ भी आवश्यक हो, अनुकूलन कर लिया जाए; (iii) सब भारतीय भाषाओ के लिए शब्दावली का विकास करते समय लक्ष्य यह होना चाहिए कि उसमे जहां तक हो सके, अधिकतम एकरूपता हो; और (iv) हिंदी और अन्य भारतीय भाषाओ की शब्दावली के विकास के लिए जो प्रयत्न केन्द्र और राज्यों में हो रहे है उनमे समन्वय स्थापित करने के लिए समुचित प्रबन्ध

किए जाने चाहिए। इसके अतिरिक्त समिति का यह मत है कि विज्ञान और प्रौद्योगिकी के क्षेत्र में सब भारतीय भाषाओं में जहाँ तक हो सके, एकरूपता होनी चाहिए और शब्दावली लगभग अंग्रेजी या अन्तर्राष्ट्रीय शब्दावली जैसी ही होनी चाहिए। इस दृष्टि से समिति ने यह सुझाव दिया है कि इस क्षेत्र में विभिन्न संस्थाओं द्वारा किए गए काम में समन्वय स्थापित करने और उसकी देखरेख के लिए और सब भारतीय भाषाओं में प्रयोग में लाने की दृष्टि से एक प्रामाणिक शब्दकोष निकालने के लिए एक ऐसा स्थायी आयोग कायम किया जाए जिसके सदस्य मुख्यतः वैज्ञानिक और प्रौद्योगिकीविद् हों।

शिक्षा मंत्रालय निम्नलिखित विषय में कार्रवाई करे

(क) अब तक किए गए काम पर पुनर्विचार और समिति द्वारा स्वीकृत सामान्य सिद्धान्तों के अनुकूल शब्दावली का विकास। विज्ञान और प्रौद्योगिकी के क्षेत्र में वे शब्द, जिनका प्रयोग अन्तर्राष्ट्रीय क्षेत्र में होता है, कम से कम परिवर्तन के साथ अपना लिए जाएँ, अर्थात्, मूल शब्द वे होने चाहिए जोकि आजकल अन्तर्राष्ट्रीय शब्दावली में काम में आते हैं। उनसे व्युत्पन्न शब्दों का जहाँ भी आवश्यक हो, भारतीयकरण किया जा सकता है,

(ख) शब्दावली तैयार करने के काम में समन्वय स्थापित करने के लिए प्रबंध करने के विषय में सुझाव देना, और

(ग) विज्ञान और तकनीकी शब्दावली के विकास के लिए समिति के सुझाव के अनुसार स्थायी आयोग का निर्माण।

4 प्रशासनिक संहिताओं और अन्य कार्यविधि साहित्य का अनुवाद इस आवश्यकता को दृष्टि में रख कर कि संहिताओं और अन्य कार्यविधि-साहित्य के अनुवाद में प्रयुक्त भाषा में किसी हद तक एकरूपता होनी चाहिए, समिति ने आयोग की यह सिफारिश मान ली है कि यह सारा काम एक अभिकरण को सौंप दिया जाए।

शिक्षा मंत्रालय सांविधिक नियमों, विनियमों और आदेशों के अलावा बाकी सब संहिताओं और अन्य कार्यविधि-साहित्य का अनुवाद करे। सांविधिक नियमों, विनियमों और आदेशों का अनुवाद संविधियों के अनुवाद से घनिष्ठ रूप से सम्बद्ध है, इसलिए यह काम विधि मन्त्रालय करे। इस बात का पूरा प्रयत्न होना चाहिए कि सब भारतीय भाषाओं में इन अनुवादों की शब्दावली में जहाँ तक हो सके, एकरूपता रखी जाए।

5 प्रशासनिक कर्मचारी वर्ग को हिंदी का प्रशिक्षण (क) समिति द्वारा

अभिव्यक्त मत के अनुसार 45 वर्ष से कम आयु वाले सब केन्द्रीय कर्मचारियो के लिए सेवाकालीन हिन्दी प्रशिक्षण प्राप्त करना अनिवार्य कर दिया जाना चाहिए। तृतीय श्रेणी के ग्रेड से नीचे के कर्मचारियों और औद्योगिक संस्थाओं और कार्य-प्रभारित कर्मचारियों के संबंध में यह बात लागू न होगी। इस योजना के अन्तर्गत नियत तारीख तक विहित योग्यता प्राप्त न कर सकने के लिए कर्मचारी को कोई दण्ड नहीं दिया जाना चाहिए। हिन्दी भाषा की पढ़ाई के लिए सुविधाएँ प्रशिक्षणार्थियों को मुफ्त मिलती रहनी चाहिए।

(ख) गृह मंत्रालय उन टाइपकारों और आशुलिपिको को हिंदी टाइपराईटिंग और आशुलिपि का प्रशिक्षण देने के लिए आवश्यक प्रबन्ध करे जो केन्द्रीय सरकार की नौकरी में हैं।

(ग) शिक्षा मंत्रालय हिंदी टाइपराइटरों के मानक की-बोर्ड (कुंजी पटल) के विकास के लिए शीघ्र कदम उठाए।

6. हिंदी प्रचार : (क) आयोग की इस सिफारिश से कि यह काम करने की जिम्मेदारी अब सरकार उठाए, समिति सहमत हो गई है। जिन क्षेत्रों में प्रभावी रूप से काम करने वाली गैर-सरकारी संस्थाएं पहले से ही विद्यमान हैं, उनमें उन संस्थाओं को वित्तीय और अन्य प्रकार की सहायता दी जाए और जहाँ ऐसी संस्थाएँ नहीं हैं वहाँ सरकार आवश्यक सगठन कायम करे।

शिक्षा मंत्रालय इस बात की समीक्षा करे कि हिंदी प्रचार के लिए जो वर्तमान व्यवस्था है, वह कैसी चल रही है। साथ ही वह समिति द्वारा सुझाई गई दिशाओं में आगे कार्रवाई करे।

(ख) शिक्षा मंत्रालय और वैज्ञानिक अनुसंधान और सांस्कृतिक कार्य मंत्रालय परस्पर मिलकर भारतीय भाषा-विज्ञान, भाषा-शास्त्र और साहित्य-संबंधी अध्ययन और अनुसंधान को प्रोत्साहन देने के लिए समिति द्वारा सुझाए गए तरीके से आवश्यक कार्रवाई करें और विभिन्न भारतीय भाषाओं को परस्पर निकट लाने के लिए और अनुच्छेद 351 में दिए गए निदेश के अनुसार हिंदी का विकास करने के लिए आवश्यक योजना तैयार करें।

7. केन्द्रीय सरकारी विभाग के स्थानीय कार्यालयों के लिए भर्ती : (क) समिति की राय है कि केन्द्रीय सरकारी विभागों के स्थानीय कार्यालय अपने आन्तरिक कामकाज के लिए हिंदी का प्रयोग करें और जनता के साथ व्यवहार में उन प्रदेशों की प्रादेशिक भाषाओं का प्रयोग करें।

अपने स्थानीय कार्यालयों में अंग्रेजी के अतिरिक्त हिंदी का उत्तरोत्तर अधिक प्रयोग करने के वास्ते योजना तैयार करने में केंद्रीय सरकारी विभाग

इस आवश्यकता का ध्यान म रखें कि यथासंभव अधिक से अधिक मात्रा में प्रादेशिक भाषाओ मे काम और विभागी साहित्य उपलब्ध कराके वहां की जनता को पूरी सुविधाएँ प्रदान की जानी चाहिएँ।

(ख) समिति की राय है कि केंद्रीय सरकार के प्रशासनिक अभिकरणों और विभागो मे कर्मचारियों की वर्तमान व्यवस्था पर पुनर्विचार किया जाए, और कर्मचारियों का प्रादेशिक आधार पर विकेंद्रीयकरण कर दिया जाए, इसके लिए भर्ती के तरीको और अर्हताओ मे उपयुक्त सशोधन करना होगा।

स्थानीय कार्यालयो मे जिन कोटियों के पदों पर कार्य करने वालो की बदली मामूली तौर पर प्रदेश के बाहर नही होती उन कोटियो के सबध मे यह सुझाव, कोई अधिवास सबधी प्रतिबंध लगाए बिना, सिद्धांतत मान लिया जाना चाहिए।

(ग) समिति आयोग की इस सिफारिश से सहमत है कि केंद्रीय सरकार के लिए यह विहित कर देना न्यायसम्मत होगा कि उसकी नौकरियो मे लगने के लिए एक अर्हता यह भी होगी कि उम्मीदवार को हिंदी भाषा का सम्यक् ज्ञान हो। पर ऐसा तभी किया जाना चाहिए जबकि इसके लिए काफी पहले से सूचना दे दी गई हो और भाषा योग्यता का विहित स्तर मामूली हो और इस बारे मे जो भी कमी हो उसे सेवाकालीन प्रशिक्षण द्वारा पूरा किया जा सकता हो।

यह सिफारिश अभी हिंदी-भाषी क्षेत्रो के केन्द्रीय सरकारी विभागो मे ही कार्यान्वित की जाए, हिंदीतर भाषा-भाषी क्षेत्रो के स्थानीय कार्यालयो मे नहीं।

(क), (ख) और (ग) मे दिए गए निर्देश भारतीय लेखा-परीक्षा और लेखा विभाग के अधीन कार्यालयो के सम्बन्ध मे लागू न होंगे।

8 प्रशिक्षण सस्थान (क) समिति ने यह सुझाव दिया है कि नेशनल डिफेंस एकेडेमी जैसे प्रशिक्षण सस्थानो मे शिक्षा का माध्यम अंग्रेजी ही बना रहे किंतु शिक्षा-सम्बन्धी कुछ या सभी प्रयोजनों के लिए माध्यम के रूप मे हिंदी का प्रयोग शुरू करने के लिए उचित कदम उठाए जाएँ।

रक्षा मत्रालय अनुदेश पुस्तिकाओ इत्यादि के हिंदी प्रकाशन आदि के रूप में समुचित प्रारंभिक कार्रवाई करें, ताकि जहाँ भी व्यवहार्य हो, वहाँ शिक्षा के माध्यम के रूप में हिंदी का प्रयोग सुगम हो जाए।

(ख) समिति ने सुझाव दिया है कि प्रशिक्षण सस्थानो मे प्रवेश के लिए अंग्रेजी और हिंदी दोनो ही परीक्षा के माध्यम हो, किंतु परीक्षार्थियों को यह विकल्प रहे कि वे सब या कुछ परीक्षा-पत्रों के लिए उनमें से किसी एक भाषा

को चुन लें और एक विशेष समिति यह जाँच करने के लिए नियुक्त की जाए कि नियत कोटा-प्रणाली अपनाए बिना प्रादेशिक भाषाओं का प्रयोग परीक्षा के माध्यम के रूप में कहाँ तक शुरू किया जा सकता है।

रक्षा मंत्रालय को चाहिए कि वह प्रवेश परीक्षाओं में वैकल्पिक माध्यम के रूप में हिंदी का प्रयोग शुरू करने के लिए आवश्यक कार्रवाई करे और कोई नियत कोटा प्रणाली अपनाए बिना परीक्षा के माध्यम के रूप में प्रादेशिक भाषाओं का प्रयोग आरंभ करने के प्रश्न पर विचार करने के लिए एक विशेषज्ञ समिति नियुक्त करे।

9. अखिल भारतीय सेवाओं और उच्चतर केंद्रीय सेवाओं में भर्ती : (क) परीक्षा का माध्यम : समिति की राय है कि (i) परीक्षा का माध्यम अंग्रेज़ी बना रहे और कुछ समय पश्चात् हिंदी वैकल्पिक माध्यम के रूप में अपना ली जाए। उसके बाद जब तक आवश्यक हो, अंग्रेजी और हिंदी दोनों ही परीक्षार्थी के विकल्पानुसार परीक्षा के माध्यम के रूप में अपनाने की छूट हों; और (ii) किसी प्रकार की नियत कोटा-प्रणाली अपनाए बिना परीक्षा के माध्यम के रूप में विभिन्न प्रादेशिक भाषाओं का प्रयोग शुरू करने की व्यवहार्यता की जांच करने के लिए एक विशेषज्ञ समिति नियुक्त की जाए।

कुछ समय के पश्चात् वैकल्पिक माध्यम के रूप में हिंदी का प्रयोग शुरू करने के लिए संघ लोक सेवा आयोग के साथ परामर्श करके गृह मंत्रालय आवश्यक कार्रवाई करे। वैकल्पिक माध्यम के रूप में विभिन्न प्रादेशिक भाषाओं का प्रयोग करने से गम्भीर कठिनाइयाँ पैदा होने की संभावना है, इसलिए वैकल्पिक माध्यम के रूप में विभिन्न प्रादेशिक भाषाओं का प्रयोग शुरू करने की व्यवहार्यता की जाँच करने के लिए विशेषज्ञ समिति नियुक्त करना आवश्यक नहीं है।

(ख) भाषा विषयक प्रश्न-पत्र : समिति की राय है कि सम्यक् सूचना के बाद समान स्तर के दो अनिवार्य प्रश्न-पत्र होने चाहिए जिनमें से एक हिंदी का और दूसरा हिंदी से भिन्न किसी भारतीय भाषा का होना चाहिए और परीक्षार्थी को यह स्वतंत्रता होनी चाहिए कि वह इनमें से किसी एक को चुन लें।

अभी केवल एक ऐच्छिक हिंदी परीक्षा-पत्र शुरू किया जाए। प्रतियोगिता के फल पर चुने गये जो परीक्षार्थी इस परीक्षा-पत्र में उत्तीर्ण हो गये हों, उन्हे भर्ती के बाद जो विभागीय हिंदी परीक्षा देनी होती है, उसमे बैठने और उसमें उत्तीर्ण होने की शर्त से छूट दे दी जाए।

10. अंक : जैसा कि समिति का सुझाव है, केंद्रीय मंत्रालयों का हिंदी

प्रकाशनो से अन्तर्राष्ट्रीय अको के अतिरिक्त देवनागरी अकों के प्रयोग के सबध मे एक आधारभूत नीति अपनाई जाए, जिसका निर्धारण इस आधार पर किया जाए कि वे प्रकाशन किस प्रकार की जनता के लिए है और उसकी विषयवस्तु क्या है। वैज्ञानिक, औद्योगिकीय और सांख्यिकीय प्रकाशनो मे, जिसमे केन्द्रीय सरकार का बजट-सबधी साहित्य भी शामिल है, बराबर अतर्राष्ट्रीय अको का प्रयोग किया जाए।

11 अधिनियमो, विधेयको इत्यादि की भाषा (क) समिति ने राय दी है कि ससदीय विधियाँ अग्रेजी मे बनती रहे किन्तु उनका प्रामाणिक हिंदी अनुवाद उपलब्ध कराया जाए।

ससदीय विधियाँ अग्रेजी मे बनती रहे पर उनके प्रामाणिक हिंदी अनुवाद की व्यवस्था करने के वास्ते विधि मत्रालय आवश्यक विधेयक उचित समय पर पेश करे। ससदीय विधियो का प्रादेशिक भाषाओ मे अनुवाद कराने का प्रबध भी विधि मत्रालय करे।

(ख) समिति ने राय जाहिर की है जहाँ कहीं राज्य विधान मण्डल मे पेश किए गए विधेयको या पास किए गए अधिनियमो का मूल पाठ हिंदी मे भिन्न किसी भाषा मे है, वहाँ अनुच्छेद 348 के खण्ड (3) के अनुसार अग्रेजी अनुवाद के अलावा उसका हिंदी अनुवाद भी प्रकाशित किया जाए।

राज्य की राजभाषा मे पाठ के साथ-साथ राज्य विधेयको, अधिनियमो और अन्य सांविधिक लिखतो के हिंदी अनुवाद के प्रकाशन के लिए आवश्यक विधेयक उचित समय पर पेश किया जाए।

12 उच्चतम न्यायालय और उच्च न्यायालय की भाषा राजभाषा आयोग ने सिफारिश की थी कि जहाँ तक उच्चतम न्यायालय की भाषा का सवाल है, उसकी भाषा इस परिवर्तन का समय आने पर अन्तत हिंदी होनी चाहिए। समिति ने यह सिफारिश मान ली है।

आयोग ने उच्च न्यायालयो की भाषा के विषय मे प्रादेशिक भाषाओ और हिंदी के पक्ष विपक्ष मे विचार किया और सिफारिश की कि जब भी इस परिवर्तन का समय आए, उच्च न्यायालयो के निर्णयो, आज्ञप्तियो (डिक्रियो) और आदेशो की भाषा सब प्रदेशो मे हिंदी होनी चाहिए, किंतु समिति की राय है कि राष्ट्रपति की पूर्व सम्मति से आवश्यक विधेयक पेश करके यह व्यवस्था करने की गुंजाइश रहे कि उच्च न्यायालयो के निर्णयों, आज्ञप्तियो (डिक्रियो) और आदेशो के लिए उच्च न्यायालय मे हिंदी और राज्यो की राजभाषाएँ विकल्पत प्रयोग मे लाई जा सकेंगी।

समिति की यह राय है कि उच्चतम न्यायालय अंततः अपना सब काम हिंदी में करे, यह सिद्धांत रूप में स्वीकार्य है और इसके संबंध में समुचित कार्रवाई उसी समय अपेक्षित होगी जबकि इस परिवर्तन के लिए समय आ जाएगा।

जैसा कि आयोग की सिफ़ारिश की तरमीम करते हुए समिति ने सुझाव दिया है, उच्च न्यायालयों की भाषा के विषय में यह व्यवस्था करने के लिए आवश्यक विधेयक विधि मंत्रालय उचित समय पर राष्ट्रपति की पूर्व सम्मति से पेश करे कि निर्णयों, आज्ञप्तियों (डिक्रियों) और आदेशों के प्रयोजनों के लिए हिंदी और राज्यों की राजभाषाओं का प्रयोग विकल्पतः किया जा सकेगा।

13. विधि क्षेत्र में हिंदी में काम करने के लिए आवश्यक प्रारंभिक कदम : मानक विधि-शब्दकोश तैयार करने, केन्द्र तथा राज्य के विधान-निर्माण से संबंधित सांविधिक ग्रंथ का अधिनियमन करने, विधि शब्दावली तैयार करने की योजना बनाने और जिस संक्रमण काल में सांविधिक ग्रंथ और साथ ही निर्णय-विधि अंशतः हिंदी और अंशतः अंग्रेजी में होंगे, उस अवधि में प्रारंभिक कदम उठाने के बारे में आयोग ने जो सिफारिश की थी उन्हें समिति ने मान लिया है। साथ ही समिति ने यह सुझाव भी दिया है कि संविधियों के अनुवाद और विधि शब्दावली और कोशों से संबंधित संपूर्ण कार्यक्रम की समुचित योजना बनाने और उसे कार्यान्वित करने के लिए भारत की विभिन्न राष्ट्र-भाषाओं का प्रतिनिधित्व करने वाले विशेषज्ञों का एक स्थायी आयोग या इस प्रकार का कोई उच्च स्तरीय निकाय बनाया जाए। समिति ने यह राय भी ज़ाहिर की है कि राज्य सरकारों को परामर्श दिया जाए कि वे भी केंद्रीय सरकार से राय लेकर इस संबंध में आवश्यक कार्रवाई करें।

समिति के सुझाव को दृष्टि में रखकर विधि मंत्रालय (यथासंभव सब भारतीय भाषाओं में प्रयोग के लिए) सर्वमान्य विधि शब्दावली की तैयारी और संविधियों के हिंदी में अनुवाद-संबंधी पूरे काम के लिए समुचित योजना बनाने और पूरा करने के लिए विधि विशेषज्ञों के एक स्थायी आयोग का निर्माण करे।

14. हिंदी के प्रगामी प्रयोग के लिए योजना या कार्यक्रम : समिति ने यह सुझाव दिया है कि संघ की राजभाषा के रूप में हिंदी के प्रगामी प्रयोग की योजना संघ सरकार बनाए और कार्यान्वित करे। संघ के राजकीय प्रयोजनों में से किसी के लिए अंग्रेजी के प्रयोग पर इस समय कोई रोक न लगाई जाए।

तदनुसार गृह मंत्रालय एक योजना या कार्यक्रम तैयार करे, उसे अमल में लाने के संबंध में आवश्यक कार्रवाई करे। इस योजना का उद्देश्य होगा संघीय

प्रशासन मे बिना कठिनाई के हिंदी के प्रगामी प्रयोग के लिए प्रारंभिक कदम उठाना और संविधान के अनुच्छेद 343 के खण्ड (2) मे किए गए उपबंध के अनुसार संघ के विभिन्न कार्यों मे अंग्रेज़ी के साथ-साथ हिंदी के प्रयोग को बढ़ावा देना। अंग्रेज़ी के अतिरिक्त हिंदी का प्रयोग कहाँ तक किया जा सकता है यह बात इन प्रारंभिक कार्रवाइयों की सफलता पर बहुत कुछ निर्भर करेगी। इस बीच प्राप्त अनुभव के आधार पर अंग्रेज़ी के अतिरिक्त हिंदी के वास्तविक प्रयोग की योजना का समय-समय पर पुनर्विचार और उसमे हेरफेर करना होगा।

परिशिष्ट VIII
संघ राज्य क्षेत्र (हिंदी और अन्य भाषाओं का प्रयोग) विधेयक 1978

संघ राज्यक्षेत्रों की विधान सभाओं द्वारा पारित अधिनियमों और संघ राज्यक्षेत्रों के प्रशासकों द्वारा प्रख्यापित अध्यादेशों के प्राधिकृत हिंदी अनुवाद के लिए और संघ राज्यक्षेत्रों में मुख्य स्थान रखने वाले उच्च न्यायालयों में कतिपय प्रयोजनों के लिए हिंदी या संघ राज्यक्षेत्रों की राजभाषाओं के वैकल्पिक प्रयोग के लिए उपबन्ध करने के लिए विधेयक

भारत गणराज्य के उन्तीसवें वर्ष में संसद् द्वारा निम्नलिखित रूप में यह अधिनियमित हो :—

संक्षिप्त नाम और प्रारंभ

1. (1) इस अधिनियम का संक्षिप्त नाम संघ राज्यक्षेत्र (हिंदी और अन्य भाषाओं का प्रयोग) अधिनियम, 1978 है।

(2) यह उस तारीख को प्रवृत्त होगा, जिसे केंद्रीय सरकार, राजपत्र में अधिसूचना द्वारा, नियत करे और विभिन्न संघ राज्यक्षेत्रों के लिए और इस अधिनियम के विभिन्न उपबन्धों के लिए विभिन्न तारीखें नियत की जा सकेंगी।

परिभाषाएँ : 2. इस अधिनियम में, जब तक कि सन्दर्भ से अन्यथा अपेक्षित न हो :

(क) 'प्रशासक' से संविधान के अनुच्छेद 239 के अधीन राष्ट्रपति द्वारा नियुक्त संघ राज्यक्षेत्र का प्रशासक अभिप्रेत है;

(ख) किसी संघ राज्यक्षेत्र के और इस अधिनियम के किसी उपबन्ध के संबंध में 'नियत दिन' से वह दिन अभिप्रेत है, जिस दिन से उस संघ राज्यक्षेत्र में वह उपबंध प्रवृत्त होता है; 5

(ग) 'हिंदी' से वह हिंदी अभिप्रेत है, जिसकी लिपि देवनागरी है;

(घ) 'संघ राज्यक्षेत्र' से विधान सभा वाला संघ राज्यक्षेत्र अभिप्रेत

है और इसके अतर्गत दिल्ली सघ राज्यक्षेत्र भी है ।

कतिपय मामलों मे सघ राज्य-क्षेत्रों की विधान सभाओ द्वारा पारित अधिनियमो और प्रशासकों द्वारा प्रख्यापित अध्यादेशो का प्राधिकृत हिंदी अनुवाद

3 जहाँ सघ राज्यक्षेत्र की विधान सभा द्वारा पारित 10 अधिनियम या सघ राज्यक्षेत्र के प्रशासक द्वारा प्रख्यापित अध्यादेश हिंदी से अन्य भाषा मे हैं, वहाँ उनका हिंदी अनुवाद उस सघ राज्यक्षेत्र के राजपत्र मे, उस सघ राज्यक्षेत्र के प्रशासक के प्राधिकार से, नियत दिन को या उसके पश्चात् प्रकाशित किया जा सकेगा और ऐसे किसी अधिनियम या अध्यादेश का हिंदी मे अनुवाद हिंदी भाषा मे उसका प्राधिकृत पाठ समझा जाएगा । 15

निर्णयों आदि मे हिंदी या अन्य राजभाषाओं का वैकल्पिक प्रयोग

4 (1) नियत दिन से ही या तत्पश्चात् किसी भी दिन राष्ट्रपति हिंदी या सघ राज्यक्षेत्र की राजभाषा का प्रयोग, उस सघ राज्यक्षेत्र मे मुख्य स्थान रखने वाले उस सघ राज्यक्षेत्र के उच्च न्यायालय की कार्यवाहियो मे, प्राधिकृत कर सकेगा ।

(2) नियत दिन से ही या तत्पश्चात् किसी भी दिन से राष्ट्रपति या 10 उस सघ राज्यक्षेत्र की राजभाषा का प्रयोग, अंग्रेजी भाषा के अतिरिक्त उस सघ राज्यक्षेत्र में मुख्य स्थान रखने वाले उस सघ राज्यक्षेत्र के उच्च

न्यायालय द्वारा पारित या दिए गए किसी निर्णय, डिक्री या आदेश के 20
प्रयोजनों के लिए प्राधिकृत कर सकेगा और जहाँ कोई निर्णय, डिक्री या
आदेश (अंग्रेज़ी भाषा से अन्य) ऐसी किसी भाषा मे पारित किया या
दिया जाता है, वहाँ उसके साथ-साथ उच्च न्यायालय के प्राधिकार से
निकाला गया अंग्रेज़ी भाषा में उसका अनुवाद भी होगा। 25

स्पष्टीकरण : इस धारा में, 'उच्च न्यायालय' अभिव्यक्ति के अंतर्गत गोआ, दमण और दीव संघ राज्यक्षेत्र के लिए न्यायिक आयुक्त का न्यायालय भी है।

उद्देश्यों और कारणों का कथन

राजभाषा अधिनियम, 1963 की धारा 7 के साथ पठित संविधान के अनुच्छेद 348 (2) के अधीन किसी राज्य का राज्यपाल, राष्ट्रपति की पूर्व सम्मति से, हिंदी या उस राज्य की राजभाषा का प्रयोग, अंग्रेज़ी भाषा के अतिरिक्त उस राज्य के उच्च न्यायालय की कार्यवाहियों, निर्णयों आदि के प्रयोजन के लिए, प्राधिकृत कर सकेगा। समान रूप से राजभाषा अधिनियम, 1963 की धारा 6 में उपबन्ध किया गया है कि जहाँ किसी राज्य के विधान मण्डल ने, उस राज्य के विधान मण्डल द्वारा पारित अधिनियमों में या उस राज्य के राज्यपाल द्वारा प्रख्यापित अध्यादेशों मे प्रयोग के लिए, हिंदी से भिन्न कोई भाषा विहित की है, वहाँ संविधान के अनुच्छेद 348 के खण्ड (3) द्वारा अपेक्षित, अंग्रेज़ी भाषा में उसके अनुवाद के अतिरिक्त उसका हिंदी में अनुवाद उस राज्य के शासकीय राजपत्र में, उस राज्य के राज्यपाल के प्राधिकार से, प्रकाशित किया जा सकेगा, और ऐसी दशा में ऐसे किसी अधि-नियम, या अध्यादेश का हिंदी में अनुवाद हिन्दी भाषा में उसका प्राधिकृत पाठ समझा जाएगा। ये उपबन्ध संघ राज्यक्षेत्रों को लागू नहीं है क्योंकि इन उपबन्धों में राज्यपाल के प्रति निर्देश के अन्तर्गत संघ राज्यक्षेत्र का प्रशासक नहीं है। इसलिए यह प्रस्थापित किया जाता है कि राजभाषा अधिनियम, 1963 की धारा 6 और 7 के आधार पर पृथक् विधान अधिनियमित किया जाए जिससे कि संघ राज्यक्षेत्रों की विधान सभाओं द्वारा पारित अधिनियमों और संघ राज्यक्षेत्रों के प्रशासकों द्वारा प्रख्यापित अध्यादेशो के प्राधिकृत हिंदी अनुवाद के लिए और उस संघ राज्यक्षेत्र मे मुख्य स्थान रखने वाले उच्च न्यायालय में कतिपय प्रयोजनों के लिए हिंदी या उस संघ राज्यक्षेत्र की राज-भाषा के वैकल्पिक प्रयोग के लिए उपबन्ध किया जा सके।

इस विधान का उद्देश्य उपर्युक्त उद्देश्यों को प्रभावी करना है।

वित्तीय ज्ञापन

विधेयक के खण्ड 3 का उद्देश्य हिंदी से भिन्न किसी भाषा में संघ राज्यक्षेत्र की विधान सभा द्वारा पारित अधिनियमो के या संघ राज्यक्षेत्र के प्रशासक द्वारा प्रख्यापित अध्यादेशो के, हिंदी मे अनुवाद का राजपत्र मे प्रकाशन करने के लिए उपबन्ध करना है। इस प्रकार विधेयक का खण्ड 4 कार्यवाहियो मे और संघ राज्यक्षेत्र के उच्च न्यायालय द्वारा पारित या किये गये किसी निर्णय, डिक्री या आदेश के प्रयोजनो के लिए हिंदी के या संघ राज्यक्षेत्र की राजभाषा के उपयोग के लिए उपबन्ध करता है। इसमे कुछ आवर्ती व्यय होने की सम्भावना है किन्तु ऐसा व्यय कितना होगा, इस समय वह बताना सम्भव नही है।

कोई अनावर्ती व्यय होने की सम्भावना नही है।

मंगीकार लोक सभा बहस, 1978

परिशिष्ट IX

भारतीय संविधान की आठवीं अनुसूची में दर्ज भाषाओं में श्रेष्ठ प्रकाशनों के लिए सन् 1955 से 1980 तक दिए गए साहित्य अकादमी पुरस्कार

क्र.सं.	भाषाओं के नाम	प्राप्त पुरस्कारों की संख्या	
		(1955-77)	(1978-80)
1.	असमिया	14	3
2.	उड़िया	17	3
3.	उर्दू	17	3
4.	कन्नड़	21	3
5.	कश्मीरी	9	2
6.	गुजराती	19	3
7.	तमिल	17	3
8.	तेलुगु	17	2
9	पंजाबी	17	3
10.	बंगला	20	3
11.	मराठी	22	3
12.	मलयालम	19	3
13.	संस्कृत	11	2
14.	सिंधी	11	3
15.	हिंदी	22	3

संकलित : साहित्य अकादमी सामान्य सूचना एवं वार्षिक रिपोर्ट, 1977, 1979, 1980, नई दिल्ली; पृष्ठ 75 से 99, 45 से 69 एवं 44 से 65 तक क्रमशः ।

परिशिष्ट X

संविधान की आठवीं अनुसूची में शामिल न की गई भारतीय भाषाओं तथा अंग्रेजी में श्रेष्ठ प्रकाशनों के लिए सन् 1955 से 1980 तक दिए गए साहित्य अकादमी पुरस्कार

क्र म	भाषाओं के नाम	पुरस्कारों की संख्या	
		(1955-77)	(1978-80)
1	अंग्रेजी	9	3
2	कोंकणी	1	3
3	डोगरी	7	3
4	नेपाली	1	3
5	मणिपुरी	4	2
6	मैथिली (1966 से)	9	3
7	राजस्थानी (1974 से)	4	3

संकलित : साहित्य अकादमी सामान्य सूचना एवं वार्षिक रिपोर्ट, 1977, 1979, 1980, नई दिल्ली। पृष्ठ 75 से 99, 45 से 69, 44 से 65 तक क्रमश।

परिशिष्ट XI

विवरण I

संसार की राजभाषाएं और इन्हें प्रयोग करने वाले एक भाषी देशों की संख्या

क्र.स.	भाषा	एक भाषी देशों की संख्या जिनमें कालम दो की भाषा राजभाषा है।	कालम (3) में अंकित देशों की जन संख्या (लाखों में)
(1)	(2)	(3)	(4)
1.	अंग्रेजी	26	4002.5
2.	अमहारिक	1	252.5
3.	अरबी/क्लासिकल अरबी	15	
4.	अल्बानी	1	21 9
5.	आइसलैंडिक	1	2.1
6.	इतालवी	3	
7.	उर्दू	1	621.7
8.	कतालान	1	0.2
9.	कम्बोडियन/अथवा खमेर	1	74.5
10	कोरियन	2	461.1
11.	खलखा मंगोलियन	1	12.8
12.	क्वोक-न्गू	2	404.1
13.	चीनी	2	
14.	जर्मन	4	858.3
15.	जापानी	1	1066.0
16.	टोंगन	1	0.9
17.	डच	2	136.0

□□. उपर्युक्त सूची में संयुक्त राष्ट्र के सदस्य-देशों (1-1-76 की स्थिति के अनुसार) तथा अन्य ऐसे देशों को शामिल किया गया है, जिनके सम्बन्ध में प्रामाणिक सूचना उपलब्ध थी।

(1)	(2)	(3)	(4)
18	डिवही	1	1 1
19	डैनिश	1	49 6
20	डयाधा	1	1 5
21	तुर्की	1	361 1
22	थाई	1	373 8
23	नार्विजियन	1	39 0
24	नेपाली	1	115 5
25	पुर्तगाली	2	1047 1
26	पालिश	1	328 0
27	फ्रेंच/फ्रांसीसी	16	1160 1
28	फारसी	1	297 8
29	फिनिश	1	46 2
30	बर्मी	1	282 0
31	बुल्गेरियन	1	85 4
32	भाषा इण्डोनेशियन	1	1178 9
33	मलाय	1	106 7
34	मयार	1	103 7
35	(आधुनिक) यूनानी	1	17 7
36	रूसी	1	2450 8
37	रोमानियन	1	204 7
38	सेर्बो क्रोएशियन	1	205 2
39	सिंहली	1	127 1
40	स्पेनिश	19	2967 6
41	स्वीडिश	1	81 0
42	इब्रानी	1	30 1

परिशिष्ट XI

विवरण II

अंग्रेजी को राजभाषा के रूप में प्रयोग करने वाले देशों की संख्या

(क) देश जहाँ केवल अंग्रेज़ी राजभाषा है।	26
(ख) देश जहाँ अंग्रेजी और एक अन्य निम्नलिखित भाषा राजभाषा है।	
(i) अंग्रेज़ी और आयरिश	1
(ii) अंग्रेज़ी और नौरूआन	1
(iii) अंग्रेज़ी और फ्रेंच/फ्रांसीसी	2
(iv) अंग्रेज़ी और माल्टीज़	1
(v) अंग्रेज़ी और समाओ	1
(vi) अंग्रेज़ी और सेस्थो	1
(vii) अंग्रेज़ी और स्वाहिली	1
(viii) अंग्रेज़ी और हिंदी	1
द्वि-भाषी देशों की कुल संख्या	9
(ग) त्रि-भाषी देश जिनमे अंग्रेजी तथा दो अन्य भाषाएँ (टागालोग और स्पेनिश), राजभाषाएं है।	1
(घ) चतुर्भाषी देशों की संख्या, जिनमे अंग्रेजी, और चीनी (मेंडारिन), तमिल तथा मलाय राजभाषाएँ हैं।	1

परिशिष्ट XI

विवरण III

फ्रांसीसी को राजभाषा के रूप में प्रयोग करने वाले देशों की संख्या

(क) देश जहाँ केवल फ्रांसीसी राजभाषा है।		16
(ख) देश जहाँ फ्रांसीसी और एक अन्य निम्नलिखित भाषा राजभाषा हैं।		
(i) फ्रांसीसी और अंग्रेज़ी	2	
(ii) फ्रांसीसी और अरबी	1	
(iii) फ्रांसीसी और किन्यारवादी	1	
(iv) फ्रांसीसी और किरुन्दी	1	
(v) फ्रांसीसी और मालागासे	1	
(vi) फ्रांसीसी और मोहान कोतूबा	1	
(vii) फ्रांसीसी और लाओ	1	
द्वि-भाषी देशों की कुल संख्या	8	
(ग) त्रि-भाषी देश जिनमें फ्रांसीसी तथा दो अन्य भाषाएँ राजभाषाएँ हैं।		
(i) फ्रांसीसी तथा इतालवी और जर्मन	1	
(ii) फ्रांसीसी तथा जर्मन और डच	1	
त्रि-भाषी देशों की कुल संख्या		2

परिशिष्ट XI

विवरण IV

द्वि-भाषी देशों में अन्य राजभाषाएं

क्रम	भाषाएं	जितने देशों में कालम (2) की भाषाए राजभाषाएं हैं
(1)	(2)	(3)
1.	गौरानी और स्पेनिश	1
2.	चेक और स्लोवाक	1
3.	फ़ारसी और पश्तो	1
4.	यूनानी और तुर्की	1

संकलित : वर्ल्ड मार्क एन्साइक्लोपीडिया आफ़ नेशंस, ग्रंथ 2 से 5 तक, वर्ल्ड मार्क प्रेस, हार्पर एण्ड को., न्यूयार्क, 1971.

परिशिष्ट- XII

राजभाषा (संशोधन) अधिनियम 1967 के संबंध में समाचारपत्रों में प्रकाशित समाचारों का स्थान विवरण

तालिका I

दि हिंदू (अंग्रेजी), दिसंबर 1967

क्रम	वर्ग	अंग्रेजी के पक्ष में	प्रतिशत	हिंदी के पक्ष में	प्रतिशत
(1)	(2)	(3)	(4)	(5)	(6)
1	विद्यार्थी	388 कालम सें मी	6 73	318 कालम सें मी	5 51
2	राजनीतिज्ञ	1224 ,, ,,	21 23	1277 ,, ,,	22 15
3	सरकारी प्रवक्ता	550 ,, ,,	9 44	968 ,, ,,	16 79
4	शिक्षाशास्त्री (उप-कुलपति एव शिक्षा प्रशासक आदि)	157 ,, ,,	2 72	23 ,, ,,	0 39
5	अन्य (सपादकीय और अन्य लेख आदि मिलाकर)	686 ,, ,,	11 90	171 ,, ,,	2 94
कुल	5762 (100%)	3005 ,, ,,	52 12%	2757 ,, ,,	47 87%

तालिका II

हिंदुस्तान (हिंदी), दिसंबर 1967

क्रम	वर्ग	अंग्रेजी के पक्ष में	प्रतिशत	हिंदी के पक्ष में	प्रतिशत
(1)	(2)	(3)	(4)	(5)	(6)
1.	विद्यार्थी	318 कालम सें.मी.	3.4	1521 कालम सें.मी.	16.2
2.	राजनीतिज्ञ	307 ,, ,,	3.3	2694 ,, ,,	28.6
3	सरकारी प्रवक्ता	104 ,, ,,	1.1	768 ,, ,,	8.2
4.	शिक्षाशास्त्री (उप-कुलपति एवम् शिक्षा प्रशासक आदि)	—	—	55 ,, ,,	0.5
5.	अन्य (सम्पादकीय आदि मिलाकर)	13 ,, ,,	0.1	3626 ,, ,,	38.6
कुल : 9406 (100%)		742 ,, ,,	7.9%	8664 ,, ,,	92.1%

(i) संकलित : दि हिंदू और हिंदुस्तान (हिंदी), दिसम्बर 1967

(ii) कालम (3) और (5) मे प्रतिशत के आंकड़े दि हिंदू और हिंदुस्तान (हिंदी) मे इस सम्बन्ध में दिए गए कुल स्थान के हैं।

परिशिष्ट XIII

विवरण I

पांचवीं लोक सभा, 1976 में प्रत्येक राज्य से निर्वाचित विभिन्न राजनीतिक दलों की सदस्य संख्या

क्रम	राज्य	कांग्रेस	साम्यवादी दल (एम)	साम्यवादी	जनसंघ	डी एम के
1	आंध्र प्रदेश	36	1	1	—	—
2	असम	12	—	—	—	—
3	उड़ीसा	14	—	1	—	—
4	उत्तरप्रदेश	71	—	5	4	—
5	कर्नाटक	27	—	—	—	—
6	केरल	6	2	3	—	—
7	गुजरात	12	—	—	—	—
8	जम्मू कश्मीर	5	—	—	—	—
9	तमिलनाडु	8	—	4	—	16
10	त्रिपुरा	—	2	—	—	—
11	नागालैंड	—	—	—	—	—
12	पंजाब	9	—	1	—	—
13	पश्चिम बंगाल	13	20	3	—	—
14	बिहार	35	—	5	2	—
15	मणिपुर	2	—	—	—	—
16	मध्यप्रदेश	22	—	—	9	—
17	महाराष्ट्र	39	—	1	—	—
18	मेघालय	—	—	—	—	—
19	राजस्थान	15	—	—	2	—
20	सिक्किम	1	—	—	—	—
21	हिमाचलप्रदेश	3	—	—	—	—
22	हरियाणा	6	—	—	1	—

संघराज्य क्षेत्र

क्रम	राज्य	कांग्रेस	साम्यवादी दल	(एम) साम्यवादी	जनसंघ	डी.एम.के.
1.	अंडमान और निकोबार द्वीप	1	—	—	—	—
2.	अरुणाचल प्रदेश	1	—	—	—	—
3.	गोआ, दमन, दीव	1	—	—	—	—
4.	चन्डीगढ़	1	—	—	—	—
5.	दादर, नागर हवेली	1	—	—	—	—
6.	दिल्ली	6	—	—	—	—
7.	पांडिचेरी	—	—	—	—	—
8.	मिझोरम	1	—	—	—	—
9.	लक्षद्वीप	1	—	—	—	—
	कुल	349	26	24	18	16

संकलित : लोक सभा सदस्यों की सूची, लोक सभा सचिवालय, मार्च 1976, इस सारणी में केवल उन पाँच पार्टियों की सदस्य-संख्या दर्शायी गयी है, जिनके सदस्य लोक सभा में सर्वाधिक थे।

परिशिष्ट XIII
विवरण II
छठी लोक सभा, 1977 में प्रत्येक राज्य से निर्वाचित विभिन्न राजनीतिक दलों की सदस्य संख्या

क्रम	राज्य	कुल स्थान	कांग्रेस	जनता सी एफ डी	साम्यवादी	साम्यवादी (एम)	अन्य	स्वतन्त्र
1	आन्ध्रप्रदेश	42	42	1	—	—	—	—
2	असम	14	10	3	—	—	—	1
3	उड़ीसा	21	4	15	—	1	—	1
4	उत्तरप्रदेश	85	—	85	—	—	—	—
5	कर्नाटक	28	26	2	—	—	—	—
6	केरल	20	11	—	4	—	5	—
7	गुजरात	26	10	16	—	—	—	—
8	जम्मू कश्मीर	6	3	—	—	—	2	1
9	तमिलनाडु	39	14	3	3	—	19	—
10	त्रिपुरा	2	1	1	—	—	—	—
11	नागालैंड	1	—	—	—	—	1	—
12	पंजाब	13	—	3	—	1	9	—
13	पश्चिम बंगाल	42	3	15	—	17	6	1
14	बिहार	54	—	54	—	—	—	—
15	मणिपुर	2	2	—	—	—	—	—
16	मध्यप्रदेश	40	1	37	—	—	1	1
17	महाराष्ट्र	48	20	19	—	3	6	—
18	मेघालय	2	1	—	—	—	1	—
19	राजस्थान	25	1	24	—	—	—	—
20	सिक्किम	1	1	—	—	—	—	—
21	हिमाचलप्रदेश	4	—	4	—	—	—	—
22	हरियाणा	10	—	10	—	—	—	—

संघ राज्य-क्षेत्र

1.	अण्डमान और निकोबार द्वीप	1	1	—	—	—	—	—
2	अरुणाचलप्रदेश	2	1	—	—	—	—	1
3	गोवा-दमन-दीव	2	1	—	—	—	1	—
4.	चण्डीगढ़	1	—	1	—	—	—	—
5.	दादर-नगर हवेली	1	1	—	—	—	—	—
6.	दिल्ली	7	—	7	—	—	—	—
7.	पांडिचेरी	1	—	—	—	—	1	—
8	मिज़ोरम	1	—	—	—	—	—	1
9.	लक्षद्वीप	1	1	—	—	—	—	—
	कुल	542	154	300	7	22	52	7

(i) अन्य दलों के अंतर्गत निम्न दलो के सदस्य भी शामिल हैं.

अकाली दल	8
डी. एम. के.	1
ए. आई.—ए. डी. एम. के.	19
मुस्लिम लीग	2

(ii) उपर्युक्त स्थिति चुनावों के तुरंत बाद की है.

परिशिष्ट XIII

विवरण III

क्र सं	राज्य	जनता	लोकदल	कुल	सी पी आई	कांग्रेस (इ)	कांग्रेस (स)	सी पी आई (एम)	रिक्त	बी जे पी	अन्य दल	डी एम के
1	आंध्रप्रदेश	—	—	42	—	41	1	—	—	—	—	—
2	असम	—	—	14	—	2	—	—	12	—	—	—
3	बिहार	2	5	54	5	32	5	—	—	2	3	—
4	गुजरात	1	—	26	—	25	—	—	—	—	—	—
5	हरियाणा	—	3	10	—	5	—	—	—	1	1	—
6	हिमाचलप्रदेश	—	—	4	—	4	—	—	—	—	—	—
7	जम्मू कश्मीर	—	—	6	—	2	—	—	—	—	4	—
8	कर्नाटक	1	—	28	—	27	—	—	—	—	—	—
9	केरल	—	—	20	2	4	3	6	—	—	5	—
10	मध्यप्रदेश	—	—	40	—	34	—	—	1	4	1	—
11	महाराष्ट्र	6	—	48	—	38	1	—	—	—	—	—
12	मणिपुर	—	—	2	1	1	—	—	—	—	—	—
13	मेघालय	—	—	2	—	1	—	—	1	—	—	—
14	नागालैण्ड	—	—	1	—	1	—	—	—	—	—	—
15	उड़ीसा	—	1	21	—	20	—	—	—	—	—	—
16	पंजाब	—	—	13	—	11	—	—	—	—	1	—
17	राजस्थान	1	2	25	—	17	1	—	1	3	—	—

18.	सिक्किम	—	—	1	—	1	—	—	—	—	—	—
19	तमिलनाडु	—	—	39	—	20	—	—	—	—	3	16
20	त्रिपुरा	—	—	2	—	—	2	—	—	—	—	—
21.	उत्तरप्रदेश	1	22	85	1	47	—	—	1	1	12	—
22.	पश्चिम बंगाल	—	—	42	3	4	—	28	—	—	7	—
23.	अण्डमान निकोबार	—	—	1	—	1	—	—	—	—	—	—
24.	अरुणाचलप्रदेश	—	—	2	—	2	—	—	—	—	—	—
25.	चण्डीगढ़	—	—	1	—	1	—	—	—	—	—	—
26.	दादर-नगर हवेली	—	—	1	—	1	—	—	—	—	—	—
27.	दिल्ली	—	—	7	—	6	—	—	—	—	—	—
28.	गोआ-दमन-दीव	—	—	2	—	2	—	—	—	1	—	—
29.	लक्षद्वीप	—	—	1	—	1	—	—	—	—	—	—
30.	मिज़ोरम	—	—	1	—	—	—	—	—	—	1	—
31.	पाण्डिचेरी	—	—	1	—	1	—	—	—	—	—	—
32.	ऐंग्लो इंडियन	—	—	2	—	—	—	—	—	—	2	—
		12	33	544	12	352	12	36	17	14	51	16

परिशिष्ट XIV

सघ लोक सेवा मायोग द्वारा सचालित परीक्षाओ मे प्रत्याशियो की सख्या

क्रम	वष	परीक्षाओ की सख्या	नौकरियो की सख्या	उम्मीदवार	परीक्षा मे बैठने वाले प्रत्याशी	नियुक्ति के लिए सस्तुत प्रत्याशी	टिप्पणी
1	1958 59	29 (6)	1 885	62,704	43,730	8,527	मायाग की नौवी रिपोर्ट
2	1959 60	93 (72)	1,559	72,726	50,146	6,231	,, दसवी रिपोट
3	1960 61	73 (51)	1 670	34,349	23,072	3,298	, ग्यारहवी रिपोट
4	1961 62	55 (36)	2 672	36 985	24,535	2 343	,, बारहवी रिपोट
5	1962 63	58 (35)	4,705	52,429	33,573	2 709	, तेरहवी रिपोट
6	1963 64	57 (35)	4,074	33,287	19,515	2,953	,, चौदहवी रिपोट
7	1964-65	57 (36)	4 612	28,848	19,384	3,286	,, प द्रहवी रिपोर्ट
8	1965 66	57 (36)	4,132	33,087	23,272	4,859	,, सोलहवी रिपोट
9	1966-67	58 (38)	3,223	40,532	25,377	4 541	,, सत्रहवी रिपोट
10	1967-68	64 (39)	3,092	56,275	36 558	4,530	,, अट्ठारहवी रिपोर्ट
11	1968 69	58 (37)	3,314	58,948	38,370	4,543	,, उन्नीसवी रिपोर्ट
12	1969-70	62 (37)	3 707	72 419	45,604	3,946	,, बीसवी रिपोट
13	1970 71	29 (6)	4 457	69 612	43,441	4,187	,, इक्कीसवी रिपोट
14	1971-72	28	2 592	63,617	36,865	2 040	,, बाइसवी रिपोट
15	1972-73	26	2 719	70 961	38 570	2 636	,, तेइसवी रिपोर्ट
16	1973 74	25	3 006	74 576	42 887	2 342	,, चौबीसवी रिपोट

17.	1974-75	19	3,110	88,566	47,965	2,611	आयोग की पच्चीसवीं रिपोर्ट
18.	1975-76	14	2,870	1,01,632	57,290	1,857	,, छब्बीसवी रिपोर्ट
19.	1976-77	15	3,931	1,36,677	94 071	2,846	,, सत्ताइसवीं रिपोर्ट
20.	1977-78	12	3,222	1,24,407	74,413	2,512	,, अठाइसवीं रिपोर्ट
21.	1978-79	15	4,673	1,39,794	98.576	4,391	,, उन्तीसवीं रिपोर्ट

1. अगीकार : स्रोत, संघ लोक सेवा आयोग की वार्षिक रिपोर्टें।

2 तालिका मे दो प्रकार की नौकरियों के आँकड़े हैं—एक वे जिनमें भर्ती केवल लिखित परीक्षाओं के आधार पर हुई और दूसरी जिनके लिए भर्ती लिखित परीक्षा और साक्षात्कार, दोनों के, आधार पर हुई। तालिका में पारीक्षणिक और टाइपिंग तथा आशुलिपि की परीक्षाओं के विद्यार्थी भी शामिल हैं।

3. कोष्ठक में दिए गए आकड़े टंकण-परीक्षाओं की गिनती दर्शाते है।

परिशिष्ट XV

संविधान की आठवीं अनुसूची में दर्ज भाषाओं का पद-परिसर

क्रम	भाषा	(क) पूर्वी क्षेत्र					(ख) उत्तरी क्षेत्र					(ग) दक्षिणी क्षेत्र					(घ) पश्चिमी क्षेत्र					पद-परिसर का जोड़				
		1 2	3 6	7 10	11 15	शून्य	1 2	3 6	7 10	11 15	शून्य	1 2	3 6	7-10	11 15	शून्य	1 2	3 6	7 10	11 15	शून्य	1-2	3 6	7-10	11 15	शून्य
1	असमिया	3	2	1	4	—	—	—	—	8	—	—	—	—	5	1	—	—	—	4	1	3	2	1	21	2
2	उड़िया	1	6	3	—	—	—	1	3	4	—	—	1	—	4	1	—	1	—	4	—	1	9	6	12	1
3	उर्दू	1	4	4	1	—	1	7	—	—	—	2	4	—	—	—	1	4	—	—	—	5	19	4	1	—
4	कन्नड़	—	—	2	8	—	—	—	—	8	—	1	4	1	—	—	—	2	2	1	—	1	6	5	17	—
5	कश्मीरी	—	—	—	10	—	1	1	2	4	—	—	—	—	4	2	—	—	—	4	1	1	1	2	23	3
6	गुजराती	—	1	4	5	—	—	1	5	2	—	—	2	4	—	—	3	1	1	—	—	3	5	14	9	—
7	तमिल	1	1	8	—	—	—	4	4	—	—	4	2	—	—	—	—	—	4	1	—	5	7	16	1	—
8	तेलुगु	1	5	4	—	—	—	—	7	1	—	2	3	1	—	—	—	1	4	—	—	3	9	16	1	—
9	पंजाबी	—	8	2	—	—	7	1	—	—	—	—	—	6	—	—	—	1	3	1	—	7	10	11	1	—
10	बंगला	8	2	—	—	—	—	6	2	—	—	—	—	2	4	—	—	1	2	2	—	8	9	6	6	—
11	मराठी	—	—	8	2	—	—	2	6	—	—	—	4	2	—	—	4	1	—	—	—	4	7	16	2	—
12	मलयालम	—	6	4	—	—	—	5	3	—	—	3	2	1	—	—	—	2	3	—	—	3	15	11	—	—
13	संस्कृत	—	—	—	4	6	—	—	—	7	1	—	—	—	5	1	—	—	—	4	1	—	—	—	20	9
14	सिंधी	—	—	—	10	—	—	3	—	5	—	—	—	3	2	1	1	2	1	1	—	1	5	4	18	1
15	हिंदी	5	5	—	—	—	7	1	—	—	—	—	2	4	—	—	1	4	—	—	—	13	12	4	—	—

सदर्भ और टिप्पणियां

1. संकलित : स्रोत : 1971 की जन-संख्या के आकड़े ।

2. इस विवरण मे विभिन्न क्षेत्रों का गठन इस प्रकार है—

(क) पूर्वी क्षेत्र—(1) असम, (2) उड़ीसा, (3) त्रिपुरा, (4) नागालैंड, (5) पश्चिम बंगाल, (6) बिहार, (7) मणिपुर, (8) मेघालय, (९) अण्डमान और निकोबार द्वीप, (10) अरुणाचलप्रदेश ।

(ख) उत्तरी क्षेत्र—(1) उत्तरप्रदेश, (2) जम्मू-कश्मीर, (3) पंजाब, (4) राजस्थान, (5) हिमाचलप्रदेश, (6) हरियाणा, (7) चण्डीगढ़, (8) दिल्ली ।

(ग) दक्षिणी क्षेत्र—(1) आंध्रप्रदेश, (2) कर्नाटक, (3) केरल, (4) तमिलनाडु, (5) मिनिकाय, (6) पांडिचेरी ।

(च) पश्चिमी क्षेत्र (1) गुजरात, (2) मध्य प्रदेश, (3) महाराष्ट्र, (4) गोवा-दमन-दीव, (5) दादर नगर हवेली ।

3. संघ राज्य क्षेत्र मिजोरम का अलग से वर्णन नही किया गया, क्योंकि 1971 की जन-गणना के समय यह असम राज्य का एक जिला था ।

4. इस विवरण में सिक्किम शामिल नहीं है, क्योंकि यह 1975 मे भारतीय संघ का बाइसवां राज्य बना ।

परिशिष्ट XVI

विवरण I

संघ लोक सेवा आयोग द्वारा भारतीय प्रशासन सेवा में भर्ती के लिए संचालित परीक्षाओं में निबंध और साधारण ज्ञान के पत्रों के लिए संविधान की आठवीं अनुसूची में दर्ज भाषाओं को विकल्प माध्यम के रूप में चुनने वाले प्रत्याशियों की संख्या

विषय	निबंध				साधारण ज्ञान			
परीक्षा का वर्ष	1969	1970	1971	1972	1969	1970	1971	1972
परीक्षार्थियों की संख्या	6507	6724	7619	8424	6396	6635	7514	8424
माध्यम एवं प्रत्याशी								
1 असमिया	8	6	4	8	3	3	4	5
2. उड़िया	18	12	15	16	15	8	6	9
3 उर्दू	22	19	19	16	10	8	12	9
4 कन्नड़	11	3	10	9	9	2	8	6
5 कश्मीरी	—	1	—	2	—	—	—	—
6. गुजराती	17	23	28	34	17	20	27	33
7 तमिल	30	29	27	47	24	24	17	30
8 तेलुगु	27	14	10	20	20	9	6	17
9 पंजाबी	35	40	57	57	26	24	30	21
10 बंगला	106	84	91	90	68	46	54	46
11 मराठी	30	27	30	23	28	17	21	18
12. मलयालम	25	17	18	16	21	12	12	10
13 संस्कृत	—	1	—	1	—	1	—	1
14 सिंधी (देवनागरी लिपि)	1	—	—	—	—	—	—	—
सिंधी (अरबी लिपि)	—	1	2	2	1	1	2	1
15 हिंदी	877	791	932	1148	630	458	539	648
कुल	1207	1068	1243	1489	872	633	738	854
परीक्षा में बैठने वाले कुल विद्यार्थियों का भाग (प्रतिशत में) जिन्होंने भारतीय भाषाओं को माध्यम चुना।	18 55	15 88	16 31	17 68	13 63	9 54	9 82	10 14

परिशिष्ट XVI
विवरण II

विषय	निबंध						सामान्य ज्ञान					
परीक्षा का वर्ष	1973	1974	1975	1976	1977	1978	1973	1974	1975	1976	1977	1978
परीक्षार्थियों की कुल संख्या	12610	14024	15492	17627	17359	18857	12412	13847	15238	17392	17242	14734
माध्यम												
असमिया	04	02	06	05	09	12	02	01	05	03	—	—
बंगाली	130	167	129	130	132	127	51	77	73	71		
गुजराती	58	27	38	55	60	86	43	26	35	54		
हिंदी	1556	1917	2098	2529	2891	3228	746	896	1046	1219		
कन्नड़	11	15	08	21	21	42	07	08	05	15		
कश्मीरी	04	02	01	—	01	01	01	01	—	—		
मलयालम	25	38	26	36	27	28	17	21	14	18		
मराठी	34	50	47	61	67	98	24	38	33	43		
उड़िया	17	25	33	41	28	39	08	12	16	26		
पंजाबी	96	113	152	169	223	297	46	45	67	59		
संस्कृत	—	—	01	01	01	04	—	—	01	—		
सिंधी (देवनागरी)	01	—	—	01	02	01	—	—	02	01		
सिंधी (अरेबिक)	04	01	02	—	01	05	04	—	—	—		

विषय	निबंध						सामान्य ज्ञान			
तमिल	56	76	115	133	161	205	40	50	83	83
तेलुगू	29	41	44	33	55	104	19	27	31	15
उर्दू	41	32	46	38	56	80	11	17	26	21
कुल	2066	2506	2746	3253	3735	4357	1019	1219	1437	1628
परीक्षा मे शामिल कुल उम्मीदवारो के मुकाबले ऐसे उम्मीदवारो का प्रतिशत जिन्होने वैकल्पिक भाषा का उपयोग किया										
	16 39	17 87	17 72	18 45	21 52	23 11	8 21	8 80	9 43	9 36

चूंकि वर्ष 1977 व 1978 मे भारतीय प्रशासनिक सेवा की सामान्य ज्ञान की परीक्षा वस्तुनिष्ठ प्रश्नो की थी, अत भाषा माध्यम का प्रश्न नही उठता।

स्रोत : तेइसवीं, सताइसवीं, उ नीसवीं रिपोर्ट, संघ लोक सेवा आयोग, पृष्ठ 141, 94, 84 क्रमश ।

परिशिष्ट XVII
विवरण I
विभिन्न भाषाओं के समाचारपत्रों के प्रकाशन/औसत बिक्री में विकास

क्रम	भाषा	समाचारपत्रों की संख्या				औसत बिक्री (लाख में)				औसत बिक्री में वार्षिक वृद्धि	
		1952	1958	1965	1973	1952	1958	1965	1973	1952-73	1965-73
1.	अंग्रेजी	1256	1282	1730	1262	22.39	31.58	59.01	73.42	10.85	8.09
2.	हिंदी	1556	1759	1685	1596	16.51	27.41	45.71	68.78	15.02	17.44
3.	असमिया	16	16	26	12	0.15	0.21	1.27	0.96	26.66	26.66
4.	उड़िया	63	84	68	56	0.97	0 99	1.77	1.91	4.12	2.06
5.	उर्दू	728	532	708	519	7.08	7.37	13.61	14.71	5.08	1.83
6.	कन्नड	153	86	247	187	2.00	3.56	7.00	9.29	12.00	14.00
7.	कश्मीरी	—	—	—	—	—	—	—	—	—	—
8.	गुजराती	411	440	477	337	5.49	8.62	15.22	19.65	12.20	10.01
9.	तमिल	145	207	405	283	5.67	12.03	29.02	35.84	25.39	14.99
10.	तेलुगु	164	218	279	225	5.24	5.66	8.91	10.55	4.77	3.81
11.	पंजाबी	128	128	189	133	1.65	2.72	3.15	4.89	9 09	4.84
12.	बंगला	—	321	491	354	6.40	5.88	12.84	14.59	6.09	3.28
13.	मराठी	283	337	445	424	4.35	7.88	15.35	19.92	56.32	13.10
14.	मलयालम	112	112	248	234	4.74	7.40	17.50	26.34	21.72	23.20
15.	संस्कृत	—	—	25	12	—	—	0.20	0.12	—	—
16.	सिंधी	—	—	—	36	—	—	—	1.04	—	—

क्रम	भाषा	समाचारपत्रों की संख्या				औसत बिक्री (लाख मे)				औसत बिक्री मे वार्षिक वृद्धि	
		1952	1958	1965	1973	1952	1958	1965	1973	1952 73	1965-73
17	द्विभाषी	—	—	581	473	—	—	7 45	8 49	—	—
18	बहुभाषी	—	—	145	100	-	—	2 01	1 49	—	—
19	अ य	37	71	157	73	0 40	0 28	2 11	1 02	7 5	32 5
	कुल (अभिकलित)	5196	5352	7906	6316	80 52	128 18	242 13	313 01	13 71	11 00

1 1952 और 1958 के आकड़े अवस्फीत हैं अत अंत में दिया गया मिलान सही नहीं है
2 समाचारपत्रों मे दैनिक, साप्ताहिक, पाक्षिक और द्वै-साप्ताहिक पत्र शामिल हैं
3 रूपांतरित प्रेस इन इण्डिया समाचारपत्रों के रजिस्ट्रार द्वारा प्रकाशित वार्षिक रिपोर्ट

परिशिष्ट XVII

विवरण II

प्रकाशित पुस्तकों का विषय अनुसार विवरण

भारतीय भाषाओं में विश्वविद्यालय-स्तर की साहित्य रचना का केंद्रीय प्रायोजित प्रोग्राम

क्र. सं.	विज्ञान-संबंधी विषय	भाषाएं											
		तेलुगु	असमिया	गुजराती	कन्नड़	मलयालम	मराठी	उड़िया	पंजाबी	तमिल	बंगला	हिंदी	कुल
1.	कृषि विज्ञान	—	—	80	62	76	2	7	—	1	—	59	289
2	नृ-विज्ञान	6	7	—	—	—	—	4	—	—	—	10	27
3.	आयुर्विज्ञान	—	—	15	6	—	7	—	—	—	—	—	28
4.	जीव विज्ञान	2	—	—	5	—	—	—	—	—	—	—	7
5.	वनस्पति विज्ञान	33	18	15	14	22	1	—	1	42	—	56	209
6	रसायन विज्ञान एवं जीव रसायन	21	31	37	26	27	7	3	2	61	1	73	289
7.	इंजीनियरी	—	—	31	7	74	23	—	—	35	—	27	197
8.	साधारण विज्ञान	—	—	—	7	8	—	—	—	—	—	1	16
9	भू विज्ञान	22	11	4	10	5	5	4	—	8	5	15	89
10.	गृह विज्ञान	24	6	2	1	4	3	5	—	3	—	9	57
11.	गणित	36	40	27	26	31	7	14	5	64	2	45	297

क्र सं	विज्ञान संबंधी विषय	भाषाएं											
		तेलुगु	असमिया	गुजराती	कन्नड	मलयालम	मराठी	उड़िया	पंजाबी	तमिल	बंगला	हिंदी	कुल
12	चिकित्सा एवं फार्मेसी	—	—	29	11	12	3	—	—	5	—	29	89
13	भौतिक विज्ञान	29	28	27	37	51	3	24	9	57	6	79	350
14	शरीर क्रिया विज्ञान	—	—	—	—	—	—	—	1	—	1	—	2
15	सांख्यिकी	15	11	7	—	—	—	—	—	18	5	—	56
16	पशु चिकित्सा विज्ञान	—	—	—	—	—	—	—	—	—	5	2	7
17	जंतु विज्ञान	29	9	9	7	21	1	3	1	62	—	27	169
	कुल	217	161	283	219	331	62	71	19	356	25	432	2176

प्रकाशित पुस्तकों का विषय-अनुसार विवरण क्रमशः

क्रम सं.	मानविकी एवं सामाजिक विज्ञान संबंधी विषय	भाषाएं तेलुगु	असमिया	गुजराती	कन्नड	मलयालम	मराठी	उड़िया	पंजाबी	तमिल	बंगला	हिंदी	कुल
1.	वास्तुकला	—	—	—	—	2	—	—	—	—	—	—	—
2.	कला एवं संस्कृति	2	—	12	6	—	—	—	1	—	—	—	21
3.	प्राचीन इतिहास	—	—	—	—	—	11	—	—	—	—	15	26
4.	वाणिज्य	49	62	14	17	19	17	9	1	41	—	14	243
5.	अर्थशास्त्र	34	22	45	28	37	12	7	3	63	—	50	301
6.	शिक्षा	—	14	21	25	14	4	16	7	6	—	53	160
7.	भूगोल	18	15	10	15	4	1	5	3	12	1	20	104
8.	इतिहास और पुरातत्व	21	19	35	25	32	8	16	1	69	1	54	281
9	पत्रकारिता एवं मुद्रण	—	—	2	—	—	—	—	1	—	—	6	9
10	विधि	—	—	15	4	—	1	—	—	—	—	4	24
11.	पुस्तकालय विज्ञान	—	—	—	2	—	6	—	1	—	—	7	16
12.	भाषा विज्ञान	—	—	36	2	—	—	2	4	—	—	77	121
13.	साहित्य एवं साहित्य समालोचना	—	—	3	32	13	—	1	—	—	—	8	57
14	सैन्य विज्ञान	—	—	—	—	3	—	—	—	—	—	7	10
15.	दर्शन और तर्कशास्त्र	16	23	28	14	8	5	16	1	3	8	63	185
16.	राजनीति शास्त्र एवं लोक प्रशासन	20	28	15	21	15	11	5	9	36	7	66	233

क्र स	मानविकी एवं सामाजिक विज्ञान संबंधी विषय	भाषाएं											
		तेलुगु	असमिया	गुजराती	कन्नड़	मलयालम	मराठी	उड़िया	पंजाबी	तमिल	बंगला	हिंदी	कुल
17	मनोविज्ञान	9	—	20	14	3	3	4	—	10	—	14	76
18	संस्कृत	9	—	—	19	—	—	—	—	—	—	—	28
19	संगीत	—	—	—	17	1	7	—	-	—	-	3	28
20	सामाजिक कार्य	—	—	—	—	9	—	—	—	—	—	33	42
21	समाज विज्ञान	12	7	6	20	—	3	2	—	—	-	—	50
22	शब्द संग्रह	—	—	—	—	—	—	16	10	—	—	—	26
23	विविध		16	6	36	43	5	55	4	33	8	103	241
	(क) मानविकी विषयों का मिलान	190	206	268	297	20›	94	154	46	273	25	597	2352
	(ख) विज्ञान सम्बन्धी विषयों का मिलान	217	161	283	219	331	62	71	19	356	25	432	2176
	कुल मिलान	407	367	551	516	533	156	225	65	629	50	1029	4528

प्रंगीकरण क्षेत्रीय भाषाओं को शिक्षा का माध्यम बनाने संबंधी कार्यकारी ग्रुप की रिपोर्ट, विश्वविद्यालय अनुदान आयोग, नई दिल्ली, 1978

परिशिष्ट XVIII

विवरण I

फ़िल्म सेंसर परिषद् द्वारा प्रमाणित विभिन्न भाषाओं में कथा-चित्रों (फ़ीचर फ़िल्मों) का उत्पादन (1947-1974)

क्रम सं.	भाषा	1947	50	51	52	53	54	55	56	57	58	59	60	61	62	63	64	65	66	67	68	69	70	71	72	73	74	प्रत्येक क्षेत्रीय भाषा के परिसर में सिनेमा-घरों की संख्या
1.	हिंदी*	186	115	100	102	97	118	126	123	115	116	121	120	109	94	93	113	107	108	85	74	100	104	121	134	141	135	—
2.	बंगला	38	42	38	43	50	47	50	54	55	45	38	38	36	37	39	34	30	30	25	29	29	33	30	25	35	36	673
3.	गुजराती	11	13	6	2	—	—	3	3	—	—	—	2	7	4	6	3	5	2	3	3	6	5	3	4	5	7	420
4.	मराठी	6	19	16	17	21	18	12	13	14	16	10	15	15	21	16	18	14	12	20	17	16	19	23	13	14	11	891
5	तमिल	29	19	26	32	42	38	46	51	46	61	80	63	49	59	56	44	56	60	65	68	70	76	73	77	66	69	1290
6.	तेलुगु	6	18	20	25	29	27	24	27	36	36	46	54	55	58	46	41	50	41	61	77	59	71	85	73	74	69	1122
7.	मलयालम	—	6	7	11	7	8	7	5	7	4	3	6	11	15	13	19	31	31	39	36	31	43	52	47	60	54	670
8.	कन्नड़	5	1	2	1	7	10	15	14	14	11	5	12	12	16	22	18	21	21	24	36	44	38	33	20	32	30	690
9.	अन्य भाषाएं**	—	8	4	—	7	8	2	5	8	6	9	14	9	3	14	14	12	11	11	10	12	7	13	21	21	14	—
	कुल	281	241	219	233	260	274	285	295	295	295	312	324	303	307	305	304	326	316	333	350	367	396	433	414	448	435	

(क) * इसमें उर्दू, हिंदुस्तानी, राजस्थानी, हरियाणवी, डोगरी, भोजपुरी, मैथिली, मागधी और छत्तीसगढ़ी के कथा चित्र भी शामिल हैं।

(ख)** 1974 में इसके अंतर्गत निम्न भाषाओं के चित्र शामिल हैं।

भाषा	कथा-चित्रों की संख्या	भाषा के क्षेत्र में सिनेमाघरों की संख्या
(i) पंजाबी	4	119
(ii) असमिया	3	190
(iii) मणिपुर	2	—
(iv) तुलु	2	—
(v) उड़िया	1	110
(vi) अंग्रेजी	1	—
(vii) हरियाणवी	2	—

(ग) अभीकार केंद्रीय फिल्म सेंसर बोर्ड, बम्बई।

परिशिष्ट XVIII
विवरण II

फिल्म सेंसर परिषद् द्वारा प्रमाणित भारतीय चलचित्रों का सन् 1974 से 1980 तक भाषावार विभाजन

क्र.सं. भाषा	1974	1975	1976	1977	1978	1979	1980
1. हिंदी उर्दू	135	120	106	134	122	114	145
2. आसामी	3	6	5	7	6	10	7
3. वक्गा	—	—	—	—	—	—	1
4. बंगाली	36	35	32	31	37	37	37
5. भोजपुरी	—	—	—	2	1	2	3
6. इंगलिश	1	1	2	3	2	1	—
7. गुजराती	7	12	29	30	32	38	34
8. कन्नड़	30	39	45	49	54	59	68
9. कोंकणी	—	1	1	1	1	—	2
10. मलयालम	54	77	84	91	123	131	99
11. मणिपुरी	2	—	1	—	—	3	—
12. मराठी	11	17	10	19	15	19	28
13. उड़िया	1	3	6	11	15	11	15
14 पंजाबी	4	5	10	12	8	15	6
15 तमिल	79	71	81	66	105	140	145
16. तेलुगु	69	88	93	99	94	133	152
17 तुलु	2	—	2	2	3	—	—
18. हरियाणवी	1	—	—	—	—	—	—
19 नेपाली	—	—	—	—	1	1	—
योग :	435	475	507	557	619	714	742

परिशिष्ट XIX

केंद्रीय सरकार द्वारा हिंदी भाषा में पत्र-व्यवहार

क्रम सं	वर्ष	राज्यों से हिंदी में प्राप्त पत्र	हिंदी में भेजे गये उत्तर	कालम 4 के आंकड़े कालम (3) के आंकड़ों का प्रतिशत	जनता से हिंदी में प्राप्त पत्र	हिंदी में भेजे गये उत्तर	कालम (7) के आंकड़े कालम (6) के आंकड़ों का प्रतिशत
(1)	(2)	(3)	(4)	(5)	(6)		(7)
1	1968-69	26487	08611	32 5	104287	35706	34 2
2	1969-70	40177	16283	40 5	184258	86151	46 7
3	1970 71	42791	16751	39 1	172489	66400	38 5
4	1971-72	38114	18198	47 7	183494	48765	26 5
5	1972-73	53965	20819	38 5	207297	50495	24 3
6	1973-74	60945	23201	38 0	15786[illegible]	385[illegible]0	24 2
7	1974-75	58001	27241	46 9	154928	40402	26 0

स्रोत : राजभाषा हिंदी के बढ़ते चरण (1965-75), गृह मंत्रालय, पृष्ठ 20

परिशिष्ट XX

विवरण I

विश्वविद्यालयों में भारतीय भाषाओं का शिक्षा के माध्यम के रूप में इस्तेमाल

क्रम संख्या	भाषाओं के नाम (संविधान की आठवीं अनुसूची की भाषाए)	विश्वविद्यालयों की संख्या	
		पूर्व-स्नातक स्तर	स्नातकोत्तर स्तर
1.	असमिया	—	—
2.	उड़िया	1	—
3.	उर्दू	6	—
4.	कन्नड़	3	—
5.	कश्मीरी	—	—
6.	गुजराती	6	5
7.	तमिल	2	—
8.	तेलुगु	3	—
9.	पंजाबी	3	1
10.	बंगला	4	3
11.	मराठी	6	2
12.	मलयालम	—	—
13.	संस्कृत	3	3
14	सिंधी	—	—
15.	हिंदी	45	32

1. अगीकार · सघ लोक सेवा आयोग की तेइसवीं रिपोर्ट, अप्रैल 1, 1972 से 31 मार्च, 1973 तक, पृष्ठ 134-138

2. ऊपर की सूची में वे विश्वविद्यालय शामिल नहीं हैं जहां भारतीय भाषाए केवल पूर्व-विश्वविद्यालय अथवा इण्टर कोर्स के पहले वर्ष तक शिक्षा का माध्यम हैं।

परिशिष्ट XX

विवरण II

क्षेत्रीय भाषाओं का शिक्षा के माध्यम के लिए इस्तेमाल

क्रम	कोर्स अथवा पाठ्यक्रम का नाम आर्ट्स/साइंस/कामर्स/कला/विज्ञान/वाणिज्य	संक्षिप्त नाम	कालम (3) में दर्ज कोर्सों को क्षेत्रीय भाषाओं के माध्यम से पढ़ाने वाले विश्वविद्यालयों की संख्या
(1)	(2)	(3)	(4)
1	बैचलर ऑफ आर्ट्स/बैचलर ऑफ आर्ट्स (ऑनर्स) कला स्नातक/कला स्नातक (ऑनर्स)	बी ए/बी ए (ऑनर्स)	66
2	बैचलर ऑफ साइंस/बैचलर ऑफ साइंस (ऑनर्स) विज्ञान स्नातक/विज्ञान स्नातक (ऑनर्स)	बी एस-सी बी एस-सी (ऑनर्स)	51
3	बैचलर ऑफ कामर्स/बैचलर ऑफ कामर्स (ऑनर्स) वाणिज्य स्नातक/वाणिज्य स्नातक (ऑनर्स)	बी काम/बी काम (ऑनर्स)	55
4	मास्टर ऑफ आर्ट्स/कला निष्णात	एम ए	41
5	मास्टर ऑफ साइंस/विज्ञान निष्णात्	एम एस-सी	20
6	मास्टर ऑफ कामर्स/वाणिज्य निष्णात्	एम काम	31
7	बैचलर ऑफ साइंस (कृषि)/विज्ञान (कृषि) स्नातक	बी एस-सी (कृषि)	11
8	मास्टर ऑफ साइंस (कृषि)/विज्ञान (कृषि) निष्णात्	एम एस-सी (कृषि)	2

9.	पशु चिकित्सा विज्ञान स्नातक/ आयुर्वेदिक औषध तथा शल्य-चिकित्सा स्नातक/ यूनानी औषध तथा शल्य-चिकित्सा स्नातक/ शुद्ध आयुर्वेदिक औषध स्नातक	बी वी एस.सी. बी ए.एम.एस. बी.यू एम एस बी.एस.ए.एम.	13
10	बैचलर ऑफ फार्मेसी/भेपजिकी स्नातक	बी. फार्म.	1
11.	बैचलर ऑफ लायब्रेरी साइंस/ पुस्तकालय विज्ञान स्नातक	बी लायब. सा.	2
12.	व्यापार प्रबंध स्नातक	बी. बी. एम.	2
13.	ललित कलाएं स्नातक	बी. एफ. ए.	3
14	संगीत स्नातक	बी. म्यूजिक	7

1. अंगीकार : क्षेत्रीय भाषाओं को शिक्षा के माध्यम के लिए इस्तेमाल करने पर कार्यकारी ग्रुप की रिपोर्ट। विश्वविद्यालय अनुदान आयोग, नई दिल्ली, 1978-79.

2 विश्वविद्यालय अनुदान आयोग के पास उपलब्ध सूचना के अनुसार, 1 जुलाई, 1978 को 115 विश्वविद्यालयों में से 83 विश्वविद्यालय और संस्थान, जिन्हें विश्वविद्यालय का पद प्राप्त है, ऐसे थे, जिनमे विभिन्न स्तरों तक क्षेत्रीय भाषाओं का शिक्षा के माध्यम के तौर पर इस्तेमाल हो रहा था।

परिशिष्ट XXI

विवरण I

सन् 1968 69 से 1978 तक हिंदी अध्यापकों की नियुक्ति के लिए अहिंदी-भाषी राज्यों को दी गई आर्थिक सहायता की राशि
(लाख रुपयों में)

क्रम सं	राज्य अथवा संघ राज्य क्षेत्र का नाम	1968 69	69-70	70-71	71 72	72 73	73 74	74 75	75 76	76-77	77 78	78 79 (दिसंबर 78 तक)
1	आंध्रप्रदेश	40 55	49 00	56 22	82 27	102 00	86 43	9 00	27 00	40 00	65 00	20 00
2	असम	11 50-	7 00	7 00	9 45	21 00	18 00	10 00	15 00	20 00	26 00	35 00
3	उड़ीसा	10 00	7 00	8 95	18 24	25 00	21 00	12 00	28 00	50 00	32 00	50 00
4	कर्नाटक	12 61	15 00	20 00	20 00	30 00	24 00	9 00	21 60	13 00	23 00	10 00
5	केरल	—	13 00	13 00	12 50	35 00	25 00	3 00	33 00	106 75	68 00	70 00
6	गुजरात	5 00	4 00	4 00	4 00	12 00	11 00	1 60	6 00	—	19 76	—
7	तमिलनाडु	—	—	—	—	—	—	—	—	4 75	5 00	—
8	त्रिपुरा	—	—	—	—	—	—	2 00	—	—	—	—
9	नागालैंड	—	—	—	3 34	3 00	3 00	0 94	1 90	2 05	2 45	3 00

10. पश्चिम बंगाल	3.03	4.00	4.00	4.00	12.00	10.00	12.00	1.10	7.30	2.00	—
11. मणिपुर	—	—	—	—	3.00	3.00	3.00	1.00	4.58	3.00	6.00
12. महाराष्ट्र	0.71	1.00	0.90	1.19	2.00	2.00	3.00	5.00	—	—	—
13. मिज़ोरम	—	—	—	—	—	4.00	2.26	4 75	11.94	18.75	10.00
14. मेघालय	—	—	—	1.10	5.00	4 00	1.00	2.00	1.30	—	6.84
15. सिक्किम	—	—	—	—	—	—	—	—	—	—	4.20

परिशिष्ट XXI

विवरण II

सन् 1968 69 से 1978 तक हिंदी अध्यापको के प्रशिक्षण के लिए कॉलेज खोलने के लिए अहिंदी भाषी राज्यो को दी गयी आर्थिक सहायता की राशि

(लाख रुपयो मे)

क्रम स	राज्य अथवा संघ राज्य-क्षेत्र का नाम	1968 69	69 70	70-71	71 72	72 73	73 74	74-75	75 76	76-77	77-78	78-79 (दिस 1978 तक)
1	आंध्रप्रदेश	0 44	0 80	1 20	1 47	1 40	1 20	0 38	0 60	—	—	—
2	अरुणाचलप्रदेश	—	—	—	—	—	—	—	—	—	0 50	—
3	असम	—	—	1 60	1 10	1 10	1 00	—	—	2 00	1 50	—
4	उडीसा	0 38	1 35	1 00	1 78	1 80	1 50	—	—	—	—	—
5	कर्नाटक	1 03	0 75	2 00	2 60	2 50	2 00	—	—	—	—	—
6	केरल	2 99	4 00	3 40	3 80	4 00	3 59	1 32	0 18	0 60	2 00	—
7	गुजरात	—	—	—	—	—	—	—	—	—	—	—
8	तमिलनाडु	—	—	—	—	—	—	—	—	—	—	—
9	नागालैंड	0 25	0 30	0 35	0 40	0 35	0 30	—	—	0 31	—	—

10. पश्चिम बंगाल	0.53	0.75	0.75	0.85	0.85	0.75	—	—	—	—	0.24
11 मणिपुर	—	—	—	—	—	—	0.20	0.38	1.00	1.00	—
12. महाराष्ट्र	—	—	—	—	—	—	—	—	—	—	—
13. मिज़ोरम	—	—	—	—	—	—	—	0.57	1.33	3.30	2.00

अंगीकार : केंद्रीय शिक्षा, समाज कल्याण एवं सांस्कृतिक विभाग मंत्रालय, नई दिल्ली । सन् 1968-69 का तात्पर्य है, 1 अप्रैल, 1968 से लेकर 31 मार्च, 1969 तक की अवधि । 1969-70, 1970-71 आदि शेष वर्षों की अवधि भी इस प्रकार है ।

संदर्भ-ग्रंथ

(Bibliography)

इस ग्रंथ सूची में दी गयी प्राय: पुस्तकों के नाम पुस्तक के पूर्व अध्यायों में नागरी लिपि में दिये जा चुके हैं। यहाँ पर यह सूची अँग्रेजी भाषा और रोमन लिपि में दी गयी है क्योंकि इनमें से अधिकांश पुस्तकें मूल रूप में अँग्रेजी में हैं और अँग्रेजी जानने वाले पाठक ही इन पुस्तकों को पढ़ सकेंगे। अँग्रेजी भाषा में अनेक स्थानों पर हिज्जों और उच्चारण में भेद होने के कारण, सम्भव था कि इन पाठकगणों को नागरी लिपि में लिखी गयी अँग्रेजी पुस्तकों के नाम ठीक से समझने में कुछ कठिनाई होती।

1 Ahmad, Z A Comp
National Language for India A Symposium, Allahabad, Kitabistan, 1941

2 All India Language Conference, Modern India Rejects Hindi, Calcutta, 1958, 150 p

3 Andronov, M S
Dravidiskoe Yazyki
Moskva Nauka, 1965, 122 p 31 Tabl
(Akad Nauk SSSR)

4 Baranniko, P A
Problemy Hindi Kak Natsionalnoga Yazyka
Leningrad, Nauka, 1972, 186 p

5 Baziev, A T Isaev, MI
Yazyk i Natsia,
Moskva, Nauka, 1973, 246 p

6 Beloded, I.K.
Razvitie Yazykov Sozıalıstıcheskıkh Nateıy V USSSR Kiev, Naukiva Dumka, 1969, 305 p

7. Bhatnagar, Rajendra Mohan
Rashtra Bhash Aur Hindı
Agra, Vinod Pustak Mandir, 1961, 129 p

8 Bright, William.
Sociolinguistics : Proceedings of the University of Calı-fornia, Los Angeles/Socıolinguistics Conference, 1964. Ed by William Bright, Published under the auspicious of the Centre for research in languages and lınguistics, University of Californıa, Loas Angeles.
The Pauge-Paris, Mounton, 1966, 324 p.

9. Census of India, 1971
Language Handbook on Mother Tongue in Census, Comp by R C. Nigam, New Delhi.
The Registrar General, India Ministry of Home Affairs, 1972, Census Centenary Monograph No. 10.

10 Chatterji, S.K.
Languages and Literatures of Modern India.
With a Foreward by C.P. Ramaswami Aiyar,
Calcutta, Bengal Publ., 1963.

11. Chatterji, S.K.
Languages and the Linguistıc Problem.
Oxford, Oxford University Press, 1943.

12. Chernyshov, V.A.
Dialekty i Literaturnyi Hindi.
Moskva, Nauka, 1969, 141 P.

13 Dasgupta, J.
Language Conflıct and Natıonal Development,
Berkeley, 1970.

14 Desheriev, Yu D.
Razvitie Mladopismennoykh Yazikov. Narodov SSSR
Moskva 1958.

15. Desherıev, Yu. D.
Socıolinguistics
Moskva, Nauka, 1977, 381 p.

16 Devanagari Lipi
New Delhi, Gandhi Smarak Nidhi

17 Diakov, A M
Natsionalnyi Vopros V Sovremennoi Indii
Moskva, Izd vost Lit, 1953 194 p

18 Durbin, M Micklin, M
Sociolinguistics Some Methodological Contributions from Linguistics — "Foundations of Language", Vol 4, No 3, 1968

19 Encyclopaedia Britannica, 1953

20 Encyclopaedia Britannica, 1953

21 Fishman, Joshua A
Language Problems of Developing Nations
Fishman, Jeshua A Ed/a o/New York/a o /Willey/ 1968/XV, 521 P

22 Gandhi, K L
Raj Bhasha — Samasya Aur Swarup (Research thesis Meerut University, U P 1976-77)

23 Gandhi M K
Reminiscences of Gandhi ji
Bombay, Vora & Co

24 Gankovski, Yu V
Leninskiee Printsipy, Reshenia Natsionalnogo Voprosa V/SSSR i Strany Azil i Afriki — Narody Azii i Afriki" No 6 Moskva, 1972

25 Grierson, G A
Languages of India, being a reprint of the Chapter on languages to the report on the Census of India, 1901 together with the Census statistics of languages, contributed by George Abraham Grierson, Calcutta, Superintendent of Govt Printing, 1903

26 Grierson, G A
Linguistic Survey of India, Delhi
Moti Lal Banarsi Das, 1967-68

27 Gujrat Government of Bureau of Economic & Statistics
Study of utilisation of educated persons
Ahmedabad, the Author, 1977

28. Gumpers, J. and Dasgupta J.
Language Communication and Control—In :
Language in Social Groups".
Princeton, 1971

29. Gumpers, John J.
Language in Social Groups
Stanford (Calif.), Stanford University Press, 1971, XIV, 350 p.

30. Gumpers, John J
Types of Linguistic Communitions. In : "Readings in the Sociology of Language", J.A Fishman (ed)
The Hauge—Paris, 1968.

31. Homar, A.J. (Editor)
Wit and Wisdom of Gandhi, Boston, Beacon Press, 1951.

32 Haugen, E.
Linguistics and Language Planning "Sociolinguistics"
The Hauge—Paris, 1966.

33. India, Committee of Parliament of Official Language, 1957.
Report. New Delhi, Ministry of Home Affairs, 1959.

34. India, Constituent Assembly.
Debates. New Delhi. Constituent Assembly, 1949. Vol. 9.

35. India, Gazettee of India. Extraordinary,
January 8, 1968, New Delhi, Manager of Publication, 1968.

36 India, Indian National Congress.
Congress Bulletin, 1953 and 1954.

37 India, Linguistic Provinces Commission.
Report, New Delhi, Constituent Assembly of India. 1958

38. India, Lok Sabha
Debates. New Delhi, Lok Sabha Sectt.,
1959, 1963, 1965 and 1967.

39. India, Ministry of Education, Central Hindi Directorate,
Parivardhit Devnagari, Delhi. Manager of Publications, 1966.

40 India, Ministry of Home Affairs,
Annual Assessment Report 1968-70
Delhi, Ministry of Home Affairs, 1970

41 India, Official Language Commission
Report 1955-56 New Delhi, Ministry of Home Affairs, 1967, 495 p

42 India, Rajya Sabha
Proceedings Delhi, Rajya Sabha Secretariat 1976

43 India, Registrar General of Census Commission
Pocket Book of Population Statistics Census Centenary 1972, Delhi, the Author, 1972

44 India, Registrar of Newspapers
Press in India 1974 Eighteenth Report of the Registrar of Newspapers for India under the Press & Registration of Book Act Part I Delhi, Controller of Publications, 1975

45 Kodesia K
The Problems of Linguistic States in India Delhi, 1969

46 Labov, William
Sociolinguistic Patterns
Philadelphia, University of Pennysylvania Press/Cop 1972 XVIII, 344 p

47 Labov, W
The Study of Language in its Social Context—
In "Studium Generale', 23 1970

48 Language and Society in India ed by A Poddar
Simla, Indian Institute of Advanced Studies

49 Languages of India A Kaleidoscopic Survey

50 Macnammara, J
Problems of Bi-lingualism "Journal of Social Issues', V 23 (2), 1967

51 Madan Gopal
This Hindi and Dev Nagri
Delhi, Matropolitan Book Co Ltd, 1953, 328 p

52 Maharashtra, Govt of Finance Deptt Manpower Wing
Pattern of Utilisation of educated persons Bombay, the Author, 1966

53 Majumdar, A K
Problem of Hindi A Study Bombay, Bharatiya Vidya Bhawan, 1963, 165 p

54. Majumdar, R.C. Raychaudhuri, H C. & Datt, Kalikinkar
Advanced History of India, 2nd Ed
London, Mecmillan, 1950. 1060 p

55. Magbul Ahmad, S.
Languages and Society in India;
Proceedings of A Seminar, Simla, Indian Institute of Advanced Study, 1969, 601 p

56. Meadows, A.J.
Communication in Sciences

57. Misra, B B.
Indian Middle Classes : Their Growth in Modern Times
London, OUP. 1961, 438 p.

58. Mohan Kumaramangalam, S.
India's Language Crisis; an introductory study.
Madras, New Century Book House, 1965, vii, 122 p.

59. Nagari as World Script, Lipi-Seminar
New Delhi, Gandhi Smarak Nidhi.

60. Nikolski, LLB
Prognasirovaniao i Planirovanie Yazykovogo Razvitiva,
Moskova, 1970

61. Nikolski, L.B
Sinkhronnaya Soziolingvistika, Nauka, 1976, 166 p

62. Nilakanta Sastri, K A.
History of South India, London,
Oxford University Press, 1965, XII, 486 p

63. Prasad, B.N.
'Hindi' in Languages of India, A Kaleidoscopic Survey
Madras, Our India Distributors and Publications.

64. Rahul Sankratayan.
Akbar.

65. Rayfield, J.R.
The Languages of a Billingual Community
The Hague—Paris, Mouton, 1970, 118 p.

66. Regachev, P.M. Sverdlin, M.A.
Natsia—Marod—Chelovechestvo.
Moskva. Politizdat, 1967, 189 p.

67 Rubın, Joan
Can Language be planned Socıolınguıstıc Theory and Practıce for Developıng Natıons Ed by Joan Rubın and B H Jernudd Honolulu, The Unıv Press of Hawıı/cop 1971, xıv, 343 p

68 Sakhrov, I B
Kratkıı Ocherk Ethıcheskoı Geografiı Indıı—Vyp XIV Strany ı Narody Vostoka, Vol xıv, Moskva, 1972

69 Sbornık,
Indııskoo Yazkoznanıe,
Moscow, Nauka, 1978

70 Sbornık,
Novoe V Lıngvıstıke Vypusk 6
Moskva, Izd Inostr Lıt, 1972, 534 p

71 Sbornık, Novoe V Lıngvıstıke Vypusk 7
Moskva, Izd Inostr Lıt, 1975 485 p

72 Sbornık,
Problemy Izuchemıya Yazykovoı Sıtuazıı ı Yazykovoı Vopros V Stranakh Azıı ı Severnoı Afrıkı
Moskva, Nauka, 1970, 233 p

73 Sbornık,
Yazyk ı Obschestvo
Saratov, Izd Saratov Unı -1967, 284 p, 1970 228, p

74 Sbornık
"Yazykovaya Polıtıka V Afro-Azıatakıkh stranakh"
Moskva, Nauka, 1977, 318 p

75 Sharma, Sarojını
Gaveshna Agra, Kendrıya Hındı Sansthan, 1972

76 Shıva Rao, B
Framıng the Indıa's Constıtutıon A Study
New Delhı, Indıan Instıtute of Publıc Admınıstratıon 1968, 894 p

77 Shor, R O
Yazuk ı Obschestvo
Moskva, 1926

78. Spratt, P.
D. M. K. in Power. Bombay, Nachiketa, 1978, 164 p.

79. Tauli, V.
Introduction to a Theory of Language Planning. Uppasala, 1968, 227 p

80. Townsend, W. C.
They found a common language.
New York, Harper, 1972, 124 p

81. Trevelan, Humphrey.
Diplomatic Channels, London, Macmillan, 1973.

82. Winreich. U.
Languages in Contact. Findings and Problems.
New York, Publication of the Linguistic Circle New York No. I, 1953, 148 p.

83. Whiteley, W.H.
Language : Use and Social Change. Oxford,
Oxford Univ. Press. 1971.

84. Zhyrmunski, V.M.
Natsionalnyi Yzyk i Sozialnye Dialekty.
Leningrad, 1936.

85. Zograf, G.A.
Yazyki Indii, Pakistana, Tseilona i Nepala
Moskva, Izd, Vost. Ltd, 1960. 132 p.